प्रकाशक :
पूर्णचन्द्र जैन
मंत्री, अखिल भारत सर्व सेवा संघ,
राजघाट, वाराणसी

•

पहली बार : २
अगस्त १९६२
मूल्य : एक रुपया पचास नये पैसे

•

मुद्रक :
बलदेवदास,
संसार प्रेस,
काशीपुरा, वाराणसी

केरल-पदयात्रा

नि वे द न

पूज्य विनोबाजी की भूदान-पदयात्रा के प्रवचनों में से महत्त्वपूर्ण प्रवचन तथा कुछ प्रवचनों के महत्त्वपूर्ण अंश चुनकर 'भूदान-गंगा' रूपी संकलन तैयार किये गये हैं। संकलन के काम में पूज्य विनोबाजी का मार्गदर्शन प्राप्त हुआ है। पोचमपल्ली, १८-४-'५१ से भूदान-गंगा की धारा प्रवाहित हुई। देश के विभिन्न भागों में होती हुई यह गंगा सतत बह रही है।

'भूदान-गंगा' के छह खण्ड पहले प्रकाशित हो चुके हैं। पहले खण्ड में पोचमपल्ली से दिल्ली, उत्तर प्रदेश तथा बिहार का कुछ काल यानी सन् '५२ के अन्त तक का काल लिया गया है। दूसरे खण्ड में बिहार के शेष दो वर्षों का यानी सन् '५३ और '५४ का काल लिया गया है। तीसरे खण्ड में बंगाल और उत्कल की पदयात्रा का काल यानी जनवरी '५५ से सितम्बर '५५ तक का काल लिया गया है। चौथे खण्ड में उत्कल के बाद की आन्ध्र और तमिलनाड में कांचीपुरम्-सम्मेलन तक की यात्रा यानी अक्तूबर '५५ से ४ जून '५६ तक का काल लिया गया है। पाँचवें खण्ड में कांचीपुरम्-सम्मेलन के बाद की तमिलनाड-यात्रा का ता० ३१-१०-'५६ तक का काल लिया गया है। छठे खण्ड में कालडी-सम्मेलन से पहले तक का यानी '५५-'५७ तक का काल लिया गया है। इस सातवें खण्ड में कालडी-सम्मेलन के बाद की केरल-यात्रा तथा कर्नाटक प्रदेश के ४-५ पड़ावों की यानी ता० १२ अक्तूबर '५७ तक की यात्रा का काल लिया गया है। कालडी-सम्मेलन के समय पूज्य विनोबाजी के जो विविध भाषण हुए थे, वे सब कालडी-सम्मेलन रिपोर्ट पुस्तक में संकलित हैं।

संकलन के लिए अधिक-से अधिक सामग्री प्राप्त करने की चेष्टा की गयी है। फिर भी कुछ अंश अप्राप्य रहा।

भूदान-आरोहण का इतिहास, सर्वोदय-विचार के सभी पहलुओं का वर्णन तथा शंका-समाधान आदि दृष्टिकोण ध्यान में रखकर यह संकलन किया गया है। इसमें पुनरुक्तियाँ भी दीखेंगी, किन्तु रस-हानि न हो इस दृष्टि से उन्हें रहने दिया है। संकलन का आकार अधिक न बढ़ने पाये इस ओर भी ध्यान रखा पड़ा है। यद्यपि यह संकलन एक दृष्टि से पूर्ण माना जायगा, तथापि इसे परिपूर्ण बनाने के लिए जिज्ञासु पाठकों को कुछ अन्य भूदान-साहित्य का भी अध्ययन करना चाहिए। सर्व-सेवा-संघ की ओर से प्रकाशित १ कार्यकर्ता-पाथेय, २ साहित्यिकों से, ३ संपत्तिदान-यज्ञ, ४ शिक्षण-विचार, ५. ग्राम दान ६ मोहब्बत का पैगाम, ७. नगर-अभियान ८. प्रेरणा-प्रवाह, ९. कार्यकर्ता क्या करें १० स्त्री-शक्ति, ११ शान्ति-सेना आदि पुस्तकों को 'भूदान-गंगा' का पूरक माना जा सकता है।

भूदान-गंगा का आठवाँ खण्ड कर्नाटक की पदयात्रा के काल का होगा। वह प्रेस में है।

संकलन के कार्य में यद्यपि पू. विनोबाजी का सतत मार्गदर्शन प्राप्त हुआ है, फिर भी विचार-समुद्र से मौक्तिक चुनने का काम जिसे करना पड़ा वह इस कार्य के लिए सर्वथा अयोग्य थी। त्रुटियों के लिए क्षमा-याचना।

—निर्मला देशपांडे

अ नु क्र म

वैसी शास्त्र समाज शास्त्र या अर्थशास्त्र की नहीं है। उनमें देश, काल और परिस्थिति के अनुसार फर्क पड़ता है और वैसा फर्क करने को कम्युनिस्ट राजी हो जायें तब तो वे सर्वोदय के बहुत नजदीक आयेंगे।

सर्वोदय सबका हित चाहता है। दुःखी और गरीब लोगों की तरफ ज्यादा ध्यान देना चाहिए, यह सर्वोदय का नियम ही है। परंतु वैसा करने के लिए दूसरों को कोई तकलीफ देने की जरूरत नहीं है। एक के हित के लिए दूसरे के हित को धक्का पहुँचाने की भी कोई जरूरत नहीं है। सर्वोदय का बुनियादी सिद्धांत यह है कि एक के हित के विरोध में दूसरे का हित हो नहीं सकता। आज-कल 'क्लैश आफ इंटरेस्ट्स' (हित विरोध) की जो बात चलती है, वह गलत कल्पना है। लोग एक ही गाँव में रहते हैं, एक ही हवा लेते हैं, एक ही पानी पीते हैं, एक ही जमीन की फसल खाते हैं, अड़ोस पड़ोस में रहते हैं, तो किसी एक के दुःख से दूसरा कैसे सुख पा सकता है? एक को दुःख हुआ, तो दूसरे को दुःख होना लाजिमी है। गाँव में किसी एक आदमी को हैजा हुआ, तो दूसरे को उसकी छूत लगती है। किसी एक घर को आग लगी, तो सारा गाँव जल जाने की संभावना रहती है। इस तरह सब गाँव के सब लोग एक साथ रहते हैं, तो एक परिवार बनकर रह सकते हैं। उसीमें सबका भला है। इसलिए जब हम कम्युनिज्म के बारे में सोचते हैं, तो हमें समझना चाहिए कि हरएक देश में उसका रूप अलग अलग होगा।

साम्यवाद के साथ समझौता नहीं, सहयोग

प्रश्न : क्या कम्युनिज्म और सर्वोदय के बीच कोई समझौता या सहयोग हो सकेगा?

उत्तर : दोनों के बीच समझौता बिल्कुल नहीं हो सकेगा, लेकिन सहयोग जरूर हो सकेगा। सर्वोदय अपना विचार नहीं बदलेगा, क्योंकि वह किसी विचार की प्रतिक्रिया नहीं है, वह स्वयं एक स्वतंत्र विचार है। कम्युनिज्म बदलता रहेगा, क्योंकि वह प्रतिक्रियारूप है।

यूरोप में जो कैपिटलिस्ट सोसाइटी बनी, उसके प्रतिक्रियात्मक कम्युनिज्म बना। जो प्रतिक्रियात्मक विचार है, वह सम्यक् पूर्ण जीवन-विचार नहीं बन सकता। वह तो हवा के झोंके के अनुसार बदलता जायगा। आप देखते हैं कि यहाँ पर वैधानिक साम्यवाद शुरू हुआ है, जो कम्युनिज्म का एक विकास है। कम्युनिस्ट ही अपना समझौता करने को राजी होंगे, क्योंकि उनके पास सार्वभौम दृढ़ सिद्धान्त नहीं है। पूँजीवाद में जो दोष थे, उनकी प्रतिक्रिया उन्होंने बनायी। हिंदुस्तान की परिस्थिति यूरोप से बहुत भिन्न है। यहाँ धर्मभेद, जातिभेद मायाभेद आदि हैं। समाज कृषिप्रधान है बहुसंख्या कृषकों की है, मजदूरों की नहीं। यूरोप में उन्होंने सारा दारोमदार मजदूरों पर रखा था। वैसा यहाँ नहीं रख सकते। यहाँ मुख्य आधार *किसानों पर रखना होगा तथा किसान और मजदूरों* को एक मानना होगा। इसके अलावा हिंदुस्तान में जमीन का बड़ा मसला है। यहाँ और खासकर केरल में जमीन बहुत कम है और जनसंख्या ज्यादा है। यूरोप के समान यहाँ पूँजीवाद इतना विकसित नहीं हुआ है। उस हालत में कम्युनिज्म ही अपना समझौता करता जायगा। इसलिए सर्वोदय उसके साथ सहयोग करने को तैयार होगा। जितना वह अपना रूप बदलेगा और सर्वोदय के नजदीक आयेगा उतना सर्वोदय उसके साथ सहयोग के लिए तैयार होगा।

समझौते का अर्थ है, आप कुछ छोड़ो हम कुछ छोड़ते हैं। इस तरह यहाँ नहीं होगा। आप कुछ छोड़ो हम कुछ नहीं छोड़ेंगे तो फिर आपका और हमारा सहयोग होगा। इस तरह हमारी स्थिति कायम रहेगी और उनकी स्थिति बदलती रहेगी। इसलिए हमने कहा कि धीरे धीरे कम्युनिज्म की नदी सर्वोदय के समुद्र में मिल जायगी। दूसरी भी नदियाँ यहाँ आकर मिल जायँगी। समाजवाद, कम्युनिस्ट राज्य आदि भी आखिर अपने को समाप्त करके सर्वोदय में डूबेंगे।

हम साम्यवादियों को हजम करेंगे

प्रश्न : क्या अहिंसा पदयात्री आदि के काम में कम्युनिस्टों के साथ कोई समझौता या सहयोग हो सकेगा?

समर्थन देते हैं। अब वे उस पर सोचने लगे हैं। तो क्या वे अपनी योजना में फर्क नहीं करेंगे ? फर्क इसलिए करेंगे कि लोक मानस बदलने लगा है। ग्रामदान प्राप्त हो रहे हैं। बहुत से लोगों का कहना है कि सरकार पर असर डालने के लिए पार्लियामेंट में जाकर बैठ होना पड़ता है। हम ऐसा नहीं समझते। हमारा मानना है कि जनता में जाकर कार्य करेंगे तो पार्लियामेण्ट पर असर होगा। पार्लियामेंट पर प्रभाव डालने का साधन वहाँ जाकर आवाज उठाना ही नहीं है। वह एक छोटा उपाय है। बड़ा उपाय यह है कि देश में जन आन्दोलन खड़ा करके जन शक्ति पैदा की जाय। फिर उसका असर सरकार पर पड़ता है। इसलिए सर्वोदय आन्दोलन कानून में फर्क लाने की ताकत रखता है।

प्रश्न : क्या कानून की व्यवस्था बदले बिना समाज परिवर्तन किया जायगा ?

उत्तर : लोगों का दिमाग ऐसा उल्टा सोचता है। उन्हें लगता है कि कानून बदलेगा तब समाज बदलेगा—कानून में जन-समाज की रचना बदलने की ताकत है। आप ही देखिये कि आज तक कितने राजा महाराजा हुए। उनकी कितनी सत्तायें चलीं। उस-उस जमाने में उन्होंने कानून भी बनाये। पर उन कानूनों का क्या आज कोई असर है ? जनता का काम अपने विचार से चल रहा है। आप अपने ही जीवन में देखिये कि किन किन कानूनों से आपका जीवन बना है। क्या मातायें अपने बच्चों को किसी कानून के आधार से दूध पिलाती हैं ? दूध न पिलाने पर सजा होगी और पिलाने पर पद्मविभूषण जैसा कोई इनाम मिलेगा ? किस सरकार के कानून के कारण हिंदुस्तान के बहुत से लोग बिना स्नान किये खाना नहीं खाते ? जीवन की कितनी मुख्य चीजें कानून से बनी हैं ? बहुत सारे लोग चोरी नहीं करते तो क्या कानून के कारण नहीं करते ? यह सही है कि चोरी करने से सजा मिलती है पर लोग चोरी नहीं करते इसका कारण यह है कि लोगों के हृदय में धर्म भावना पैठी हुई है। वे समझते हैं कि चोरी करना उचित नहीं है।

साम्यवादी सोचते हैं, हम करते हैं

प्रश्न : केरल में साम्यवादी शासन है। वे भी जमीन का प्रश्न हल करना चाहते हैं और आप भी। तो दोनों की योजना में क्या फर्क है?

उत्तर : फर्क इतना ही है कि वे लोग सोच रहे हैं और बाबा कर रहा है। सोचने में और काम करने में जो फर्क है, वही इन दोनों योजनाओं में फर्क है।

हम जब उड़ीसा में घूमते थे, तब आन्ध्र की कम्युनिस्ट पार्टी ने घोषित किया था कि हमारी सरकार बनेगी, तो हम २० एकड़ तरी जमीन का सीलिंग करेंगे। पहाड़ खोदकर चूहा निकाला! अगर गोदावरी-कृष्णा के किनारे २० एकड़ तरी जमीन का सीलिंग वे बनायेंगे, तो भूमिहीनों को कुछ भी जमीन नहीं मिलेगी। वहाँ पर कम्युनिस्टों ने अपनी असलियत खो दी। उन्हें कहना चाहिए था कि हमारे हाथ में सत्ता आयेगी, तो हम जमीन की मालकियत मिटा देंगे। लेकिन वैसा वे नहीं कर सकते थे। क्योंकि वे अपने को 'व्यवहारवादी' बताते थे और बाबा को आदर्शवादी समझते थे। इसलिए वे सीलिंग के विचार में फँस गये। हम उनसे कहते हैं कि सीलिंग का विचार क्या करते हो, राशन कर दो। सबको काम मिलना चाहिए, इसलिए सबको जमीन मिलनी चाहिए। किसीको तिगुना, चौगुना क्यों मिले? पेटभर अन्न मिले, बस है। परन्तु वे लोग कहते हैं कि जितना पेटभर अन्न हो सकता है, उससे दुगुना, चौगुना खाने का अधिकार देंगे। मैं आपको योगशास्त्र की बात बता रहा हूँ। वह कहता है कि आधा पेट अन्न से भरना चाहिए, चौथाई पेट पानी से भरना चाहिए, चौथाई पेट हवा के लिए खाली रखना चाहिए। लेकिन वे लोग कहते हैं कि आर्थिक स्वत्व से तिगुनी जमीन रखने का अधिकार है। सर्वोदय कहता है कि जमीन सबको मिलनी चाहिए।

चालकुडी (केरल)
१२-९-५

इन्सान इन्सान से डरता है।

इस समय दुनिया जितनी भयभीत है, उतनी पहले कभी नहीं थी। छोटे देश तो हैं ही बड़े बड़े देश भी भयभीत हैं। यह भी कहा जा सकता है कि इस समय भय की सीमा हो चुकी है। भयानक शस्त्रास्त्रों का शोध हो रहा है प्रयोग हो रहे हैं। यह सब किसके खिलाफ? क्या जंगल के जानवरों का डर है? वे तो बेचारे कहाँ छिपे हैं पता नहीं। एक जमाना था जब जंगल के बहुत से जानवर दुनिया में घूमते थे परन्तु मनुष्य ने सारे जंगल साफ कर दिये हैं। परिणाम यह हुआ कि जंगल के प्राणी छिप गये। वे मनुष्य से डरते हैं। सौराष्ट्र के गिरनार के जंगल में ४-५ सिंह होंगे। मनुष्य चाहे तो सिंह की जाति ही दुनिया से नष्ट कर सकता है। परन्तु इसमें उल्टे मनुष्य यह कोशिश कर रहा है कि बेचारे सिंह जिन्दा रहें। वह उन्हें संरक्षण देना चाहता है। माने अब जंगली जानवरों का भय नहीं रहा है।

तब ये सारे भयानक शस्त्रास्त्र किस काम के लिए? मनुष्य के भय से ही इनकी खोज हो रही है और यह मनुष्य ही कर रहा है! मनुष्य को मनुष्य का बड़ा डर मालूम हो रहा है। इसीलिए बड़े पैमाने पर भय की शक्ति पैदा हो रही है। हिंसा शक्ति का उत्कर्ष हो गया है। वह इतनी मजबूत हो गयी है कि सारी मनुष्य-जाति का खात्मा हो सकता है। इस हालत में कौन सा उपाय ढूंढा जाय, यह मनुष्य के सामने प्रश्न है। हर राष्ट्र अपनी फौजी ताकत बढ़ाता जाय, तो क्या वह सुरक्षित रहेगा? आज यही प्रश्न हो रहा है। हर देश सैन्य शक्ति से सुसज्जित है। पाकिस्तान और हिन्दुस्तान रूस और अमेरिका एक दूसरे से डरते हैं। एक दूसरे के भय से शस्त्रों की होड़ हो रही है। इसमें से किस प्रकार छुटकारा हो सकता है यह हमें सोचना चाहिए।

हम काम कर रहे हैं। जमीन का मसला हमने एक प्रयोग के लिए हाथ में लिया है। सामूहिक प्रेम शक्ति निर्माण हो सकती है या नहीं इसका प्रयोग चल रहा है। आज प्रेम रुक गया है बहता नहीं है। पानी बहता रहे तो स्वच्छ रहता है। बहना रुका तो वह सड़ जाता है।

प्रेम कामरूप बना

इधर प्रेम परिवार में कैद हो गया तो उधर सम्पत्ति भी आ गयी। उससे झगड़े बढ़े। फिर उस प्रेम का रूप भी बदल जाता है—मेरे लड़के पर प्रेम यानी दूसरे लड़कों पर अप्रेम मेरे परिवार की चिन्ता यानी दूसरे परिवार की अचिन्ता। उस प्रेम को बहुत भव्य प्रेम का यानी व्यापक द्वेष का रूप आ जाता है। अगर स्पष्ट रूप से कहना हो तो वह प्रेम काम के रूप में प्रकट हुआ है। जैसे पानी का बहना रुक गया तो उसमें कीड़े पड़ जाते हैं। फिर पानी का मूल काम खतम हो जाता है। वह पानी पीने लायक नहीं रहता। उससे बीमारी पैदा हो सकती है। वह जीवन नहीं रहता मरण बन जाता है। इसी तरह जो प्रेम अपने को एक परिवार में सीमित रखता है वह कामरूप बन जाता है। वह सड़ा हुआ प्रेम है। वह दुःख की बात करता है। वह मुक्ति का साधन बन ही नहीं सकता, बंधन का साधन बनता है।

हिंसा का व्यापक संगठन

पिछले महायुद्ध में व्यापक परिमाण में हिंसा का प्रयोग किया गया। करोड़ों की तादाद में सैनिक मारे गये हजारों जख्मी हुए। हर घर का जवान उसमें शामिल हो गया और बाकी लोगों ने युद्ध में मदद की। बहनें भी सैनिकों की सेवा में लगीं। प्रत्यक्ष उत्पत्ति का काम छोड़कर करोड़ों रुपयों का खर्च रोज किया गया। यानी द्वेष-काम के लिए व्यापक संगठन बना।

प्रेम की ताकत कैसे बनेगी?

आज एक मार्ग व्यक्तिगत मार्यादित और परिवार की पवित्रता बना रहे हैं। हम इन दोनों को अलग-अलग मानते हैं। पवित्रता यानी एक कुटुम्ब पर

दूसरे का आक्रमण न हो। प्रेम की ताकत कायम रखनी है, तो मेरे और आपके परिवार में सहयोग होना चाहिए। मैं आपके घर पर पत्थर नहीं फेंकता और आप मेरे घर पत्थर नहीं फेंकते तो इससे ताकत पैदा नहीं होती। यह अभावात्मक व्यवस्था है। ईसामसीह के नाम पर लोग इन्हें व्यक्तिगत आध्यात्मिकता की परिभाषा बताते हैं। उनकी इससे अधिक विडंबना नहीं हो सकती। उन्होंने कहा था : 'लव दाई नेबर एज दाईसेल्फ'। पड़ोसी पर प्रेम करो इतना ही नहीं कहा, थोड़ा प्रेम करो यह भी नहीं कहा; बल्कि यह कहा कि जितना अपने पर प्रेम करते हो उतना पड़ोसी पर करो। याने मैं और मेरा पड़ोसी एक बन जाय। अब शत्रु को भी अपने प्रेम में शामिल करने की बात है।

प्रेम का हमला

हम दुश्मन पर भी प्रेम का हमला करेंगे तब प्रेम की शक्ति प्रकट होगी। आज प्रेम डरपोक बना है, घर में बैठा है, पत्नी के साथ बच्चे के साथ प्यार करता है; लेकिन पड़ोसी के साथ प्यार करने से डरता है और दुश्मन के साथ प्यार करने से काँपता है। जहाँ द्वेष फैलने की हिम्मत करता है वहीं प्रेम डरता है। यह (प्रेम) मैदान में आता ही नहीं घर में बैठा रहता है। कुछ लोग पत्नी को परदे में रखते हैं। इसी तरह ये लोग प्रेम को परदे में रखते हैं। पत्नी परदे से बाहर घूमे हवा में आती है तो उन्हें डर लगता है। उसी तरह उन्हें प्रेम को बाहर लाने में भय लगता है। वे पड़ोसी के साथ प्रेम से नहीं रहते। घर में उनको समान रूप से खाना पीना मिलना चाहिए, यह प्रेम का व्यवहार घर में रखते हैं, तो वही समाज में लाने में क्यों डरते हैं? प्रेम इतना डरपोक बन गया कि हमें दया आती है। इसलिए शंकराचार्य ने कहा कि प्रेम से मुक्त बनो। द्वेष-प्रेम वर्जित दशा बनो। द्वेष से मुक्त बनो वैसे प्रेम से भी बनो। प्रेम को काम का रूप आया यह वैरी बना इसलिए उसका विपरीत रूप बना। समाज का कल्याण करने की शक्ति उसमें नहीं रही इसलिए उससे भी मुक्त बनो। हिंसा शक्ति जोर कर रही है, कोटि-कोटि लोग सेना में शामिल होने लगे। एक दिन

स्टालिन का आज्ञापत्र निकला : प्यारे सैनिको, तुम शत्रु से लड़ोगे, पर नाकाफी है। पूरे मन से, पूरे दिल से, हृदय से शत्रु के साथ द्वेष करो, तब तुम्हें जय मिलेगी। इस तरह द्वेष की अत्यन्त व्यापक व्याख्या की गयी है। द्वेष-शक्ति इतनी व्यापक बन गयी और प्रेम-शक्ति कैद हो गयी। कुमकुम के समान प्रेम सामने नहीं आ रहा है।

आज दुनिया के सामने यही प्रश्न है कि हम प्रेम को व्यापक कर सकते हैं या नहीं ? अपना सारा प्रेम सेवा में लगा सकते हैं या नहीं ? प्रेम के आधार पर दुनिया सहयोग कर सकती है या नहीं ? प्रेम से करोड़-करोड़ लोग इकट्ठा हो सकते हैं या नहीं ? सामूहिक रूप से प्रेम की रचना हो सकती है या नहीं ? इस दृष्टि से ग्रामदान की ओर आप देखिये। कई गाँव लोगों ने आज तक दान दिया है। पहले व्यक्तिगत तौर पर दान देते थे। पर क्या यह दान परलोक में पुण्य मिलेगा इसलिए देते हैं ? यह दान इसलिए है कि समूह की शक्ति पैदा हो। जिस परिमाण में द्वेष शक्ति बढ़ रही है उस हिसाब से ५ करोड़ का दान कम ही है, फिर भी दुनिया का ध्यान इसने खींचा है। अच्छे-अच्छे लोगों को आश्चर्य होता है, आशा भी होती है कि शायद इसमें से दुनिया को राह मिलेगी, प्रेम शक्ति से मसले हल करने का मार्ग सूझेगा। उन्हें हल किये बिना दुनिया को शान्ति नहीं मिल सकती।

पेटभर का प्रेम

हमारे सामने सवाल यह है कि द्वेष के विरोध में हम प्रेम की शक्ति प्रकट कर सकते हैं या नहीं ? भूदान-यज्ञ से ऐसी शक्ति प्रकट कर सकते हैं, ऐसी आशा, ऐसी कल्पना लोगों को होने लगी है। इसलिए दुनियाभर के लोग इसे देखने आते हैं, वे दिल से आशीर्वाद भी देते हैं और इसका नमस्कार करनेवाले प्रेम फिरते हैं, क्योंकि वे त्रस्त हैं, आपत्ति में हैं। मसले हल करने की वे एक राह चाहते हैं, पर वह उनको नहीं मिल रही है। मैंने इसके पहले कहा, शस्त्र पर से उनका विश्वास उठा है। पचीस साल के अन्दर दो-दो महायुद्ध हो गये ! इसलिए शायद इसमें से मार्ग मिल जाय, ऐसी आशा से वे इस काम में लगे हैं।

और गीता की अपेक्षा नहीं है, पर युग की और विज्ञान की अपेक्षा है धर्म की तो है ही। इसलिए हम कहते हैं कि सारा वातावरण सारी हवा तैयार हो रही है।

यही इसलिये कम्युनिज्म और धर्म संस्था दोनों की कभी नहीं बैठ सकती है! दोनों दो सिरे पर हैं, लेकिन बाबा के काम को दोनों कबूल करते हैं, क्योंकि यह परिस्थिति की माँग है। परिस्थिति कह रही है कि प्रेम को व्यापक नहीं बनाओगे तो द्वेष व्यापक होगा। सामने हिंसा है, तो हमें प्रेम करना चाहिए। जहाँ अत्यन्त व्यापक परिमाण पर हिंसा हो रही है, वहाँ छोटे से क्षेत्र में प्रेम को सीमित रखोगे तो नहीं टिकोगे। इस दृष्टि से देखें तो ध्यान में आयेगा कि बाबा इतना दीन क्यों है? वर्षा में, धूप में और ठण्ड में क्यों घूमता है? इतनी आतुरता इसलिए है कि बाबा देख रहा है कि प्रेम को इतने व्यापक परिमाण पर प्रकट न किया जाय तो मनुष्य जाति का खात्मा होगा।

प्रेम का व्यापक प्रयोग आवश्यक

हमने आज जो दृष्टि आपके सामने रखी, उस दृष्टि से आप भूदान और ग्रामदान की ओर देखिये। यह सिर्फ भूमि का सवाल नहीं है। प्रेम को व्यापक बनाना है। यह अगर भूदान और ग्रामदान के बिना भी बन सकता है तो चाहिए, परन्तु वह नहीं होगा, क्योंकि हिन्दुस्तान में सबसे पहली आवश्यकता जमीन की है। आपको पानी की प्यास है, उस पर ध्यान न देते हुए मैं आप पर प्यार दिखाता हूँ, तो कैसे चलेगा? इसलिए भूमि का मसला हाथ में लिया है। परन्तु यह मुख्य काम नहीं है। मुख्य काम प्रेम को व्यापक बनाना है, शक्ति बढ़ाना है। इसलिए दूसरा मार्ग हो तो आप खोजिये। मुझे तो हिन्दुस्तान के लिए भूदान और ग्रामदान के सिवा दूसरा मार्ग नहीं दीखता।

आज जो बिलकुल हिंसा में मग्न हैं, वे भी दिल से हिंसा नहीं चाहते। इधर प्रेम की शक्ति प्रकट नहीं हो रही है, उधर मसले हल करने हैं, इसलिए द्वेष का सहारा लेते हैं। प्यासे को स्वच्छ पानी मिलेगा तो वह गन्दा पानी नहीं पियेगा। लेकिन उसे स्वच्छ पानी हासिल नहीं हुआ तो वह गन्दे पानी से अपनी प्यास

आत्मज्ञान बढ़ेगा तब समता मिलेगी और शांति होगी। आज विज्ञान जितना बढ़ा है उससे छोटा करेंगे, तब भी सुख नहीं मिलेगा। विज्ञान छोटा करना हो तो रेलें खतम करो उखाड़कर फेंक दो विमान गाड़ियाँ तोड़ डालो। पर विज्ञान को आप तोड़ नहीं सकते। तोड़ना भी नहीं चाहते। लेकिन सुखी होना चाहते हैं। तो, आपको उपनिषदों का आत्मज्ञान हासिल करना होगा और अद्यतन विज्ञान को कबूल करना होगा। उपनिषदों के आत्मज्ञान से हृदय का विकास और अद्यतन विज्ञान के कारण बुद्धि का विकास—दोनों का योग होगा तभी हम सुखी होंगे।

विज्ञान छोटा था तब अलग-अलग परिवार हो सकते थे। परन्तु अब विज्ञान की स्थिति में वह नहीं चलेगा। कुल ग्राम को एक परिवार समझना होगा। अब छोटे छोटे स्वार्थ छोड़ दीजिये। नहीं छोड़ेंगे तो टिकेंगे ही नहीं। टिकने की कोशिश करेंगे, तो मार खायेंगे। इसलिए विशाल बनाना होगा यही भूदान ग्रामदान का संदेश है।

पच्चावपुर (केरल)
२२-५-'५७

सम्मिलित परिवार और ग्राम-परिवार : ४

हमसे अक्सर यह कहा जाता है कि आज पुराने सम्मिलित परिवार टूट रहे हैं, लड़ाई झगड़ा हो रहे हैं बूढ़े माँ-बाप की भी चिन्ता नहीं की जाती जमीन का बँटवारा हो रहा है। ऐसी हालत में आपके ग्राम परिवार कैसे टिकेंगे? आप तो नये ढंग से उलटी दिशा में बढ़ाने की बात कर रहे हैं। हम जवाब देते हैं कि पुराने सम्मिलित परिवार टूट रहे हैं क्योंकि वे टूटने लायक ही थे। अंग्रेजी में कहावत है— खून पानी से गाढ़ा होता है। उसके मानी हैं कि रक्त सम्बन्ध ज्यादा गाढ़ा होता है। हम कहते हैं कि पानी रक्त से पवित्र होता है। यानी रक्त सम्बन्ध की अपेक्षा हृदय सम्बन्ध पवित्र होता है। रक्त सम्बन्ध आसक्ति पर खड़ा है। उसमें आसक्ति के लिए अवकाश था। धार्मिकों की बात है गाँवों में

होती थी लेकिन अब विज्ञान के जमाने में आसक्ति नहीं टिक सकती। इस समय बाप बम्बई में है, तो बेटी कलकत्ते में। ऐसी हालत में आसक्ति कैसे टिक सकती है? विज्ञान के जमाने में आसक्ति नहीं विचार टिकेगा। ग्राम-परिवार विचार की बुनियाद पर खड़े होंगे इसलिए टिकेंगे। गाँववाले एक होंगे तो गाँव उन्नति कर सकेगा सबकी समृद्धि हो सकेगी उत्पादन बढ़ेगा यह एक विचार है। पुराने परिवारों में समय के मां झगड़े तो चलते ही थे परन्तु आसक्ति के कारण लोग साथ रहते थे। लेकिन अब विचार से कोई बात होती है तभी श्रद्धा टिकती है।

खादी का अधिष्ठान

खादी पर भी यही आक्षेप किया जाता है कि पुराने जमाने में भी लोग कातते थे, लेकिन अब वह खत्म हो गया है। मिलें आ गयी हैं ऐसी हालत में खादी कैसे चलेगी? हम जवाब देते हैं कि पुराने जमाने की खादी लाचारी की खादी थी इसलिए वह टिक नहीं सकी। उस समय मिलें नहीं थीं इसलिए लोग चरखा न चलाते तो उन्हें नंगा रहना पड़ता। उनके पास दूसरा चारा ही नहीं था। लेकिन आज की खादी विचार की खादी है। दुनिया में चाहे कितनी मिलें चलें तो भी हम अपने गाँव में बना हुआ कपड़ा ही पहनेंगे। बाहरी मिलों का कपड़ा मुफ्त में मिले तो भी नहीं पहनेंगे। इस प्रकार का ग्राम-संकल्प जब होगा तब इस विचार की मजबूत बुनियाद पर खड़ी खादी अमर टिकेगी।

सम्बन्ध भेद

परिवार में आसक्ति के कारण हक की बात आती है। वहाँ पर बाप, बेटा पति, पत्नी आदि हरएक का हक माना गया है। जहाँ अधिकार या हक की बात आती है वहाँ एक-दूसरे के प्रति भावना खत्म होती है। भ्रातृमण्डल और मित्रमण्डल में यही फर्क है। भ्रातृमण्डल में दुश्मनी भी चलती है। कौरव पाण्डव भाई-भाई थे लेकिन उनके बीच झगड़े हुए। पत्नी जिन्दगीभर पति की सेवा करती है लेकिन यदि एकआध बार उसने पति की बात नहीं मानी तो पति उसीको याद रखता है। जिन्दगीभर की हुई सेवा को याद नहीं रखता, क्योंकि

बुझायेगा। हिंसा पर प्रेम न होते हुए भी लोग हिंसा कर रहे हैं, क्योंकि स्वच्छ पानी नहीं मिल रहा है, इसलिए हम उन्हें दोष नहीं देते। यह आपका और हमारा कर्तव्य है कि हम प्रेम की शक्ति प्रकट करें। सत्य, प्रेम और करुणा की शक्ति व्यापक होगी तभी दुनिया से हिंसा दूर होगी।

त्रिचूर (केरल)
१०-५-५७

व्यापक आत्मज्ञान की आवश्यकता : १ :

विज्ञान के साथ आत्मज्ञान को व्यापक बनाइये

इस समय विज्ञान के कारण हम नजदीक आये हैं। विज्ञान बढ़ा है, हमारा सविज्ञान भी बढ़ा है। यहाँ के बड़े बड़े विश्व राजनीति की बात करते हैं। विज्ञान के कारण एक तरफ हम विशाल बनते जा रहे हैं परन्तु हमारा आत्मज्ञान छोटा बन गया है। पुराने जमाने के लोग समझते थे हम सारी दुनिया के निवासी हैं। आज कोई कहता है हम केरल के नागरिक हैं, अफगानिस्तान के हैं, मिस्र के हैं। यह सब आत्मज्ञान कम होने का परिणाम है। शंकराचार्य ने हम सबको यह सिखाया है कि मैं कौन हूँ, यह पहचानो, समझ लो। 'कोऽहम्' मैं कौन हूँ, यह पहले समझ लेने की जरूरत है। अगर मैं देह हूँ, तो दूसरों से अलग होता हूँ। अगर ब्राह्मण हूँ, तो अब्राह्मणों से अलग पड़ता हूँ। मलयाली हूँ, तो तमिलनाडवालों से अलग पड़ता हूँ। भारतीय हूँ तो दूसरे देशों से अलग रहता हूँ। अगर जीव हूँ, तो ब्रह्म से अलग हो जाता हूँ। इसलिए तय करो कि मैं कौन हूँ। मैं कौन हूँ इसका जितना विशाल उत्तर आयेगा उतने हम सुखी होंगे। जितना छोटा उत्तर आयेगा उतने दुःखी होंगे। इसलिए सबसे बड़ा ज्ञान है मैं कौन हूँ, यह जानना।

दुनिया की सारी जमीन सबकी है

दरअसल भूदान वगैरह जाति भेद, धर्म भेद, भाषा-भेद आदि भेदों को

निर्मूल करना चाहता है। हवा पर किसीकी मालिकी नहीं हो सकती। वैसे ही जमीन पर किसीकी मालिकी नहीं हो सकती। भूमि परमेश्वर की बनायी हुई चीज है। उस पर सबका हक है। दुनिया में जो भी भूमि है, वह सबकी है। यह गलत है कि भारत देश भारतीयों का है। भारत सबका है। वैसे ही सब देश हमारे हैं। यह भूदान का विचार है। आस्ट्रेलियावालों को जापानवालों से कहना चाहिए कि तुम्हारे पास जमीन कम है हमारे पास ज्यादा है—तुम इस भूमि पर आओ। लेकिन वे समझते हैं कि यह हमारा देश है। हम किसीको यहाँ नहीं आने देंगे। हमारी भूमि याने किसकी? जो अब यहाँ आ पहुँचे हैं, उनकी। मेहरबान, हजार साल पहले आप यहाँ थे? यहाँ तो थे नहीं। बाहर से आये हो, तो कैसे कहते हो कि यह देश हमारा है! यह भूमि हमारी है! इसका मतलब यह है कि अगर दूसरे लोग हमला करेंगे, आपको हटायेंगे, तो उनका देश होगा। तब क्या आप पर आक्रमण होना चाहिए? उनको आपसे ज्यादा बलवान् बनना चाहिए? सौ दो सौ साल के बाद मानोगे कि हम सारे भाई-भाई हैं। तब तक झगड़ा करते रहोगे? आखिर में मानोगे, तो पहले से ही प्रेम क्यों नहीं करते? प्रेम से उनका स्वागत क्यों नहीं करते? इस तरह का संकुचित हृदय विज्ञान के खिलाफ है।

आत्मज्ञान को व्यापक बनाना आवश्यक

विज्ञान मनुष्यों को व्यापक बना रहा है। वह आपको संकुचित नहीं होने देगा। आज दुनिया के किसी भी कोने में छोटा सा सवाल पैदा हो जाता है तो वह अंतर्राष्ट्रीय सवाल बन जाता है। विज्ञान की यह विशेषता है कि यहाँ राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय का भेद नहीं रह जाता। इसके साथ-साथ आत्मज्ञान व्यापक होना चाहिए। जैसे पुराने जमाने के लोग कहते थे कि हम सारे विश्व के निवासी हैं वैसे ही हमें कहना चाहिए। उनके पास विज्ञान कम था। आज जैसा विकसित नहीं हुआ था। इस कारण उनको बहुत तकलीफ उठानी पड़ती थी। आत्मज्ञान व्यापक और विज्ञान छोटा था। हमारी हालत इससे विपरीत है। हमारा विज्ञान व्यापक है आत्मज्ञान छोटा है इसलिए हम तकलीफ भोग रहे हैं। जितना आत्मज्ञान है उतना विज्ञान बढ़ेगा या जितना विज्ञान है, उतना

होती थी। लेकिन अब विज्ञान के जमाने में आसक्ति नहीं टिक सकती। इस समय आप बम्बई में हैं, तो बेटी कलकत्ते में। ऐसी हालत में आसक्ति कैसे टिक सकती है? विज्ञान के जमाने में आसक्ति नहीं, विचार टिकेगा। ग्राम-परिवार विचार की बुनियाद पर खड़े होंगे, इसलिए टिकेंगे। गाँववाले एक होंगे तो गाँव प्रगति कर सकेगा, सबकी भलाई हो सकेगी, उत्पादन बढ़ेगा, यह एक विचार है। पुराने परिवारों में समय के भी झगड़े तो चलते ही थे, परन्तु आसक्ति के कारण लोग साथ रहते थे। लेकिन अब विचार से कोई बात होती है, तभी श्रद्धा टिकती है।

खादी का अधिष्ठान

खादी पर भी यही आक्षेप किया जाता है कि पुराने जमाने में भी लोग कातते थे लेकिन अब सब खतम हो गया है। मिलें आ गयी हैं, ऐसी हालत में खादी कैसे चलेगी? हम जवाब देते हैं कि पुराने जमाने की खादी लाचारी की खादी थी, इसलिए वह टिक नहीं सकी। उस समय मिलें नहीं थीं, इसलिए लोग कातना न जानते तो उन्हें नंगा रहना पड़ता। उनके पास दूसरा चारा ही नहीं था। लेकिन आज की खादी विचार की खादी है। दुनिया में चाहे कितनी मिलें चलें, तो भी हम अपने गाँव में बना हुआ कपड़ा ही पहनेंगे। बाहरी मिलों का कपड़ा मुफ्त में मिले तो भी नहीं पहनेंगे। इस प्रकार का ग्राम संकल्प जब होगा, तब इस विचार की मजबूत बुनियाद पर खड़ी खादी जरूर टिकेगी।

सम्बन्ध-भेद

परिवार में आसक्ति के कारण हक की बात आती है। यहाँ पर बाप बेटा पति पत्नी आदि हरएक का हक माना गया है। जहाँ अधिकार या हक की बात आती है वहाँ एक-दूसरे के प्रति भावना बदल जाती है। मातृमण्डल और मित्रमण्डल में यही फर्क है। मातृमण्डल में दुश्मनी भी चलती है। कौरव पाण्डव भाई-भाई थे लेकिन उनके बीच लड़ाई हुई। पत्नी जिन्दगीभर पति की सेवा करती है लेकिन कभी एकमात्र बार उसने पति की बात नहीं मानी तो पति उसीको याद रखता है। जिन्दगीभर की हुई सेवा को याद नहीं रखता; क्योंकि

यह मानता है कि पत्नी से सेवा लेना उसके अधिकार की ही बात है। मा-बापों में भी यही होता है। लेकिन मित्रों की बात अलग है। किसी मित्र ने एकाध दफा मदद की तो हम उसे जिन्दगीभर याद रखते हैं और उसका उपकार मानते हैं, क्योंकि उसमें हक की बात नहीं है। मित्र लोग अपनी स्वतन्त्र बुद्धि से स्वेच्छा से बनते हैं लेकिन परिवार तो बने हुए ही हैं। आप चाहें या न चाहें, जो आपके पिता हैं वे पिता ही रहेंगे। वहाँ चुनाव का सवाल ही नहीं है। परन्तु ग्राम परिवार स्वेच्छा से बनते हैं। उसमें शामिल होना न होना हरएक की मर्जी की बात है। हर कोई सोच सकता है कि उसमें लाभ है या हानि और सोच समझकर शामिल होता है। इस तरह कौटुम्बिक परिवार में लाचारी की बात है। ग्राम-परिवार का प्रयोग विचार का प्रयोग है। विज्ञान के जमाने में ग्राम-परिवार बनाना जरूरी है। इसलिए ग्राम परिवार बनेंगे और टिकेंगे।

पालक्काड (केरल)
२२-२-५

शंका-समाधान : ५

श्रीमान् और गरीब दोनों वासना न रखें

प्रश्न : कहा जाता है कि श्रीमान् लोग त्याग करें। परंतु श्रीमानों की संपत्ति पर गरीब लोग वासना न रखें यह क्यों नहीं कहा जाता? क्या गरीबों को अपने ही परिश्रम पर आश्रित नहीं रहना चाहिए?

उत्तर : यह अच्छा सवाल है। इस विषय में जरा बारीकी से सोचना चाहिए। धर्म दुहरा होता है। हरएक बच्चा माता पिता की आज्ञा का पालन करे, यह धर्म है। पर दूसरा धर्म यह भी है कि माता पिता बच्चे का अच्छी तरह पालन करें। पति और पत्नी का यह धर्म है कि वे एक दूसरे के प्रति वफादार रहें और अपना जीवन संयमी रखें। चोरी करना पाप है तो संग्रह करना भी पाप है। आप एक चीज को पाप मानें और दूसरी को नहीं तो धर्म एकांगी होगा।

धर्म कहता है कि समाज में स्तेय न हो, तो साथ साथ संग्रह भी नहीं होना चाहिए। अस्तेय के साथ असंग्रह भी जोड़ दिया गया है।

आपने बताया कि श्रीमानों के धन पर गरीब वासना रखते हैं। हममें भी तो वासना है। इसीलिए हम संग्रह करके रखते हैं। नहीं तो क्या जरूरत थी संग्रह करने की? गरीबों से हम जरूर कहेंगे कि दूसरों के धन पर वासना नहीं रखनी चाहिए। 'मा गृधः कस्य स्विद्धनम्' का शंकराचार्य ने अर्थ किया है कि दूसरों के धन की वासना मत रखो और अपने धन की भी वासना न रखो। श्रीमान् अपने धन की वासना रखता है और सौ के हजार कब होंगे हजार के लाख कब होंगे यही सोचता रहता है। वह तो वासना रखेगा पर दूसरों से कहेगा कि वासना नहीं रखनी चाहिए, यह कैसे संभव है? हम गरीबों से कहते हैं कि श्रम-शक्ति से उत्पन्न होने के कारण आप उसे समाज को समर्पित कर दें। श्रीमानों से कहते हैं कि आपके पास संपत्ति है। उसे समाज को अर्पण कीजिये। आज तो दोनों संग्रही बने हैं। इसलिए देना सबका काम है। जो धर्म होता है वह सबके लिए होता है। सत्य बोलना हिंसा न करना, यह सब पर लागू होता है क्योंकि यह धर्म है। इसमें श्रीमान्, गरीब का फर्क नहीं हो सकता। गरीब खेत पर मजदूरी करने के लिए जाता है, तो कम-से-कम श्रम करना चाहता है। श्रीमान् कम-से-कम मजदूरी देना चाहता है। याने दोनों समाज की चोरी करते हैं। दोनों अधम करते हैं।

गरीब को अगर हम अपने परिश्रम और प्रयत्न पर निर्भर रहने के लिए कहें, तो श्रीमानों को भी कहना होगा। श्रीमान् कहेगा हम अपने परिश्रम से संपत्ति कमाते हैं। धनवान् अपनी बुद्धि के उपयोग से दूसरों के श्रम का लाभ उठाता है। अनेक लोगों का शोषण होता है फिर भी वह समझता है कि अपने ही परिश्रम से मैं कमाता हूँ। यह गलत है। उपनिषद् में आदर्श समाज का वर्णन आता है। 'न मे स्तेनो जनपदे न कदर्यः' —मेरे राज्य में न चोर हैं न कंजूस। संग्रह करनेवाले ही चोर के बाप हैं। तो लड़कों को बाप की सीख मिलनी ही चाहिए। श्रीमान् लोग पढ़े लिखे हैं समझदार हैं ज्यादा जिम्मेदार हैं इस-लिए वे स्वयं काम का पालन करें, तो उसका असर समाज पर पड़ेगा। वे अगर

व्यक्तिदान, ग्रामदान, भूदान का काम उठा लेते हैं, तो गरीबों को प्रेम से वश कर सकते हैं।

व्यक्तिगत स्वामित्व और जिम्मेवारी

प्रश्न : क्या व्यक्तिगत स्वामित्व के बिना समाज बन सकता है ?

उत्तर : समाज के लिए व्यक्तिगत मालिकियत की जरूरत नहीं है। व्यक्तिगत सेवा की जरूरत है। प्राइवेट सेक्टर के बिना समाज नहीं टिकेगा। प्राइवेट सेक्टर यानी व्यक्तिगत जिम्मेवारी। लड़के की सेवा करनी है। दस आदमियों को यह काम सौंप दिया, तो क्या अच्छा पालन होगा ? नहीं। जिम्मेवारी तो एक की ही होनी चाहिए, तभी अच्छा पालन हो सकेगा। लड़का गुरु के घर जाता है। गुरु प्यार करता है, पढ़ाता है, मानो बनाता है। पर उसके लिए मालिकियत की क्या जरूरत है ? व्यक्तिगत स्वामित्व की जरूरत नहीं है। जरूरत है व्यक्तिगत जिम्मेवारी की। इस प्रकार प्रधानमन्त्री हम मुकरर नहीं करते, एक ही व्यक्ति प्रधानमन्त्री होता है, क्योंकि वह जिम्मेदार होता है। व्यक्तिगत स्वामित्व के बगैर समाज नहीं चलेगा, यह भ्रममात्र है। व्यक्तिगत संपत्ति, स्वामित्व एक बात है और व्यक्तिगत जिम्मेवारी दूसरी बात। यह एक ध्यान में रखना होगा।

प्रश्न : गण्डक के पास आर्थिक स्वतन्त्र रहना असम्भव है। इससे क्या जमीन की भूख नहीं जायेगी ?

उत्तर : हम जमीन की भूख की चिन्ता नहीं करते। हम भूख की चिन्ता करते हैं। हम नहीं जानते कि वह मिट्टी खाने की इच्छा करता है। इच्छा रखता है अन्न की। गण्डक की जिम्मेवारी है कि हरएक को अन्न दें, काम दें। [illegible] मैं आज भी बेकारी है। मशीनरी से काम लेते हैं, तो उनको काम नहीं मिलता। वो बेकार हैं, उनको सरकार मदद देती है। यह इष्ट माना जाता है कि सरकार मदद दे या काम। [illegible] की सरकार मदद नहीं दे सकती, क्योंकि यह दरिद्र की सरकार है। इसलिए वह जिम्मेवारी गाँवों पर डालनी चाहिए। गण्डक को काम मिले, ऐसी योजना गाँवों में हो सकती है। इसलिए समाज

जमीन की भूख का नहीं, काम की भूख का है। हिन्दुस्तान की क्षुधा मिटानी है, तो हरएक को काम देना होगा। काम का सर्वोत्तम साधन है जमीन। सारे देश में ही आज आर्थिक स्वत्व का अभाव है, इसलिए जो है, उसे बाँटकर चलना चाहिए। पूर्ति के लिए धन्धे भी देने होंगे, सहायक धन्धों के बिना केवल खेती से नहीं चलेगा।

आलस्य का इलाज

प्रश्न : ग्रामदान होने पर आलसी लोगों का उत्साह कैसे बढ़ेगा ?

उत्तर : जब समूह होता है, तो उत्साह आता ही है। परिवार में सब काम करते हैं, तो आलसी को भी उत्साह आता है। परिवार बड़ा होने पर उत्साह बहुत बढ़ेगा। दूसरों के लिए काम करने में उत्साह बढ़ता है, यह मनुष्य का स्वभाव है। हमारे गाँव में हमारे घर में ही कटहर का पेड़ था। जब कटहर होते थे, तो पिताजी हमसे कहते थे कि पड़ोसियों के यहाँ थोड़ा थोड़ा बाँटकर आओ। हमें बहुत आनन्द आता था बाँटने में। यह अनुभव हरएक बच्चे को होता है। हमें उस कटहर बाँटने में कहाँ से उत्साह आया ? समूह जब बड़ा बनता है, व्यापक होता है, तो उत्साह बढ़ता ही है। लेकिन वह इतना व्यापक नहीं होना चाहिए कि आँख से न दिख सके। गाँव में कोई आलसी भी हो, तो उसको मारेंगे पीटेंगे नहीं, गाँव की उस पर नजर रहेगी। गाँव में सबको अलग अलग जमीन न दी गयी, तो भी आलसी के लिए स्पेशल केस मानकर एक जमीन का टुकड़ा उसको स्वतन्त्र रूप में देंगे। आलसी है, इसलिए पानी की सुविधा भी कर देंगे और कहेंगे कि तू इस पर काश्त कर और तू ही खा। लेकिन उस पर उसकी मालिकी नहीं होगी, नहीं तो वह बेच डालेगा या रहन रख देगा। आलस्य से कितने ही लोगों ने अपनी जमीन खोयी है। अलग जमीन होने से आलसी को भी कुछ-न-कुछ काम करना ही पड़ेगा। इस तरह तालीम की दृष्टि से आलसी को उत्साहित करने के उपाय करेंगे।

बिचूर (बरार)
२८-२ ६०

जगत की जनता में शिक्षण का प्रचार शुरू हुआ है। शिक्षितों की आकांक्षाएँ बढ़ी हैं इसलिए असंतोष भी बढ़ा है। अगर काम नहीं करेंगे और केवल असंतोष रखेंगे तो वह मिटेगा नहीं। असंतोष का भी उपयोग होता है। महाभारत में व्यास भगवान् ने कहा है 'असन्तोषः श्रियो मूलम्'—असंतोष लक्ष्मी का मूल है। असंतोष होता है तब मनुष्य श्रम करता है, काम करता है और लक्ष्मी प्राप्त करता है। हृदय में असंतोष हो परन्तु काम करने का मार्ग न मिले तो असंतोष बेकार होता है। वह वाणी के जरिये प्रकट होता है। फिर चर्चा चार राजनैतिक पक्षों के झगड़े—इस तरह वचन वाचिक काम चलता है। ऐसी हालत में ताकत पैदा नहीं होती। इंजन गाड़ी को वेग से खींचकर ले जाता है। उसमें कौनसी शक्ति है? उसके अंदर भाप है। भाप अगर बाहर हवा में निकल जाय तो क्या ताकत रहेगी? असंतोष को जब दिल के अंदर रोकते हैं, तब ताकत पैदा होती है। जब वाणी से प्रकट हुआ तो परिणाम शून्य होता है। इसलिए असंतोष को अन्दर दबाना चाहिए। फिर हाथ पैरों की ओर आता है। मार्ग मिलता है, तो पाँव वेग से चलने लगते हैं। चित्त में असंतोष है तो पाँव कभी थकेंगे नहीं। मेरे बाबा के चित्त में अपने लिए पूर्ण शांति और समाधान है, लेकिन आपके समाज की हालत के लिए असंतोष है। बाबा को मार्ग मिल गया इसलिए असंतोष वाणी से प्रकट नहीं होता।

शोषण के विरोध का तरीका

मिल मालिक मजदूरों का शोषण करते हैं अतः उनके विरोध में बोलना चाहिए—ऐसा कहनेवाले मिल का ही कपड़ा पहनते हैं। लेकिन बाबा गाली नहीं देता और न मिल का कपड़ा ही पहनता है। हिन्दुस्तान के लोग मिल का कपड़ा न पहनें तो गरीबों को मजदूरी मिलेगी, मिलवाले भी बन्द करेंगे।

जिन्हें हमारे हाथ में आयेंगी। आज आप मिल का कपड़ा खरीदकर मिलवालों को गाली देते हैं, तो उसका कुछ भी असर नहीं होता। मिलवालों का सच्चा दुश्मन तो है खादी। यद्यपि वह मीठा बोलता है, पर काम ऐसा करता है कि मिल की जड़ ही उखड़ जाय। लेकिन लोग खादी की ताकत पैदा नहीं करते, मिल को ही जोर पहुँचाते हैं। कहने का मतलब यह कि ताकत बोलने में नहीं होती। निषेध या गाली से कल का भय होता है कल का संहार नहीं होता।

वेळिमेलि (केरल)
१६-१-५७

सादगी की महिमा : ७ :

प्रश्न : क्या इस तरह का सादा जीवन बिताने से आपको कोई खास सुखानुभूति होती है ?

उत्तर : हम यहाँ सादे ढंग से खाना खा रहे हैं यह सही है। लेकिन हम जितनी सादगी चाहते हैं उतनी अभी नहीं आ पायी है। मनुष्य के लिए सादगी बड़ी शोभा है। विशेषकर तब जब कि जनता दरिद्र हो। सादगी जरूर चाहिए। दरिद्रता न हो और समृद्धि हो फिर भी सादगी की जरूरत है। जब हम सादगी से रहते हैं तो ज्यादा ध्यान बाहर की चीजों में नहीं लगाना पड़ता। हृदय के अन्दर ध्यान लग सकता है ज्यादा सोच सकते हैं। मान लीजिये कि बड़ा मकान है बहुत अधिक फर्नीचर है दीवार पर चित्रादि टँगे हैं। इन्हें रोज साफ करना पड़ता है नहीं तो घर गन्दा हो जायगा। साफ करते हैं तो समय जाता है। फिर भक्ति के लिए, ज्ञान के लिए, ध्यान के लिए कहाँ समय मिलेगा ? यह हो सकता है कि अपना घर बड़ा हो बिल्कुल एक ही जगह रहें और घूमना न हो। सामान ज्यादा रहेगा तो ध्यान उसी पर ज्यादा लगाना पड़ेगा। उपनिषद् में याज्ञवल्क्य से मैत्रेयी ने प्रश्न पूछा 'क्या सम्पत्ति के संग्रह से अमृतत्व की प्राप्ति हो सकती है ?' उत्तर मिला :

'अमृतत्वस्य तु न आशा अस्ति वित्तेन'— पैसे से अमृतत्व मिलने की आशा नहीं है।" लोग पैसा संग्रह करते रहते हैं, तो अन्दर की चीजें नहीं देख पाते। अन्दर कितना आनन्द है, वह नहीं पहचानते; बाहरी चीजों पर ही ध्यान देते हैं। दिनभर रेडियो का गाना सुनते हैं, हृदय के अन्दर जो दशमोऽङ्गुल का सुन्दर गायन चल रहा है, वह नहीं सुनते। एक श्वास अन्दर आता है, दूसरा बाहर जाता है, यह तो वीणा बज रही है। अन्दर का ध्यान करेंगे, तो उत्तम-से-उत्तम संगीत सुनने को मिलेगा।

सादगी से मनुष्य का जीवन ऊँचा उठता है, इसलिए हम सादगी पसन्द करते हैं। हम आश्रम में रहते थे तो दो ही धोती रखते थे। अब कभी-कभी यात्रा में घूमना पड़ता है, अतः चार धोती रखी हैं। पर आज जितनी सादगी चाहिए उतनी नहीं है। हम नहीं चाहते कि हिन्दुस्तान अमेरिका के समान दौलत बढ़ाता चला जाय। आज हिन्दुस्तान गरीब है, खाना भी नहीं मिलता तो जरूरी है कि अभी उत्पादन बढ़े, संपत्ति भी बढ़े; परन्तु एक हद तक ही बढ़नी चाहिए। आज अमेरिका में काफी संपत्ति है, तरह-तरह के साधन हैं, सुविधाएँ हैं, फिर भी सन्तोष नहीं। लोगों में मन-समाधान नहीं है। वहाँ आत्महत्याएँ भी ज्यादा हुआ करती हैं, क्योंकि उनका ध्यान बाहर ही बाहर है। ध्यान नहीं होता, एकान्तवास नहीं मिलता। भजन करने के लिए अवसर नहीं। शहर रहने में एक बार चाँद न आते होंगे। सदा उजेला रहता! इधर का इधर उधर बिजली की चमक! फिर आसमान के सुन्दर नक्षत्रों को कौन देखेगा? चाँद की तरह ध्यान भी छिपता जाय! इस तरह उन्होंने जीवन के आनन्द का खजाना खोया है। हमारा यह आन्दोलन सम्पत्ति और उत्पादन बढ़ाने के साथ साथ आध्यात्मिक साधना के लिए भी है। सम्पत्ति कुछ मर्यादा तक बढ़ाना आवश्यक है क्योंकि दरिद्रता में ध्यान नहीं लगता और मधुरता में भी अधिक अनुकूल नहीं हो सकता। इसलिए समत्व की आवश्यकता है। जीवन में समत्व और सादगी हो, पर सादगी यानी दरिद्रता न हो।

[illegible] (केरल)
११ ६ २

अक्सर माना गया है कि बीमारी में अगर मनुष्य भोगता रहे, तो उसका चिन्तन दुर्बल रहता है। लेकिन हम इससे उलटा ही अनुभव आया है। इस महीने में हम काफी बीमार रहे। हमें शरीर का साथ भरोसा था पर वह अब नहीं रहा। लेकिन बीमारी की हालत में भी चिन्तन में हमने बहुत ज्यादा ताकत पायी है।

वर्ग है ही नहीं

कार्ल मार्क्स ने एक बड़ा भारी तत्त्व दुनिया को दिया है—'दुनिया के तमाम गरीब लोग एक हैं, वे खड़े हो सकते हैं, इकट्ठा हो सकते हैं।' इतने स्पष्ट और इतने असन्दिग्ध शब्दों में यह विचार पहले किसीने नहीं रखा था कि गरीब मनुष्य भी अपनी जंजीर तोड़कर उठ खड़ा हो सकता है। इसका बहुत अच्छा परिणाम हुआ, लेकिन साथ-साथ एक वह गलत विचार भी स्थिर हुआ कि समाज में जो पूँजीपति हैं वे मानवता को नहीं पहचानते। अतः उनके विरोध में विचार खड़ा हुआ। गरीब लोगों में जो अब तक दीन बने हुए थे, एक प्रतिक्रिया शुरू हुई कि हम दीन नहीं रहेंगे। फलस्वरूप प्रतिहिंसा की भावना जाग उठी। वास्तव में हम सब माता के उदर से ही पैदा हुए हैं। किसीके भी हाथ या सिर काटने की कल्पना कितनी भयंकर है! भगवान् की योजना में हर बच्चे के लिए, चाहे वह श्रीमान् का हो या गरीब का, समान योजना है। गरीब की कुटिया में या श्रीमान् के प्रासाद में दोनों जगह उसने प्रमामृत का प्रबंध कर रखा है। इस हालत में वर्ग का क्या अर्थ होता है? मेरा कहना है कि वर्ग है ही नहीं, जातियाँ हैं ही नहीं। अभी पक्ष बन गये हैं तो क्या वे पक्ष हम नहीं तोड़ सकते? जिस चीज को हम बनाते हैं, क्या उसको तोड़ नहीं सकते?

शांति-सेना खड़ी की जाय

इस बीमारी में जो विचार हमारे मन में हुआ वह यह है कि एक बड़ी-भारी शांति-सेना की स्थापना हम करनी है। यह सेना निरंतर घूमती रहकर लोगों की सेवा करे, लोगों पर नैतिक असर डालती रहे। हिंसा को कभी आगे आने का मौका न दे। कम से कम हर पाँच हजार व्यक्तियों के पीछे एक कार्यकर्ता हो। इन कार्यकर्ताओं को अच्छी तालीम देनी होगी। इन्हें यह विचार समझाना होगा कि हमें सत्ता मिलनी है। जब तक यह सत्ता लोगों के पास रहेगी तब तक समाज में शांति नहीं होगी। इसलिए कार्यकर्ता पक्ष निरपेक्ष होने चाहिए। इस प्रकार की शांति सेना भारत में होनी चाहिए। क्या ऐसी योजना सरकार कर सकती है? यह तब करेगी जब उसकी सेना से मुक्ति होगी। तब उसको कुछ भी मुक्ति मिलेगी। यह ऐसा काम है कि जनता को करना है। कोई राजनैतिक पार्टी यह कर नहीं सकेगी।

लोगों में बहुत भ्रम है और कुछ लोग सोचते हैं कि राजनैतिक पार्टियाँ शांति और अहिंसा पर खड़ी हैं। हम चाहते हैं कि अहिंसा और शांति कायम रहे। लेकिन उसके आधार पर हम पार्टियाँ खड़ी नहीं कर सकते। सामने एक पार्टी खड़ी है हमारी दूसरी पार्टी। तू मेरा नहीं वह मेरा है—इस तरह का भेदभाव जहाँ होगा वहाँ अहिंसा कैसे रहेगी!

शांति-सेना के सैनिक को सत्याग्रह के लिए तैयार होना चाहिए। सत्याग्रही के हृदय को अनुशासन में रखने का रास्ता अहिंसा के सिवा और नहीं हो सकता। सत्य के सिवा और कोई भी सत्ता हम पर अधिकार चलाती है, तो हम सत्याग्रही नहीं बन सकते। ऐसे सत्याग्रही इन कार्यकर्ताओं में से निकलने चाहिए। यह सब हमें करना है। ऐसा एक बलवान् विचार इस रोगावस्था में मेरे मन में पैदा हुआ। मैं नहीं जानता कि इस शरीर से कहाँ तक हो सकेगा। ईश्वर चाहे तो काम चलेगा। परन्तु विचार मैंने आपके सामने रखा। आप इसलिए तैयार हो जाइये कि केरल में हमें शांति सेना खड़ी करनी है। सामान्य समय में समाज की सेवा ग्रामदान-प्राप्ति इत्यादि की प्रवृत्ति और विशिष्ट मौके पर अपना सिर

समर्पण करके शांति लाने की तैयारी यह इस सेना का काम है। अतएव एक क्षेत्र की पूरी सेवा करनेवाले सेवक चाहिए।

हम स्थल-कालातीत हैं

अब यहाँ हमारा कितना समय इसमें लगना चाहिए, यह प्रश्न आता है। दुनिया में काल नाम का एक बड़ा तत्त्व माना गया है। लेकिन हमारे चिंतन में काल नहीं है। जहाँ भी हम हैं, वहाँ शाश्वत के लिए हैं। इसलिए यहाँ हम कब तक हैं, इसकी चिंता आप लोग न कीजिये। हम सर्वव्यापी विचार को मानते हैं। ऐसा महसूस नहीं करते कि हम केरल में घूम रहे हैं—हम तो सारी दुनिया में घूम रहे हैं। केरल के बाहर जायेंगे तो भी पूरा संबंध आपसे रखनेवाले हैं, चाहे आप हमसे संबंध रखें या न रखें।

स्वामी के वियोग से अधिक प्रेरणा

आखिर हम यहाँ क्या करते हैं? क्या हम ग्रामदान हासिल करते हैं? आप घूमते हैं, हमारी सभा का संयोजन करते हैं। किसी खास मौके पर हम चार शब्द बोल देते हैं। परन्तु हमारे रहने से यह होता है कि आप सब लोगों को निरंतर काम करने की प्रेरणा होती है। किसीके सान्निध्य से अत्यन्त उत्साहयुक्त कर्म प्रेरणा मिले और उसके वियोग में उससे भी अधिक प्रेरणा मिले, वही ज्ञानी पुरुष है। ऐसा समझानेवाले ही ज्ञान को समझते हैं। इसकी मिसाल गांधीजी का और हमारा संबंध है। गांधीजी जीवित थे तब प्रत्येक क्षण हमारा उनका संबंध था। हमारा प्रत्येक कर्म उनकी प्रेरणा का परिणाम होता था। आज जब वे परलोक में हैं तब भी वे हमारे प्रत्येक क्षण के स्वामी हैं। हम यह नहीं समझते कि एक क्षण भी हम उनसे अलग हैं। उनका वियोग बिलकुल महसूस नहीं होता। उनकी प्रेरणा सतत मिलती रहती है। इसलिए इस बात को महत्त्व नहीं रहा है कि हम यहाँ कितने दिन रहेंगे, कितने दिन नहीं रहेंगे। हम निरंतर आपके बीच हैं।

कालीकट (केरल)
११-७-५७

मनुष्य का जीवन दो प्रकार का होता है। दोनों मिलकर पूर्णता होती है। एक होता है खानगी कौटुम्बिक पारिवारिक जीवन। उसमें हमारी वासना काम करती है। वासना के कारण ही मनुष्य कुटुम्ब में काम करता रहता है। परन्तु उससे समाधान नहीं मिलता। फिर वह सामाजिक सेवा भी करता है। यह मनुष्य का दूसरा जीवन है। इससे उसे कुछ समाधान होता है।

सामाजिक सेवा के भी दो प्रकार हैं। पहला प्रकार संकुचित है। उसमें अपनी जाति के लिए, धर्म के लिए, पार्टी के लिए कुछ करने की संकुचित भावना होती है। दूसरे प्रकार में किसी प्रकार के भेद को ध्यान में न रखते हुए समूचे समाज की सेवा की जाती है। जैसे जैसे विज्ञान बढ़ रहा है वैसे-वैसे संकुचित सेवा के क्षेत्र खत्म हो रहे हैं। पुराने जमाने में विज्ञान बढ़ा हुआ नहीं था। उस वक्त संकुचित सेवा के क्षेत्र थे। अब विज्ञान बढ़ा है, अतः मनुष्य की दृष्टि विशाल और व्यापक बनी है और मनुष्य के परस्पर हित-सम्बन्ध संमिश्रित हो रहे हैं। अब मनुष्य जितनी संकुचित वृत्ति रखेगा उतनी ही उसकी हानि होगी। जो सामाजिक सेवा संकुचित है उससे कभी-कभी भय पैदा होता है मत्सर बढ़ता है झगड़े होते हैं। इसलिए संकुचित सेवा का विचार इस जमाने के अनुकूल नहीं है। अब तो जाति, धर्म, पक्ष निरपेक्ष जन-सेवा का प्रकार ही सच्ची सेवा का प्रकार है। याने अब मनुष्य के लिए दो प्रकार की सेवा है: एक तो वासनामूलक कौटुम्बिक सेवा और दूसरी उदार बुद्धि से कोई भी भेद न मानते हुए की जानेवाली समाज की सेवा।

समाज-सेवा और हृदय-परिवर्तन

सामाजिक सेवा संस्था या सत्ता के जरिये भी हो सकती है। लोग सरकार

के हाथ में सारी शक्ति देते हैं और उनके जरिये समाज की सेवा होती है। लोग अपने अपने प्रतिनिधि सरकार में भेजते हैं और उनके द्वारा काम होता है। इस जमाने में लोगों ने यह तरीका मान्य किया है। परन्तु इसमें सत्ता का उपयोग होता है। यद्यपि यह प्रकार लोगों को मान्य है फिर भी इससे प्रश्नों का पूरा समाधान नहीं होता। समाज सेवा के लिए पैसे की जरूरत हो तो सरकार टैक्स लगाती है। लोग राजी हों या न हों टैक्स देते ही हैं। समझते हैं आखिर अपनी ही सरकार है इस वास्ते थोड़ा ज्यादा देते हैं। इस तरह समाज की सेवा होती है। लेकिन इसमें भी समाधान नहीं होता, क्योंकि उसकी भी मर्यादा होती है। सरकार के जरिये होनेवाली सेवा हृदय शुद्धि नहीं करेगी। टैक्स बढ़ा दिया गया तो पहले मेरे हाथ से समाज सेवा के लिए जितना जाता था उससे आज ज्यादा जाता है। इस तरह मेरे हाथ से ज्यादा समाज-सेवा होती है। मैं बड़ा सेवक बन गया। यानी पहले मैं एक हजार रुपये टैक्स देता था अब दो हजार देता हूँ तो मेरी समाज सेवा बढ़ी। परन्तु मेरा दिल नहीं बढ़ा। इसमें जबरदस्ती रही। मेरे हाथ से सेवा होती है यह सरकार कराती है। सरकार जो काम करे, उसको मैं सम्मति देता हूँ तो उसकी सेवा हो जाती है। टैक्स ज्यादा लगाने पर भी मैं रोकता नहीं हूँ। झूठ हिसाब पेश करना कम आमदनी बताना आदि नहीं करता हूँ। यह मेरा सद्गुण है इसलिए मेरे हाथ से सेवा जरूर होती है परन्तु वह कराई जाती है। इस प्रकार से समाज की सेवा होगी परन्तु मानव की उन्नति नहीं होगी। कहीं बाँध खड़े किये रास्ते बनाये, पंचवर्षी प्लान की। इससे मानव की उन्नति नहीं होगी। अच्छे मकान बनाना उत्पादन बढ़ाना वगैरह काम अच्छे हैं। वे करने चाहिए, परन्तु इतना होने से मानव की उन्नति होती है ऐसा नहीं है। ये सारी चीजें अमेरिका में हो चुकी हैं। वह भारी समृद्ध देश है। फिर भी कहते हैं कि वहाँ मानसिक समाधान नहीं है। केवल भौतिक उन्नति से मानव की उन्नति नहीं होती। इसलिए ऐसा सामाजिक कार्य करना चाहिए जो हृदय परिवर्तन के जरिये हो।

सेवा के तीन प्रकार

हृदय-परिवर्तन के जरिये किये गये सार्वजनिक कार्य को हम राजनीति न कहकर 'लोकनीति' या 'जनशक्ति' कहते हैं। हृदयपूर्वक सेवा, सहानुभूतिपूर्वक सेवा और कारुण्यपूर्ण सेवा इस तरह मनुष्य की सेवा के तीन प्रकार हैं। उसमें एक है भावनामूलक कुटुम्ब-सेवा। वह सेवा भी करनी होगी। परन्तु उसमें बुरे तरीके से काम न लिया जाय। असामाजिकता से कमाई न की जाय। और सामाजिकता से कुटुम्ब सेवा करता है तो वह भी सज्जन कार्य करता है ऐसा माना जाय। अपने-अपने प्रतिनिधि भेजने से जो सरकार बनती है उसको सहानुभूति देने से दूसरे प्रकार की सेवा होती है। उसके जरिये काम होता है। जो भी काम सरकार करती है, हम उसमें सहानुभूति और उसके साथ सहयोग करते हैं। उसकी माँगों को बेजा तरीके से टालते नहीं। इस प्रकार वह भी एक सेवा का क्षेत्र है। तीसरा प्रकार है कारुण्य द्वारा हृदय परिवर्तन की प्रक्रिया। इसमें लोग स्वयं जन सेवा करने लगेंगे और जो संकुचित जन-सेवा है, एक जाति की एक धर्म की एक पार्टी की वह छोड़ देंगे।

त्रिविध धर्म

परिवार-धर्म प्रथम धर्म है। इसकी मर्यादा हमने बता दी है। सत्य की रक्षा की जाय, न्याय्य कमाई की जाय। किसी प्रकार का आलस न हो। पड़ोसी की चिन्ता करें, परस्पर के साथ समानता से व्यवहार करते रहें। इस तरह की कुटुम्ब सेवा से मनुष्य का हृदय विकसित होता है, नहीं तो संकुचित बनता है।

दूसरा धर्म है राष्ट्र-धर्म। इसमें सरकार के जरिये अनेक काम किये जायँ। हम उसके अच्छे काम में सहयोग दें और अगर कुछ गलत काम हो तो उसके विरोध में आवाज उठायें। हमारा विरोध रहा तो सरकार भी वैसे काम नहीं करेगी। गलत कामों का विरोध भी प्रेम और नम्रता से होगा। इंग्लैंड ने मिस्र पर हमला किया तो इंग्लैंड की कुछ प्रजा की आवाज उसके खिलाफ उठी। यह है राष्ट्र धर्म की मिसाल। उसने ब्रिटिश सरकार की बहुत अच्छी सेवा

हुई। सरकार के अच्छे कामों में सहयोग और गलत कामों का विरोध, यह है राष्ट्र धर्म।

तीसरा धर्म है अरण्य धर्म या मानव धर्म; इसे भक्ति धर्म भी कह सकते हैं। ऐसे तीन प्रकार के धर्मों का मनुष्य को अनुशीलन करना चाहिए।

छोटा धर्म व्यापक धर्म में लीन हो

पहला धर्म वासनामूलक है। उसे धीरे धीरे समाज में लीन हो जाना चाहिए। वह कायमी नहीं है। जैसे जैसे वासना क्षीण होती जायगी, वैसे वैसे वह समाज में लीन होता जायगा। इस तरह उसका क्षेत्र धीरे धीरे कम करना होगा। कुछ उम्र तक वह धर्म रहेगा। परन्तु आगे भोग-वासना रहेगी नहीं। अनुभव बढ़े और ज्ञान भी बढ़े तो उस समय वानप्रस्थ बनता है। गृहधर्म का भार बच्चों पर सौंप दिया है पत्नी और पति के बीच भाई बहन जैसा व्यवहार है। अधिक समय समाज कार्य में जाता है। इस तरह उस परिवार धर्म को समाज-धर्म में लीन करना हरएक का कर्तव्य है। इसी तरह राष्ट्र धर्म को भी धीरे धीरे विवेक से मानव धर्म में या अरण्य-धर्म में लीन करना होगा। मान लीजिये समाज-सेवा के लिए सरकार को दो सौ करोड़ रुपयों की जरूरत है। तो सरकार टैक्स लगाये। इसके अलावा सरकार लोगों से कहे कि ऐसे ऐसे कामों के लिए इतनी रकम की जरूरत है। लोग इसके लिए सम्पत्तिदान दें। तब उसका निश्चय करे, लोग उतना दान देने के लिए तैयार हो जायँ। इससे एकदम समाज का रूप बदल जायगा। याने जबर्दस्ती से टैक्स हासिल करने के बदले लोग प्रेम से उतनी रकम दे दें तो कितना अद्भुत काम होगा। अपने यहाँ प्राइम मिनिस्टर फण्ड है। कहीं आपत्ति आती है तो लोग प्रेम से खुशी से दान देते हैं। प्राइम मिनिस्टर ने जाहिर किया कि हमें दो सौ करोड़ रुपयों की जरूरत है। लोगों के सामने योजना रख दी और लोग दान दे रहे हैं। आज हम इस प्रकार की कल्पना नहीं कर सकते। सरकार कभी दान माँगेगी यह हम नहीं सोच सकते। एक हाथ में टैक्स और दूसरे हाथ में दान—यह सम्भव नहीं है।

कारुण्यमूलक सेवा की आवश्यकता

इसके लिए क्या करना होगा ? बाबा को सामने आना होगा । वह लोगों को समझायेगा कि करुणा से प्रेरित होकर इतना काम करो । मान लीजिये धनी लोग आगे आये । उन्होंने करोड़ों रुपये दान में दिये । वे समाज-सेवा करते रहे तो सरकार की उतनी फिक्र कम होगी और उतने अंश में सरकारी सत्ता भी कम होगी । इस तरह सरकारी सत्ता का क्षीण हो जाना बहुत बड़ी बात है । सत्ता के बदले कारुण्य से कुछ सेवा हो रही है ऐसा दर्शन होगा तो सब नाचने लगेंगे । अभी इनफ्लुएन्जा आया तो सभी लोग उसके निवारण के लिए खड़े हो गये । मुफ्त सेवा देने लगे । बहुत सारा काम लोगों की तरफ से हुआ तो देखते-देखते वह कम हो गया । सरकार को कुछ करना नहीं पड़ा । तीन साल पहले हम बिहार में घूम रहे थे । वहाँ बहुत बड़ी बाढ़ आयी थी । २ [illegible] मील तक चारों ओर पानी फैल गया था । सरकारी मदद की जरूरत थी । सरकार मदद करती थी, परन्तु लोगों ने अपनी तरफ से कुछ किया नहीं । हमें बड़ा आश्चर्य हुआ । ऐसे कामों के लिए लोगों को आगे आना चाहिए, दान योजना बनानी चाहिए, हिम्मत करनी चाहिए । [illegible] लेकर आगे आना चाहिए । आज सारी सेवा सरकार पर सौंप दी गयी है । कारुण्यमूलक सेवा खतम हो गयी है । किसीको भी गरीबों पर करुणा नहीं आती । व्यक्तिगत गुण-विकास का काम खतम ही हो गया है ।

इस तरह मानव के त्रिविध धर्म हैं : १ कुटुम्ब-धर्म, २ राष्ट्र-धर्म और ३ कारुण्य धर्म । कुटुम्ब धर्म धीरे धीरे समाज में लीन होना चाहिए । फिर भी वह पूरा हटेगा नहीं । क्योंकि बाप खतम होता है तो बेटा उसे चलाता है । बाप के बाद बेटा है ही । वह वात्सल्यमूलक है । परन्तु व्यक्ति का कुटुम्ब धर्म टूट सकता है । नदी समुद्र में लीन होती है तो वह खतम नहीं होती, बनी रहती है । वैसे ही कुटुम्ब धर्म समाज में लीन होगा फिर भी बना ही रहेगा । राष्ट्र धर्म को भी कारुण्य धर्म में लीन होना चाहिए । कारुण्य धर्म होगा, तो राष्ट्र धर्म खतम हो जायगा । इस प्रकार अब दो ही धर्म रहे—कारुण्य धर्म का महान् समुद्र और

इसमें मिलनेवाली उन्नत धर्म की। निरन्तर चलती नदी। यह होगा तभी मानव के मनोनुकूल समाज बनेगा।

सर्वोदय से कारुण्य-धर्म की योजना

हमारे सौभाग्य की बात है स्वराज्य-प्राप्ति के बाद 'सर्वोदय' शब्द निकला और उसने समाज के सामने कारुण्य धर्म पेश किया। इस कारुण्य धर्म का सामूहिक व्यापक रूप भारत के सामने न आता तो भारत की दुर्दशा होती क्योंकि तब व्यक्ति का कारुण्य ही न रहता। सर्वोदय विचार आज हमारे सामने है। इससे हमारा कुल काम कारुण्यमय हो सकता है और बहुत व्यापक योजना बन सकती है। जैसे समाज ने अपने ज्ञानियों को खड़ा किया उनके चरित्र तालीम की व्यवस्था कर दी। कहीं न्याय देने की बात है तो चार सज्जन एकत्र होकर सोचते हैं। वे जो फैसला देते हैं, उसे लोग मानते हैं। अब आरोग्य का काम है। उस बारे में जो जानकार, ज्ञानी हैं, वे खड़े होंगे। लोगों को आरोग्य का ज्ञान देंगे उनकी सेवा करेंगे। आज भी रामकृष्ण मिशन प्रेम-समाजम्, सर्वेंट्स ऑफ इण्डिया सोसायटी आदि कई संस्थाओं के जरिये काम हो रहा है। ऐसा होगा तो सरकार का उतना काम कम होगा। सर्वत्र ग्रामदान हो रहे हैं। लोगों ने प्रेम से जमीन की मालकियत छोड़ दी है। सब मिल जुलकर काम करते हैं। अपनी योजना स्वयं बनाते हैं। इस हालत में सरकार की बहुत सारी योजनाएँ खत्म होंगी।

पुराने जमाने में पड़ोसियों व्यापारियों पर लोगों का कितना विश्वास था! कहीं कोई यात्रा करने वाला तो अपनी सारी पूँजी जिन्दगी की कमाई पड़ोसी के हवाले कर जाता। कुछ भी लिखा पढ़ी न करता। यात्रा से लौटने के बाद वह पड़ोसी या व्यापारी उसकी पूँजी वापस कर देता। पर आज क्या है? कौन हिम्मत करेगा किसी को अपनी पूँजी सौंपने की? कितनी दुर्दशा है! समाज व्यापारी के बिना चलता नहीं फिर भी व्यापारियों पर विश्वास नहीं। मान लीजिये कुछ मतभेद होता है तो सज्जनों के सामने अपनी-अपनी बात रखें और जो फैसला हो उसे मान लें। कोर्ट की क्या जरूरत है? स्वराज्य के बाद

आखिर का कोई मौजी पॉलिसी इंग्लैंड में था। वहाँ तक झगड़े चलते थे। स्वराज्य के बाद दिल्ली आखिर का कोई सूबा और वह इंग्लैंडराज्य कोई दूर गया। वह अगर बाकी रहता, तो स्वराज्य के लिए अवसर ही नहीं रहता। स्वराज्य का अर्थ अगर हम इंग्लैंड का भार दूर होना करते हैं तो ग्रामराज्य का अर्थ यही होगा कि कालीकट्याण कोई दूर। हम वह स्थिति देखना चाहते हैं कि गाँव-गाँव एकत्र बैठते हैं लोग अपनी अपनी बातें उनके सामने रखते हैं फिर वे जो फैसला देते हैं उसे मानते हैं। मान लीजिये यहाँ के कुछ व्यापारियों ने संपत्ति दान दे दिया। अच्छे-अच्छे नवयुवक चुन लिये। उनको तालीम के लिए भेजा। सर्वोदय विचार क्या है वे समझ गये। वे काम करने गाँव में जाते हैं गाँव की सेवा करते हैं। लोगों के पास जाकर उनके घर का सुख-दुःख समझते हैं। उनके बीच झगड़ा हो तो निपटारा की कोशिश करते हैं। इतना प्यार हो गया कि सारे लोग सेवक की राह देखने लगते हैं कि वह कब आयेगा। सेवक आते हैं तो उन्हें प्रेम से खिलाते हैं अपना सुख-दुःख उनके सामने रखते हैं। निर्माण की योजना गाँववाले ही करते हैं। तब आप क्या समझते हैं कि वहाँ दंगा फसाद हो सकेगा? फिर भी मान लो हो गया तो भी सेवक जब वहाँ जायगा तो उसकी आँख देखकर कुछ मामला ठंडा हो जायगा। वहाँ शांति सेना काम करेगी। फिर सरकार की पुलिस सेना खतम होगी! इस प्रकार सरकार के एक एक कार्य कारुण्य में डूब जायेंगे।

सर्वोदय की इस योजना पर से आपको ध्यान में आयेगा कि यह निषेधात्मक कार्य नहीं है। सरकार को खतम करना याने सरकार की आवश्यकता न रहे इतना कारुण्य विस्तार होना चाहिए। इसलिए जो लोग समझते हैं कि हम अराजकवादी हैं, उनसे कहना चाहते हैं कि हम 'बागी' नहीं 'त्यागी' हैं। हम करना चाहते हैं—कारुण्य-विस्तार करना चाहते हैं, ताकि सारी सरकार उसमें डूब जाय।

कालीकट (केरल)
११-५-५७

विद्यार्थी शेर हैं, भेड़ नहीं १०

इक्कीस साल के नीचे वोट का हक क्यों नहीं ?

आपको मालूम है कि हिन्दुस्तान में लोकसत्ता चल रही है और इक्कीस साल के ऊपर के हरएक शख्स को मत देने का अधिकार प्राप्त हो गया है। इक्कीस साल के ऊपरवालों की ज्यादा बुद्धि होती है वे समझदार होते हैं। इक्कीस साल के नीचेवालों की बुद्धि परिपक्व नहीं होती इस ख्याल से उनको वोट का अधिकार नहीं दिया—ऐसा उसका अर्थ नहीं। अगर ऐसा हो, तो भगवान् शंकराचार्य ने १६ साल की उम्र में ब्रह्मसूत्र शांकरभाष्य कैसे लिखा ? इसका एक स्वतन्त्र उद्देश्य है। जिसको राष्ट्रीय व्यवहार कहते हैं यानी जो देश का कारोबार देखने की बात है वह बहुत छोटी चीज है। जो लोग व्यवहार में पड़े हैं, उन सबको वोट देना पड़ता है, फिर वे शिक्षित हों या अशिक्षित। लेकिन विद्यार्थियों से यह अपेक्षा है कि आप इस दुनिया के ऊपर की दुनिया में व्यवहार करें। जहाँ व्यवहार में आते हैं, वहाँ अनेक प्रकार के भेद खड़े होते हैं। आपको अभेद की दुनिया में विहार करना चाहिए। विद्यार्थियों की अखिल विश्व-व्यापक दृष्टि होनी चाहिए। व्यापक और विशाल चिन्तन की आदत पड़ जाय तो छोटे व्यवहार में भी आप सफल होंगे। जिनकी दृष्टि छोटी है वे यदि छोटे व्यवहार में पड़ते हैं, तो बहुत प्रकार की हानि होती है। विश्व-व्यापक दृष्टि से छोटा भी व्यवहार योग्य होता है।

व्यापक दृष्टि से छोटा काम

व्यापक दृष्टि लेकर छोटे से गाँव में भी सेवा का काम करते हैं, तो योग्य काम होता है। उससे दुनिया के साथ टक्कर नहीं होती। अगर गाँव की सेवा इस ढंग से करते हैं कि वहाँ दुनिया के साथ टक्कर हो, तो वह गाँव की सेवा के बदले अपसेवा ही होगी। हम अपने घर सेवा करते हैं

तो वहाँ भी उनकी सेवा करनी पड़ती है। परन्तु व्यापक दृष्टि के अभाव में वह सेवा भी संकुचित बन जाती है। उससे मनुष्य का स्वार्थ भी नहीं सधता। इसलिए व्यापक, विशाल दृष्टि प्राप्त होने के बाद छोटे क्षेत्र में भी काम करें तो भी कुछ हर्ज नहीं।

सीमित ज्ञान से नुकसान

स्कूलों में जो भूगोल सिखाते हैं उसमें छोटे क्षेत्र का जितना अध्ययन होता है, कुल दुनिया का उतना नहीं होता। चींटी के समान व्यापक ज्ञान होता है। चींटी आलमारी में रहती है। वहाँ गुड़ भी कहाँ-कहाँ है, वह वह जानती है। परन्तु मान लीजिये, घर को आग लग जाय, तो चींटी को मालूम नहीं होता। वह आलमारी के अन्दर रखे हुए भी, गुड़ में ही मस्त रहती है। इससे आग में भी खतम, गुड़ खतम और चींटी भी खतम। वह ज्ञानी तो बहुत है परन्तु उसका ज्ञान सीमित है और उसके साथ वृत्ति भी छोटी रहती है, इसलिए लाभ नहीं होता। अतः १२ साल के अन्दर के विद्यार्थी कुल दुनिया की दृष्टि से व्यवहार करें, तभी काम हो सकता है।

इस प्रकार जो ये समय प्रान्त-प्रान्त में झगड़े पैदा हुए। वे क्यों हुए? संकुचित दृष्टि के कारण। व्यापक दृष्टि होती तो लोग उतना तुच्छ न सोचते। विद्यार्थियों को यह नहीं कहना चाहिए कि मैं महाराष्ट्री हूँ या मैं कन्नड़ हूँ। उन्हें समझना चाहिए कि मैं विश्व-नागरिक हूँ। मुझे सारे विश्व का चिन्तन करना है। व्यापक बुद्धि से मैं ज्ञान हासिल करूँगा। संकुचित उपाधि अपनी बुद्धि में नहीं रखूँगा। अनंत अन्तरिक्ष में विहार करूँगा। मैं छोटा नहीं। छोटा होता तो चुनाव में जोर देता और छोटे-छोटे व्यावहारिक काम में भाग लेता। मैं विश्व मानव हूँ।

श्रेष्ठ कौन?

जिसको आप पैतृभूमि ([illegible]) कहते हैं वह भी छोटी बात है। लोग अपने-अपने देश का अभिमान रखते हैं। 'सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा।' हमारा देश अच्छा क्यों है? यह हमारा है इसलिए। अगर हम फिर

पाकिस्तान में होते, तो क्या करते ? यह कोई वस्तु दृष्टि का अब्जेक्टिव (वस्तुगत) नहीं है, संकुचित दृष्टि का है। दूसरे देशवाले भी ऐसा ही कहेंगे। गधा कहेगा मैं सबसे अच्छा हूँ। व्याघ्र कहेगा मैं सबसे श्रेष्ठ हूँ, मनुष्य कहेगा, मैं सबसे श्रेष्ठ हूँ। एक बार जंगल में शेर से मुकाबला करने का मौका आया, तो मनुष्य ने कहा : "कितना बेवकूफ प्राणी है यह, इसमें अक्ल भी नहीं है। व्याकरण, इतिहास, गणित कुछ भी नहीं जानता।" शेर बोला : 'तुम तो मेरे खाद्य हो। क्या तुम्हें ये बचायेंगे ?' बन्दूक नहीं, कुछ भी नहीं, तो शेर उसको उसके व्याकरण इतिहास के साथ खा जाता है। वह समझता है कि मेरे दाँत व नाखून कितने उत्तम हैं ! तब फिर कौन है श्रेष्ठ ? इसमें केवल अपने-अपने अभिमान की बात है।

अल्प ज्ञान हानिकारक

विश्व मानव इस तरह नहीं सोचेगा। वह अपने को किसी देश का निवासी नहीं मानेगा। वह मानेगा मैं ब्रह्म हूँ और ये सारे ब्रह्म हैं। जैसे कोई ऊँचे पहाड़ पर चढ़ता है तो उसे सब ओर का दर्शन होता है वैसे ही विद्यार्थियों का ऊँचे पहाड़ पर खड़ा होना चाहिए। अभी छोटे बननेवाले लोग नीचे रहेंगे। एक दफा ऊपर का दृश्य देख लेने पर नीचे के व्यवहार में पड़ने पर भी व्यवहार पवित्र होगा। मेरी जाति, मेरा धर्म, मेरी भाषा, मेरा प्रान्त, मेरा घर, मेरा गाँव, मैं अपना; ऐसा संकुचित बनना विज्ञान युग में बेकार साबित होगा। दुनिया का ज्ञान हो तो मनुष्य से छोटा-सा व्यवहार भी उत्तम बन सकता है। जो मनुष्य उत्तम गणित शास्त्र जानता है उसके लिए अपने घर का हिसाब रखना आसान है। परन्तु जो गणित नहीं जानता, सिर्फ घर का हिसाब ही जानता है तो यह बिल्कुल संकुचित बात है। हिन्दुस्तान में कितने ही व्यापारी हैं जो अच्छा व्यापार नहीं कर सकते क्योंकि उनको विश्व का ज्ञान ही नहीं।

दृष्टि की महिमा

दृष्टि व्यापक हो तो मनुष्य का सर्वांगीण उत्थान होता है। रवीन्द्रनाथ टैगोर

में संकुचित दृष्टि नहीं थी। उन्होंने अपने विद्यालय का नाम भी रखा : 'विश्व भारती'। उन्होंने बंगाली में लिखा क्योंकि वे वह भाषा जानते थे। लेकिन जो भी लिखा व्यापक दृष्टि से लिखा। इस कारण कुल दुनिया के लोग उनका साहित्य पढ़ते हैं। काम चाहे छोटा हो, परन्तु दृष्टि विशाल हो तो कीमत बढ़ती है। हम एक पत्थर की पूजा करते हैं। हमारी दृष्टि यह हो कि यह पत्थर है जिसकी हम पूजा कर रहे हैं, तो हम भी पत्थर बन जायेंगे। ऐसे पर पूजक हम देखते हैं। मन्दिर में भी एक पत्थर दूसरे पत्थर के सामने बैठता है। कोई ज्यादा देता देगा तो ज्यादा आरती दिखायेगा। थोड़ा देगा तो थोड़ी-सी दिखा देगा। यह है 'पत्थर की पूजा'। भक्त अगर भावपूर्ण भाव से पूजा करता और समझता है कि यह पत्थर नहीं भगवान् है तो उसकी दृष्टि विशाल बनती है। रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने बंगाली भाषा की सेवा की। लेकिन भावना यह थी कि मैं कुल दुनिया की सेवा कर रहा हूँ। महात्मा गांधी ने इस देश की आजादी का काम किया। उनकी भी यह दृष्टि नहीं थी कि मैं भारत की सेवा कर रहा हूँ। वे ऐसा सोचते थे कि मैं भारत के जरिये सम्पूर्ण संसार की सेवा कर रहा हूँ। इसका परिणाम यह हुआ कि सब कौम के सारे लोगों का सहयोग मिला। केवल संकुचित दृष्टि होती तो वह सहयोग न मिलता। गांधीजी का साहित्य सारी दुनिया के लोग पढ़ते हैं। उनका काम किसी एक विभाग के लिए नहीं बल्कि सबके लिए था। उनका कर्म समाजव्यापी था। इसलिए उनको सब देशों के लिए आदर रहा। मैं माँ की सेवा कर रहा हूँ। 'मेरी माँ' ऐसी संकुचित भावना हो तो सेवा का रूप एक अलग ढंग का होगा। लेकिन मैं विश्व-जननी की प्रतिमा की सेवा कर रहा हूँ यह भावना हो, तो इसमें मैं मोक्ष भी पा सकता हूँ। तुम विद्यार्थी हो। तुम्हें मालूम होगा कि भगवान् कृष्ण की सेवा यशोदा ने जिस भावना से की थी, उसी तरह कौशल्या जिस भावना से देवकी की व्यापक बुद्धि से ईश्वर की सेवा करने के कारण ही वे मोक्ष की अधिकारिणी हुईं।

५ संकुचित दृष्टि के नमूने

हम कहना यह चाहते हैं कि हमें छोटे काम मे पड़ना हो तो भी हमारी दृष्टि छोटी न होनी चाहिए। हरएक को कई छोटे-छोटे काम करने पड़ते हैं। यह देह भी छोटी ही है। परन्तु हमारी दृष्टि छोटी हुई तो छोटे काम भी भयानक होंगे। इसलिए २१ साल के नीचेवालों को मत का अधिकार, नहीं है, यह मुझको अच्छा लगता है। आपके साथ मैं भी हूँ। मुझे अधिकार तो है वोट देने का परन्तु इसमें मैं नहीं पड़ता; क्योंकि मैं विश्व-व्यापक दृष्टि चाहता हूँ। मैं विद्यार्थियों में शामिल होना चाहता हूँ। मैं हर रोज अध्ययन करता हूँ। बड़ी किताब याने अधिक पन्नेवाली किताबों का नहीं; छोटी-छोटी किताबों का। गीता छोटी सी किताब है, परन्तु उसकी कितनी व्यापक दृष्टि है।

कुछ लोग कहते हैं कि हमारा धर्म श्रेष्ठ है। ईसामसीह की शरण गये बिना मुक्ति नहीं मिल सकती। मै पूछता हूँ, दो हजार साल पहले जो लोग हो गये, क्या वे मोक्ष के अधिकारी थे ही नहीं? कितनी अजीब बात है? साधारण मनुष्य के घर के भी तीन-चार दरवाजे होते हैं लेकिन ईश्वर के घर में एक ही दरवाजा है! क्या उस दरवाजे से गये बिना अन्दर प्रवेश नहीं होगा? एक मुसलमान भाई कहते थे कि कुरान के अलावा दूसरे किसी धर्मग्रन्थ की जरूरत नहीं। मैंने कारण पूछा, तो कहने लगे कुरान का आरम्भ होता है 'ब' से— 'बिसमिल्लाहिर्रहमानिर्रहीम' और अन्त में आता है 'स'— मिनल्जिन्नते-वन्नास्। तो आरम्भ का 'ब' और अन्त का 'स' लिया तो हो गया—'बस'। अब दूसरी किताब की क्या जरूरत है?

तातस्य कूपोऽयमिति ब्रुवाणाः क्षारं जलं कापुरुषाः पिबन्ति।

'मेरे बाप का कुँआ समझकर खारा पानी पिया और बोलता है मीठा ही है। कहता है मेरे बाप का है। अरे तेरे बाप का है परन्तु खारा पानी है। जरा नजदीक के कुँए पर जा और देख वहाँ का पानी कैसा है! बोलता है 'यही मीठा है क्योंकि यह कुँआ मेरे बाप का है।' ऐसी संकुचित दृष्टि से वोट देने जायेंगे तो उससे भला नहीं होनेवाला है।

विद्यार्थी अपना दिमाग आजाद रखें

आप विद्यार्थियों का रूप बनाते हैं। अगर ऐसे रूपरंग बनना शुरू हुआ तो समझ लीजिये कि विद्यार्थी खत्म हो। एक बार इलाहाबाद युनिवर्सिटी में हमारा व्याख्यान था। बाद में विद्यार्थियों ने पूछा : 'हम विद्यार्थियों का एक फेडरेशन बनाना चाहते हैं। आपकी क्या राय है?" हमने कहा : फेडरेशन तो मुर्दों का होता है, जिन्दों का नहीं। आप ही कहें कि आप जिन्दा हैं या मुर्दे? अगर [illegible] तो करो फेडरेशन। विद्यार्थी को आजाद रहना चाहिए। हर कोई अपनी अपनी स्वतन्त्र बुद्धि से सोचे। किसी भी एक विचार के बन्धन में अपने को नहीं रखना चाहिए। सबको हम प्रणाम करें, सबकी सेवा करने के लिए तैयार रहें, परन्तु अपना सिर झुकाने के लिए तैयार न रहें। हमारा सिर आजाद है। इसलिए विद्यार्थियों को किसी जमात में, चाहे वह गांधीवादी हो या मार्क्सवादी, न पड़ना चाहिए। हम विचार की दृष्टि से तरह-तरह का अध्ययन कर सकते हैं। यह अच्छी चीज है, परन्तु किसी विचार के साथ शादी करने के लिए उतावली न होना चाहिए। इसलिए आप २१ साल तक वोट का अधिकार न होने से [illegible] एसोसिएशनों की भी आवश्यकता नहीं रहेगी।

आज विद्यार्थियों के सिर पर बड़ी आपत्ति है। सारी तालीम सरकार के हाथ में है। सरकारें भी विद्यार्थियों के दिमाग एक ही साँचे में ढालना चाहते हैं। फिर जिस ढंग की सरकार होगी, उस ढंग की तालीम विद्यार्थियों के सिर पर लादी जायगी। दिमाग एक ही साँचे में ढालने की कोशिश कुल दुनिया के देशों में चल रही है। [illegible] विद्यार्थियों को अपनी आवाज उठानी चाहिए और कहना चाहिए कि हम अपने सिर पर किसी भी 'इज्म' या विचार को न लादने देंगे। हम स्वतन्त्र हैं, हम आजाद हैं, स्वतन्त्र दृष्टि से विचार करेंगे [illegible] तरह-तरह [illegible] पढ़ेंगे।

काश्मीर ([illegible])
११

दुःखियों की सेवा की जाय, किसी जाति की नहीं

आजकल जिस ढंग से हरिजन-कार्य चल रहा है, उससे हमें समाधान नहीं है। वही पुराना तरीका है, जो २५ साल पहले शुरू हुआ था। उस तरीके से आज काम बनेगा, ऐसा नहीं है। अब समय आ गया है कि हम हरिजन-परिजन समस्त भेदों को ही खतम कर दें। अब एक है हमें मनुष्य की सेवा करनी है। जो अधिक दुःखी है उसकी सेवा पहले करनी है। आपत्ति सब पर आती है। जो मनुष्य आपत्ति में है, उसकी सेवा करना हमारा धर्म है। किसीको हरिजन नाम देकर उसकी सेवा करने की मेरी तो इच्छा नहीं है। जैसे हमने भूदान में नियम रखा है कि जो भूमिहीन है, उसको भूमि देनी है, परन्तु जो सबसे ज्यादा दुःखी है, उसको पहले देनी है। आज जो हरिजन कहलाते हैं, वे विशेष दुःखी हैं, यह ध्यान में रखकर ही यह नियम बनाया है। लेकिन सेवा करनी है तो सिर्फ हरिजनों की सेवा करने से काम पूरा नहीं होगा। दूसरे भी ऐसे हैं जो आपत्ति में हैं। शरणार्थी दुःखी हैं। बेचारे टी. बी. के बीमार हैं, उन्हें क्या कम तकलीफ है? ऐसे विविध प्रकार से जो भी दुःखी हैं उनकी सेवा हमें करनी है, ऐसा निश्चय करें। बाकी सब भेद भाव समाज में डुबा दें तब सच्ची सेवा होगी। किसी जाति का लेबुल लगाकर सेवा अब नहीं चलेगी।

हमारी जाति : मानव

गाँव में ब्राह्मण हैं, दूसरे लोग हैं, हरिजन भी हैं। हम कहते हैं, हम सबकी सार्वजनिक सेवा करेंगे, यानी हरिजन को अलग रखकर उनकी सेवा नहीं करेंगे। आज होता यह है कि कुछ समाज के हरिजनों को अलग रखकर सेवा करते हैं। जैसे घोड़े को बाहर अलग तबेले में बाँधकर उसकी सेवा की जाती है, वैसे ही हम हरिजनों की सेवा करते हैं। उनको कोई अपने घर में स्थान नहीं देता।

एक बात यह भी है कि हरिजन स्वयं चाहते हैं कि उनको अलग रखा जाय और उनके लिए कुछ खास योजना बने। वास्तव में मानव समुद्र में सारे भेद भाव मिटने चाहिए। किसीकी क्या जाति है, यह पूछना ही नहीं चाहिए। ब्राह्मण है या जैन यह देखने से मालूम होता है। जो देखने से मालूम हो नहीं जाति है। जाति तो जन्म से होती है न? इतने सारे लोग मेरे सामने बैठे हैं, मैं समझता हूँ हम सारे मानव हैं। कोई काले रंग का है, कोई कमजोर है, कोई पुष्ट शरीर का है, कोई अच्छा व्याख्याता है, किसीको बिना चश्मे से भी दिखता है, परन्तु ये मानव हैं। कौन ब्राह्मण है और कौन क्षत्रिय— यह नहीं दीख रहा है। वह तो मरने के बाद ही मालूम पड़ेगा।

मरने के बाद पहचान होगी

गुणों की पहचान मरने के बाद ही होती है। तब तक किसीका कोई मान अपमान नहीं होना चाहिए। लोग हमें मानपत्र देते हैं। हम कहते हैं, हमें पहले मरने दो, उसके बाद जो भी करना है करो। अभी तो हम साधु पुरुष दीखते हैं लेकिन कल अपराधी बन कर रहेंगे तो क्या होगा? इसलिए मरने के बाद ही मालूम होगा कि यह कामी है या सज्जन? मान अपमान के लिए गुण-दोष जानना जरूरी है। अगर कोई ज्ञानी होगा, तप करता होगा, तो वह 'ब्राह्मण' कहा जायगा। शौर्य होगा तो वह 'क्षत्रिय' कहा जायगा। अगर ऐसा कृषिवाला होगा तो शूद्र। घर का कारोबार देखता होगा, सबके लिए सेवा करता होगा, तो वह वैश्य होगा। इस तरह यह फैसला मरने के बाद ही होगा।

सेवा का सही तरीका

अगर हरिजनों को मन्दिर आदि स्थानों में नहीं जाने देते, तो दूसरे भी वहाँ न जायँ, यही उनका तरीका हो सकता है। ये लोग हास्यास्पद हैं, कहें कि मैं भूखा हूँ, इसलिए मैं तुम्हारी दुकान में आता हूँ। मेरी तरह यह हरिजनभाई भी भूखा है। लेकिन तुम उसे खिलाते नहीं। सब लोगों को ऐसा आना चाहिए। हरिजनों को कुँए पर पानी भरने नहीं देते, तो दूसरे लोग भी वहाँ न जायँ।

हरिजन-सेवक-संघ के कार्यकर्ता भी उस कुँए पर न जायँ। जब तक हरिजनों को पानी नहीं मिलता तब तक कार्यकर्ता भी पानी न पियें। एक को बिना पानी के मरने दो। फिर देखो एक बलिदान का क्या परिणाम आता है।

कालीकोट (केरल)
१६-७-२७

शान्ति-सेना का कार्य

: १२ :

हमने केरल के लिए एक छोटा-सा सर्वोदय मण्डल बनाया है। ऐसे मंडल में अच्छे से-अच्छे व्यक्ति आने चाहिए। परन्तु इससे बाहर अच्छे व्यक्ति नहीं होने चाहिए, ऐसा आग्रह नहीं है। हमने समितियाँ तोड़ी हैं तो ऐसे मण्डल क्यों खड़े करते हैं? आखिर थोड़ा व्यवहार करना ही पड़ता है। इसके लिए कुछ श्रद्धा का आधार चाहिए। फिर यह मंडल इस प्रकार का नहीं है कि कुछ लोग चुनते हैं और वे काम चलाते हैं। ये उनके करनेवाले चाहे हैं वह। यह सर्वोदय का कार्य है। इसमें किसीको चुनने न चुनने का सवाल ही नहीं आता। क्या बाबा को यह काम करने के लिए किसीने चुना था? उसके मन में एक विचार आया उसको उठा लिया और काम करने लगा। लोगों ने उसके काम को मान्य किया और मदद देने लगे। इसलिए हमारा यहां भिन्न मण्डल होते हुए भी व्यवहार के लिए यहाँ सर्वोदय मण्डल बनाया गया है।

शान्ति-सेना परिचित क्षेत्र में कारगर होगी

मैं बार-बार कहता हूँ कि सरकार को समाप्त करना है। यह तो मन्त्र जैसी बात है। इसका अर्थ समझना चाहिए। हमारे काम में बीच-बीच में सरकार की मदद मिलेगी। कुछ हम लेंगे भी परन्तु हमें निरंतर यह बात सामने रखनी चाहिए कि सरकार समाप्त करनी है। लोग ही अपने जाता बनें। लोक-राज में बहुत बड़ी बात है डिफेन्स (रक्षण) की। यह नहीं करेंगे तो लोक अनाथ बन जायेंगे। इसलिए स्थान-स्थान पर रक्षण की शक्ति होनी चाहिए। यही शांति

सना की बात है—दूसरी सना से यहाँ दिया सना में, और इसमें फरक है। अनुभवका बगैरह कुछ बातें तो दोनों में समान होंगी परन्तु दूसरी कुछ बातें सर्वथा भिन्न होंगी। दिसक सना दूर जाकर अच्छा काम कर सकती है, क्योंकि वहां गाली खानी पड़ती है। इसलिए परिचय न हो तो ज्यादा अच्छा काम होता है। अंग्रेजों ने सना के दो टुकड़े किये थे। बम्बई में अगर सना की जरूरत होती, तो मद्रास की सना वहाँ जाती क्योंकि अपरिचित जन में सना अच्छा होता है। परन्तु यह अहिंसक सेना परिचय के जन में ही खूब काम कर सकती है। वहाँ लोग सेना की हो वहीं वह शान्ति कायम कर सकती है। यह नहीं कि वहाँ का कोई नागरिक ग्राम में जाय और वहाँ शान्ति-सेना का काम करे। जिनके पास ईश्वर भगवान् के समान नैतिक शक्ति हो वैसे लोग दूसरे स्थान पर जाकर भी सेवा कर सकते हैं। बाकी उस-उस स्थान के लोग ही उस-उस स्थान में सेवा के लिए खड़े होंगे।

शान्ति-सेना का नित्य कार्य सेवा

शान्ति-सैनिकों का काम यही हो कि वे उस-उस स्थान में शान्ति भंग न होने दें। उनका काम प्राकृतिक चिकित्सा के समान है। प्राकृतिक चिकित्सा में रोग न हो इसीका उपाय किया जाता है। इस पर भी रोग हो जाय तो शरीर शुद्धि का इलाज है। इसी तरह अशान्ति न होने देना ही शान्ति सेना का प्रधान रहेगा। शान्ति-सेना नित्य सेवा का काम करेगी परन्तु विशेष अवसर पर वह शान्ति का काम करेगी। हर ग्राम में हमारे सेवक बैठे रहेंगे। उनकी तालीम के लिए हम योजना करते रहेंगे। वे भूदान ग्रामदान साहित्य का प्रचार करेंगे, हस्तकला सिखायेंगे, लोगों को मदद देंगे, रोगियों की सेवा करेंगे। इस प्रकार की तरह-तरह की सेवा का काम उनको रहेगा। लोगों का उन पर विश्वास रहेगा। किसी वक्त के समय वे तुरन्त सेवकों को बुलायेंगे। जनता हमें कभी भी मदद करने के लिए तैयार है, एसा विश्वास लोगों का होना चाहिए।

शहरों की उपेक्षा न की जाय

सर्व पक्षमुक्त और सदा सेवा के लिए तैयार सेवकों की यह कल्पना नयी है। कुछ लोग पक्षों से मुक्त हैं, वे किंचित् सेवा करते हैं, लेकिन शान्ति सैनिक हर सेवा के लिए तैयार रहेंगे। ऐसे १ सेवक यहाँ तैयार करने हैं। उनका निरीक्षण शहरों पर भी होगा। ज्यादातर शहरों में ही झगड़े-बखेड़े हुआ करते हैं। ये एस आर सी के झगड़े सारे-के-सारे शहरों में ही हुए। इसलिए शहरों की उपेक्षा करना हमारे लिए ठीक नहीं। शहरों की भी खूब सेवा होनी चाहिए। वहाँ सम्पत्ति-दान, साहित्य प्रचार जारी रखना चाहिए। उससे लोगों के साथ हमारा सम्पर्क बना रहेगा। शहरों से जो सम्पत्ति दान मिलेगा वह शहरों में ही खर्च नहीं होगा। उसका कुछ भाग वहाँ खर्च होगा परन्तु ज्यादा पैसा गाँवों की सेवा में लगेगा।

कालीकट (केरल)
१२-७-५७

पत्रकारों से : २३ :

पत्रों की जिम्मेवारी

आप सब जानते हैं कि पत्रों पर कितनी बड़ी जिम्मेवारी है। इस समय अखबार बहुत बड़ी ताकत बन रही है। जैसी सरकार और साहित्यिकों की शक्ति होती है वैसी ही पत्रकारों की स्वतन्त्र शक्ति होती है। उसका दुरुपयोग भी हो सकता है और अच्छा उपयोग भी। सत्य सामने रखेंगे, प्रेमपूर्ण वाणी रहेगी तो उससे लाभ ही लाभ होगा। सत्य के बिना प्यार मिथ्या है। सत्य भी प्रेम से और नम्रता से प्रकट होना चाहिए। यह गुण भारतीय संस्कृति का है।

गुलामी में राजनीति का महत्त्व

इन दिनों पोलिटिक्स (राजनीति) को बहुत ज्यादा महत्त्व दिया जाता है।

जब देश स्वतन्त्र नहीं होता, तब राजनीति का महत्त्व होता है। बड़े-बड़े महापुरुष उसमें शामिल होते हैं। गुलाम देश में आजादी की कोशिश करना ही प्रथम धर्म होता है। लोकमान्य तिलक से पूछा गया था कि स्वराज्य के बाद आप कौनसे मिनिस्टर बनेंगे, तो उन्होंने जवाब दिया : मैं तो अध्यापन करूँगा या गणित का प्रोफेसर बनूँगा। उन्होंने पालिटिक्स में अपनी जिन्दगी बितायी, परन्तु समय मिलने पर गीता, अथर्ववेद जैसे ग्रन्थों का वे शोध-कार्य सम्पन्न करते थे। व लाचारी से पालिटिक्स में पड़े थे। वैसे ही महात्मा गांधी का जीवन पालिटिक्स में गया, परन्तु उनका दिल वहाँ नहीं था। उनका दिल समाज-सेवा में, गरीबों के उद्धार में, बहनों के उद्धार में और इसी तरह के सेवा-कार्य में लगा रहता। वे सेवा-कार्य के लिए ही पॉलिटिक्स में पड़े। उन्होंने देखा कि इसके बिना हिन्दुस्तान के कामों का उद्धार नहीं होगा। इसीलिए उन्होंने हिन्दुस्तान के स्वराज्य का काम उठाया और उसके जरिये सारी दुनिया की सेवा की। आखिर स्वराज्य के बाद उन्होंने कांग्रेस को यही सलाह दी थी कि कांग्रेस सेवा-संघ बने। तात्पर्य यह है कि उसे वे सर्वोत्तम सेवा-संस्था बनाना चाहते थे। कई कारणों से यह न हो सकी। इसके लिए मैं किसीको दोष नहीं देता। वह परिस्थिति ही वैसी थी।

स्वराज्य-प्राप्ति के बाद सामाजिक सेवा का महत्त्व

स्वराज्य के बाद क्या हालत है? पालिटिक्स में होड़ होती है, क्योंकि सत्ता हाथ है। आपस-आपस में मत्सर है। स्वराज्य-प्राप्ति के बाद पॉलिटिक्स में त्याग कहाँ है? अब त्याग समाज-सेवा में होता है। पहले कांग्रेस का सदस्य होने के लिए काफी तकलीफ सहन करनी पड़ती थी। आज वह नहीं है। यही हालत सब पार्टियों की है। चाहे कांग्रेसी हो या कोई कम्युनिस्ट। दोनों में झगड़ा होता है। पार्टी के अन्दर-अन्दर भी गुट बनते हैं। द्वेष तथा मत्सर का वातावरण पैदा होता है। इसलिए स्वराज्य के पहले राजनीति में त्याग होता है, परन्तु स्वराज्य के बाद वह त्याग सामाजिक क्षेत्र में आता है। हरिजनों का उद्धार करना होगा, भंगियों की मुक्ति दिलानी होगी, तो उसके लिए त्याग करना

पड़ेगा, विरोध सहन करना पड़ेगा। यह भी हो सकता है कि जो राजनीति में गये हैं, वे भोग नहीं भोगते; जनता के केवल सेवक के नाते रहते हैं। लोगों में काम करनेवाले शुकदेव जैसे हैं। राज्यकर्ता भगवान् विष्णु के समान निर्लिप्त बनें और जन सेवा करनेवाले शंकर भगवान् के समान विरक्त रहें। दोनों आराध्य बन सकते हैं। राजनैतिक सत्ता में त्याग करना पड़ता है परन्तु समाज-सेवा में स्वाभाविक त्याग होता है। त्याग का अधिष्ठान जहाँ होता है वहाँ शक्ति होती है। इसलिए स्वराज्य-प्राप्ति के बाद लोगों का ध्यान सामाजिक सेवा की तरफ जाना चाहिए।

आज अखबारों की क्या हालत है! किसी मिनिस्टर ने कहीं फैक्टरी खोली, थोड़ा भाषण दिया, तो उसे हेड-लाइन्स में अखबार में छापते हैं। मारंक और मारक ने बातें कीं इसकी खबर बड़े टाइप में आती है। यह बिलकुल 'आउट आफ प्रपोर्शन' होता है। इसलिए हमारा नम्र सुझाव है कि थोड़ा 'प्रपोर्शन' रखा जाय। सामाजिक सेवा में जो शक्ति है, वह अखबारों से प्रदर्शित हो।

कालीकोट (केरल)
१२-७-५७

प्रतिरोधी प्रेम की ताकत प्रकट करनी है : १४ :

प्रतिरोधी प्रेम में शक्ति है, अनुरोधी में नहीं

प्रेम का अनुभव मनुष्य को जन्म से मरने तक होता रहता है। यह भी कह सकते हैं कि मनुष्य प्रेम से जन्म पाता है और मरता है, तो प्रेम में ही लीन होता है। मनुष्य को प्रेम का इतना व्यापक अनुभव होते रहने पर भी प्रेम की ताकत नहीं बनती; क्योंकि हमारा प्रेम अनुरोधी होता है। यानी जो हम पर प्रेम करते हैं, उन पर हम प्रेम करते हैं। यह जानवर भी करते हैं। गाय के पास आप हरी घास लेकर जाते हैं तो वह भी प्रेम से पास आती है। गाय में प्रेम की ताकत नहीं है, पर आपका प्रेम देखकर उसमें भी अनुरोधी

कोई शख्स एक कुर्ता माँगता है। देनेवाला कहता है एक कुर्ते से क्या होगा? एक से तो तुम्हारी ठंड नहीं जायगी। इसलिए कुर्ते के साथ यह कोट भी लो। इसको हम आक्रमणकारी प्रेम यानी द्वेष को पचानेवाला प्रेम कहेंगे। यह प्रकट होगा तब ताकत पैदा होगी। भूदान ग्रामदान के काम में इस विचार को समझकर लोग आयेंगे तो इतनी शक्ति प्रकट होगी कि उसका असर सारी दुनिया पर होगा।

हिंसा से मसले हल नहीं होंगे

जो द्वेष करते थे, उनके प्रति व्यक्तिगत जीवन में प्रेम प्रकट किया गया और उन्हें जीता गया। परन्तु सामूहिक या राष्ट्रीय तौर पर प्रेम प्रकट करने का काम नहीं हो पाया है। जब तक हम प्रेम शक्ति से समाज के मसले हल नहीं करेंगे तब तक यह नहीं होगा। अभी तक जो भी मसले हैं, वे हिंसा या सरकार की शक्ति से हल होंगे ऐसा विश्वास है। सरकार की शक्ति यानी उसके पीछे सेना की ही शक्ति होती है। कुल मिलाकर हिंसा से मसले हल होंगे ऐसा ही विश्वास है। परन्तु वस्तुतः हिंसा से मसले हल होते हैं यह अनुभव में नहीं आता। इस पर कहा जाता है कि इसमें हिंसा का दोष नहीं, हमारा ही दोष है क्योंकि जो हिंसा की उससे ज्यादा यह करनी चाहिए थी। किसीने किसी राष्ट्र पर हमला किया और एक हार गया तो हारनेवाला सोचता है, हमारी हार इसलिए हुई कि विरोधी की सेना हमसे ज्यादा थी। वह सेना बढ़ाता है और फिर हमला करता है। उसमें दूसरा हारता है तो वह भी वैसे ही सोचता है। इस तरह सोचते सोचते सेना बढ़ाते चले जाते हैं। एक ने तलवार का उपयोग किया तो दूसरा सोचता है मेरे पास बन्दूक चाहिए। उसने बन्दूक ली तो वह सोचता है, मेरे पास तोप चाहिए। फिर वह कहता है कि बम चाहिए, ताकि हम ऊपर से डाल सकें। इस तरह हरएक एक दूसरे से बढ़कर शस्त्र चाहता है। पर मसला हल नहीं होता। तब सवाल उठता है कि इनका हल कैसे हो? अब सोचा जा रहा है कि समझाने से मसले हल होंगे। लड़ाई नहीं होनी चाहिए, परन्तु ऐसा लगना चाहिए कि अब लड़ाई होने का डर है। इस

प्रकार की 'किंग ऑफ वार पार्टियाँ' आजकल निकली हैं। इससे भी कुछ होनेवाला नहीं है। जहाँ हिंसा-शक्ति सबके हाथ में आ गयी, वहाँ उससे कुछ बननेवाला नहीं है। अब तो जो कुछ भी होगा, वह अहिंसा या प्रेम की शक्ति से होगा।

द्वेष करनेवाले पर प्रेम किया जाय

अब मनुष्य का दिमाग सोच रहा है कि प्रेम से मसले कैसे हल हो सकते हैं। शक्ति अनुरोधी प्रेम में नहीं, प्रतिरोधी प्रेम में होती है। उसकी युक्ति हम ढूँढनी चाहिए। जहाँ-जहाँ द्वेष प्रकट होता हो, वहाँ-वहाँ प्रेम प्रकट करते चले जायँ। हम इसीको धर्म कहते हैं। यही सब धर्मों का सार है। सामने जितना घना अन्धकार हो, उतना हमारे पास उत्तम प्रकाश होना चाहिए। यह समझना कठिन नहीं, परन्तु उसका उपयोग कैसे करें, यह सवाल है। इसलिए हमने शान्ति-सेना की बात रखी है।

सबकी सेवा करनी है

शान्ति सेना यानी निरन्तर सेवा करनेवाली सेना। वह किसी प्रकार का भेद नहीं करेगी। वह सब प्रकार के भेदों को अपने पेट में समेट लेगी। सूर्य किरणें प्रकट होती हैं, तो आकाश के कुछ नक्षत्र विलीन हो जाते हैं। इसी प्रकार हमारे सेवकों के सामने तरह तरह के भेद क्षीण होने चाहिए। अस्पताल में किसी प्रकार का भेद नहीं होता। कोई किसी भी जाति का, धर्म का या पक्ष का हो, सज्जन हो या दुर्जन, उसकी सेवा करते हैं। इतना ही समझते हैं कि यह दुःखी है। यह नहीं सोचते कि अगर यह दुर्जन अच्छा हो जायगा, तो और भी दुराचार करेगा। अस्पताल के लोग दुःखी लोगों की सेवा करना ही अपना कर्तव्य मानते हैं। इस भावना से अस्पताल के सेवक सेवा करते हैं, तो परिणाम अच्छा ही आता है। लोग उन पर विश्वास, श्रद्धा रखते हैं। इसी तरह दुःखियों की निष्काम, निष्पक्ष, निरपेक्ष सेवा करनेवाली एक सेना हमें खड़ी करनी चाहिए। उसका धन्धा ही द्वेष के सामने प्रेम प्रकट करना होगा।

इसके लिए कुछ लोग आगे आयें। बाकी सब लोग मदद करें। हिंसक सेना में सब नहीं जाते। कुछ जाते हैं और बाकी सब मदद देते हैं। वैसे ही द्वेष पर प्रेम का हमला करने के लिए सब तैयार नहीं हो सकते, परन्तु मदद करने के लिए सब तैयार हो सकते हैं। शांति-सैनिकों के हाथ में प्रेम स्नेह का ही शस्त्र रहेगा। जहाँ-जहाँ द्वेष है, वहाँ-वहाँ वे प्रेम से शांति करेंगे और ऐसी सेना की मदद सब करेंगे।

सत्ता से मंगल और अमंगल दोनों होता है

हम हिन्दुस्तान में प्रेम की शक्ति प्रकट करना चाहते हैं। हम उससे यहाँ के मसले हल करते हैं, तो सारी दुनिया का उद्धार होगा। हिंसा हर पक्ष को मदद करती है। विज्ञान के कारण हर किसीके पास वह आ सकती है, इसलिए *हिंसा से मसले हल नहीं होंगे ऐसा भाव आज सबके मन में आ गया है।*

कुछ लोग कहते हैं कि यहाँ राम कृष्ण बुद्ध और इसामसीह हो गये फिर भी प्रेम का अमल नहीं हुआ, तो आज कैसे होगा? उस वक्त नहीं हुआ था क्योंकि उस जमाने में लोगों का मन तैयार नहीं था। आज विज्ञान के कारण लोगों की मनःस्थिति अनुकूल है।

लोग यह भी पूछते हैं कि सत्ता के जरिये मसला हल क्यों नहीं करते? सत्ता के जरिये क्या नहीं हो सकता? सत्ता के जरिये घी पैदा हो सकता है सत्ता के जरिये मैच-बाक्स तैयार हो सकता है और सत्ता के जरिये घी में आग भी लग सकती है। सत्ता के जरिये बड़े-बड़े मकान बन सकते हैं और सत्ता के जरिये ही वे खतम भी किये जा सकते हैं। उत्तम उत्तम लायब्रेरियाँ बनाते हैं और दुनिया की कुछ पुस्तकें वहाँ रखते हैं। यह सारा सत्ता ही करती है परन्तु वही सत्ता एक दूसरे की लायब्रेरी पर ऊपर से बम डालकर उसको खतम भी करती है। इस तरह का धन्धा हमें नहीं चाहिए। हम नयी शक्ति प्रकट करना चाहते हैं जो मंगल ही कर सकती है। सत्ता मंगल भी करती है और अमंगल भी। सत्ता के जरिये कुछ कार्य अच्छे भी होते हैं, इसमें

शक नहीं परन्तु उससे दुनियाभर के मसले हल नहीं हो सकते और वह ताकत पैदा नहीं हो सकती जो दुनिया का उद्धार करे। वह शक्ति ग्रामदान सर्वोदय से ही प्रकट हो रही है।

पुथमंगलम् (केरल)
१९-७-५७

केरल दुनिया पर प्रभाव डाले : १५ :

केरल की यात्रा में हमें अच्छा अनुभव आया। यहाँ के लोगों का दिमाग है। वे विचारों को अच्छी तरह समझते हैं। इस प्रदेश का संबंध दुनिया के साथ पुराने जमाने से रहा है। रोमन साम्राज्य से भी यहाँ का व्यापार चलता रहा। इससे यह स्वाभाविक है कि यहाँ के लोगों की बुद्धि संकुचित न रहे, व्यापक बने। कुल दुनिया की क्या हालत है यह यहाँ के लोग अच्छी तरह समझ सकते हैं।

दुनिया को शांति की भूख

इस समय कोई शख्स अपने प्रान्त या देश का ही सोचेगा तो नहीं चलेगा। जो भी सोचना है दुनिया के लिहाज से सोचना है। दुनिया के विचारों का असर हमारे देश में होगा। इसकी दूसरी बाजू भी है। हमारे विचार भी दूसरे देशों में फैल सकते हैं। दरवाजा खुला है तो जैसे उधर से इधर आता है तो इधर से उधर भी जायगा। इसलिए कुल दुनिया को लक्ष्य में रखकर अगर हम यहाँ काम उठाते हैं तो सारी दुनिया पर उसका प्रभाव पड़ेगा। आज सारी दुनिया के सामने मुख्य समस्या शांति स्थापित करने की है। शायद ही किसी जमाने में आज जैसी शांति की भूख रही हो। जो देश कल तक बिल्कुल हिंसा के विचार में डूबे थे आज वे हिंसा से मुक्ति पाना चाहते हैं। अभी तक शस्त्रास्त्र मानव के हाथ में थे, लेकिन अब मानव ही उनके हाथों

छिड़ गया है। अगर यहाँ भी विश्वयुद्ध की आग भड़क उठे तो उसका निवारण नहीं हो सकेगा। समस्याओं का हल युद्ध से या हिंसा से होगा ऐसी अब मनुष्य को तो आशा नहीं रही। कम-से-कम इतना हुआ है, तो आगे की राह खुल जायगी। अगर शस्त्र से मसले हल नहीं होते तो कोई ऐसा मार्ग निकलना चाहिए कि मसले हल हो सकें। इस प्रकार का मार्ग केरल में निकल सकता है और निकलना चाहिए।

केरल की तरफ दुनिया की आँखें

आज केरल की तरफ दुनिया की दृष्टि लगी है, क्योंकि यहाँ एक ऐसी घटना घटी है, जो दुनिया में कहीं नहीं हुई। जहाँ-जहाँ कम्युनिस्ट सरकार बनी वहाँ खूनी क्रांति हुई। लेकिन यहाँ शांतिमय तरीके से, चुनाव के तरीके से वह बनी। हम समझते हैं कि यह घटना हमारे देश के लिए शोभाप्रद है। यह कैसे हो सका? पहले जो सरकार थी उस पर लोगों का विश्वास नहीं था इस लिए नयी सरकार बनी। यह स्थूल कारण है। उसका मुख्य कारण दूसरा है और उसीमें भारत की ताकत छिपी है।

भारत हर विचार को अपना रंग देता है

भारत दुनिया का कोई भी विचार वैसा-का-वैसा नहीं लेता। अपना संस्कार उस पर डालता है। भारत में ईसाइयत आयी तो वह यूरोप में जाने के पहले आयी। ईसामसीह के जाने के बाद ५ साल के अंदर-अंदर ही वह यहाँ आयी। यूरोप के लोग कहते हैं कि वह यूरोप का धर्म है, परन्तु वास्तव में एशिया का धर्म है, हिन्दुस्तान का धर्म है। यहाँ की ईसाइयत पर भारत का रंग चढ़ा है। इसलिए ईसाइयत का जो तत्त्वज्ञान यूरोप में चलता है उससे भिन्न तत्त्वज्ञान यहाँ की ईसाइयत का है। ईसाइयत जब यूरोप में गयी तब वहाँ की पृष्ठभूमि एक प्रकार की थी और हिन्दुस्तान में आयी, तो यहाँ की पृष्ठभूमि दूसरे प्रकार की थी। ईसाइयत आने के पहले हिन्दुस्तान में अनेकविध दर्शन विकसित हो गये थे। वेद उपनिषद्, भागवत धर्म बौद्ध जैन-विचार और शांकर वगैरह षड्दर्शन इतने विशाल और व्यापक दर्शन की दृष्टि यहाँ थी।

इस्लाम धर्म के यहाँ आने पर सैंट थामस जैसे व्यक्तियों ने भारत के पूर्व दर्शनों का तत्त्वज्ञान का अच्छा अंश ग्रहण किया और यहाँ के हिंदू-धर्म ने इस्लाम का रस ग्रहण किया। इसलिए हिन्दू-धर्म का रूप बदल गया और ईसाइयत का भी रूप बदल गया। यह हिन्दुस्तान की खूबी है। वह सबसार को ग्रहण करता है और उसको अपना रूप देता है। कितने ही इंडियन क्रिश्चियन हमने देखे जो मांसाहार नहीं करते। वे कहते हैं, प्रेम के साथ मांसाहार बैठता ही नहीं। यूरोप में भी मांसाहार छोड़ने की बात चली है। परन्तु यहाँ यह विचार आध्यात्मिक जीवन के लगाव से चल रहा है। ईसाइयों में जो मांसाहार छोड़ा है उस पर यहाँ के दर्शन का असर पड़ा है। इसलिए मैं कहता हूँ कि वेद, उपनिषद् यहाँ के ईसाइयों का ओल्ड टेस्टामेंट है। यही हालत इस्लाम की हुई। जिस तरह का इस्लाम यहाँ है, उससे भिन्न प्रकार का बाहर है। भारत के इस्लाम पर सूफी विचार का प्रभाव है। सूफी विचार वेदांत का ही रूप है। इसीलिए भारत का इस्लाम बाहर के इस्लाम से भिन्न है।

भारत में संवैधानिक कम्युनिज्म

हिन्दुस्तान की यह खूबी ध्यान में रखी जाय, तो दिखाई देगा कि यहाँ जो कम्युनिज्म आया है, उसको भारत अपना रूप दे रहा है। समाजवाद को तो भारत ने आत्मसात् कर लिया है। इसलिए भारतीय समाजवाद यूरोपीय समाजवाद से भिन्न है। भारत का रूप उसको मिल रहा है। यहाँ का समाजवाद अहिंसा पर जितना जोर दे रहा है, उतना यूरोप का नहीं। गांधीजी के जितना अहिंसा को मानते हैं, उतने ही यहाँ के समाजवादी अहिंसा के बारे में बोलते हैं, यह बहुत बड़ी बात है। यही हालत कम्युनिज्म की है। यहाँ का कम्युनिज्म भारतीय कम्युनिज्म होगा। यह वैधानिक तरीके से यहाँ आया है और कम्युनिस्टों ने जाहिर किया है कि हम विधान में रहकर काम करेंगे। उन्होंने यह भी कहा है कि जरूरत पड़े तो हम विधान ही बदलेंगे। यहाँ तो बदल हो सकता है। और यही

कहता कि यह डायरेक्ट का शब्द है। विधान में फरक करने का अधिकार वैधानिक है। इस पर हम कहते हैं कि यह भारत की प्रतिभा है। आज वह विधान की बात करता है परन्तु देखते-देखते हिन्दुस्तान का कम्युनिज्म अहिंसा की भी बात करने लगेगा। यहाँ गरीबी बहुत है। कम्युनिस्टों की तीव्र इच्छा है कि इसका जल्दी निरसन हो। जब तीव्र भावना प्रकट होती है, तब उतावली भी रहती है। इस कारण कभी-कभी हिंसा आ जाती है, परन्तु भारतीय संस्कृति को छोड़कर कोई काम नहीं किया जा सकता।

जन-संपर्क के लिए भजन

हमने तेलंगाना में देखा कि कुछ कम्युनिस्ट लोगों के साथ भजन भी करते थे। हमने उनसे कहा कि "आपका ईश्वर पर कब विश्वास बैठा?" उन्होंने जवाब दिया "ईश्वर-भावना से तो हम भजन में हिस्सा नहीं लेते, परन्तु हमें जनता के लिए प्रेम है। यहाँ की जनता को ईश्वर पर श्रद्धा है। अतः हम जन-सम्पर्क की दृष्टि से ईश्वर का भजन करते हैं।" मैंने कहा : "ईश्वर जनता की मार्फत आपको खींच रहा है।" एक भाई ने हमें बताया कि "मैं जिन लोगों में रहता हूँ, वे सब बीड़ी पीते हैं। मुझे बीड़ी पीना पसन्द नहीं है, परन्तु जन सम्पर्क के लिए मुझे भी बीड़ी पीना पड़ता है। अगर मैं बीड़ी न पीऊँ तो जनता से अलग पड़ जाऊँगा।" ईश्वर कितना भी खराब हो परन्तु वह बीड़ी जितना खराब नहीं है। जन सम्पर्क के लिए बीड़ी पीते हैं तो जन-सम्पर्क के लिए ईश्वर का नाम लेने में क्या नुकसान है? इसीलिए यहाँ का कम्युनिज्म भारतीय कम्युनिज्म बननेवाला है।

केरल में हृदय-परिवर्तन का दर्शन हो

भारतीय कम्युनिज्म याने हृदय परिवर्तन पर विश्वास रखनेवाला कम्युनिज्म। इसलिए केरल में हृदय-परिवर्तन की प्रक्रिया चलेगी तो दुनिया पर उसका असर होगा। हृदय-परिवर्तन पर विश्वास करने के लिए हिन्दुस्तान का कम्युनिज्म बैठ गया है। वे विधान में फरक करना चाहते हैं, तो उनके लिए

उन्हें सबको अपने विचार पर लाना होगा । विचार प्रचार करना होगा । यहाँ हृदय परिवर्तन का विचार है । इसलिए मास्को में कम्युनिस्ट सरकार के एक बड़े मन्त्री ने कहा कि "ग्रामदान अच्छा है, यह होना चाहिए ।" उन्होंने यह भी कहा कि "जमीन की मालकियत मिटाने का काम सरकार नहीं कर सकती ।" हम समझते हैं यह बहुत बड़ी मानसिक तैयारी हो गयी । इस तरह कम्युनिस्टों की मानसिक तैयारी है । इसका मतलब है कि भारत का हृदय अपने ढंग से अपने मसले हल करेगा । किसीने हमसे कहा था कि उसने अपने यहाँ सोयाबीन बोया तो कुछ सालों के बाद उसको भारतीय रंग (यहाँ की दाल का रूप) आया । इसमें कोई आश्चर्य नहीं । जमीन और हवा का असर होता ही है । भारत के आध्यात्मिक विचार की यह विशेषता है कि वह अच्छे विचारों को लेता है और उसको अपना रूप देता है । हम चाहते हैं, केरल में हृदय परिवर्तन की प्रक्रिया चले और यहाँ का मसला हल हो ।

शांति-सेना का सब स्वागत करेंगे

भूमि का मसला मिसाल के तौर पर हमने उठा लिया है, परन्तु असल में हमें हृदय परिवर्तन की प्रक्रिया को बढ़ाना है । उसका साधन है, भूदान । करना यही है कि हिंसात्मक शक्ति ऊपर न उठे । उसके लिए शांति-सेना की योजना है । शांति-सेना में ऐसे सेवक होंगे जो मानेंगे कि हमें अखिल मानव समाज की सेवा करनी है । सब मिलकर भारत का दुःख निवारण करेंगे । उसमें जाति, धर्म, पंथ, पक्ष आदि भेद नहीं रहेगा । शांति-सैनिक नित्य जनसेवा करेगा और नैमित्तिक के तौर पर शांति-कार्य करेगा । हिंसक सेना में आज भी ऐसा ही होता है । जब लड़ाई नहीं होती तब सेना के जरिये कई प्रकार के काम लिये जाते हैं । फैमिन रिलीफ में, खेती में या किसी कठिन प्रसंग पर उनकी मदद ली जाती है । उसी तरह हमारी जो सेना सेवा-कार्य करती थी, वह विशेष मौके पर शान्ति-कार्य करेगी । ऐसी शान्ति-सेना केरल में हो जाय तो सब पक्षवाले उसका स्वागत करेंगे । ईश्वर का स्वागत कौन नहीं करता ? सोशलिस्ट, कम्युनिस्ट, हिन्दू, क्रिश्चियन, मुसलमान हर कोई करेगा ।

इसी तरह शान्ति-सेना का सैनिक भी निष्पक्ष निरपेक्ष सेवक है। उसके जरिये भूमि का मसला हल करने का प्रयत्न करेंगे।

हमारा अनुभव है कि हमारे काम में धर्मों के सब लोग दिलचस्पी लेते हैं। सब धर्मों ने यह माना है कि शान्ति में ही शक्ति होती है। इसलिए हमें आशा है कि उसका दर्शन केरल में होगा। एक प्रदेश में कोई चीज होती है तो वह कुल दुनिया में फैलती है। केरल के कम्युनिज्म का प्रभाव दूसरे देश के कम्युनिज्म पर पड़ सकता है जैसे धर्मों की ईसाइयत, इस्लाम बौद्ध आदि का प्रभाव बाहर पड़ा है; क्योंकि सब धर्मों के लिए, सब पक्षों के लिए बड़े भारी दर्शन की भूमिका यहाँ खड़ी है। उसके आधार पर हम विचार खड़ा कर सकते हैं उसको मानव-धर्म का सर्वोत्तम रूप या कोई भी नाम दे सकते हैं।

कुजुपल्ली (केरल)
१०-७-५७

सर्वोदय-मंडल का कार्य

: १६ :

सर्वोदय मंडल एक नैतिक संस्था है। इसमें अनेक संस्थाओं के प्रतिनिधि आ सकते हैं। ऐसे प्रतिनिधि भी आ सकते हैं, जो किसी संस्था से संबद्ध न हों। आवश्यक इतना ही है कि वे हमारे जो पचविध निष्ठा है, उसे माननेवाले हों। दूसरी संस्थाओं के सदस्य सर्वोदय-मंडल के विचारों को समझकर जितना हो सके अपनी संस्था को सर्वोदय मंडल के अनुरूप बनायेंगे। अगर न बना सके, तो सर्वोदय-मंडल के सामने रखेंगे। मंडल के सदस्य अपनी राय समाज के सामने पेश कर सकते हैं। मानना या न मानना समाज की मर्जी पर है। सरकार के काम के बारे में भी वे अपना मत व्यक्त करेंगे, लेकिन स्वीकार करना या नहीं यह सरकार की मर्जी की बात है। इसी तरह गाँव-गाँव में भी सर्वोदय मंडल बन सकते हैं। हर सर्वोदय-मंडल अपने सम्मति बनाकर स्वतन्त्र काम कर सकता है। वे सम्प्रदाय जाति, धर्म पक्ष से निरपेक्ष होने चाहिए।

सर्वोदय-मंडल और संपत्तिदान

संपत्तिदान के द्वारा रकम जमा करने में सर्वोदय-मंडल की मदद होगी। जो या बड़े दाता रकम स्वयं खर्च नहीं कर सकते और जिनके दाता रकम अपने पास नहीं रख सकता। ऐसी परिस्थिति में सर्वोदय-मंडल यह जिम्मेदारी उठा सकता है। सारे प्रदेश में व्यापक सेवा-सेना और शांति-सेना खड़ी करना सर्वोदय मंडल का मुख्य काम रहेगा। शांति-सेना के सैनिक को वेतन देने की जिम्मेदारी उसकी नहीं रहेगी। शांति-सेना के हरएक सैनिक को वेतन होना चाहिए, ऐसा नहीं। वह अपने घर का काम कर भी काम कर सकता है। परन्तु अगर वैसा न होता हो तो फिर संपत्तिदान-द्वारा या मित्रों के जरिये इंतजाम होना चाहिए। ग्रामदान के गाँव में ठीक काम चले, इसके लिए सर्वोदय मंडल कोशिश करेगा परन्तु वह स्वयं वहाँ काम नहीं कर सकेगा। बल्कि जिन व्यक्तियों या संस्थाओं से वहाँ काम हो सकता है उन-उन व्यक्तियों और सरकार, संघ, सेवा संघ, खादी-बोर्ड, ग्राम-पंचायत आदि संस्थाओं के माध्यम से वहाँ काम करेगा।

सर्वोदय-मंडल की जिम्मेदारी

सेवक के इस कोने से उस कोने तक इतनी व्यापक सेवा-सेना खड़ी करने की जिम्मेदारी सर्वोदय मंडल पर आती है। सेवक सर्वोदय-मंडल से सहायता मांगेगा तो सर्वोदय मंडल उसको देगा फिर भी सेवक स्वतन्त्र रहेगा। उसको यदि अपने अपने क्षेत्र में खड़ा करना हो तो वह उसकी स्वतन्त्र जिम्मेदारी होगी। सर्वोदय मंडल उसके क्षेत्र की जानकारी हासिल करेगा और उसके परिणामों का विचार करेगा। इसके साथ ही सेवक कोई गलत काम करेगा तो उस पर सुधारने की भी कोशिश करेगा। अगर इतना गलत काम हो कि वहां मंडल का रहना ही उचित न होता हो तो मंडल वैसी भी अपनी राय प्रकट करेगा।

शान्ति-सेना का अस्तित्व लोगों को मालूम न हो यह उसका प्रथम लक्षण है। किसी राजनैतिक पार्टी का भी उसका पक्ष नहीं होना चाहिए। फिर भी किसीको

मत मालूम होता हो तो उसको यह प्रतीति करानी चाहिए कि हमारी वृत्ति उससे अभिन्न है हम निरपेक्ष सेवा करनेवाले हैं किसी एक पार्टी में पड़नेवाले नहीं हैं। हम तो सर्वोदय-कार्य को बढ़ाने का प्रयत्न करनेवाले हैं।

सर्वोदय-मंडल की कार्य-पद्धति

सर्वोदय-मंडल में किसी विषय पर जो निर्णय किये जायँगे, वे सर्वसम्मति से ही किये जायँगे। सभा के लिए सब हाजिर रहें, यह आग्रह नहीं रहेगा। कितने लोग कम-से-कम हाजिर रहने चाहिए, यह सभासद ही तय करेंगे। आपस के लोगों का परस्पर विश्वास कितना है यह जानकर काम चलाया जायगा। समाज के लिए या सरकार के लिए कुछ विशेष विचार प्रकट करना हो तो उस विषय की सम्मति सभा में लेनी होगी। सभा में सब न आ सकें, तो पत्र-व्यवहार से भी उनकी सम्मति ले सकते हैं। सबकी सम्मति होना आवश्यक है। सर्वोदय मंडल का कोई सदस्य किसी विचार को पसंद नहीं करता, तो वह अपना मत व्यक्त कर सकता है। अगर सिद्धांत या नीति का विरोध मालूम हो, तो वहाँ कोई भी सदस्य वीटो कर सकता है। समझाने पर भी वह अपना आग्रह रखे तो वह प्रश्न छोड़ देना होगा। जितने करने लायक काम हैं उतने काम सर्वोदय-मंडल को करने हैं। परन्तु प्रत्यक्ष कार्य के बजाय कार्य कराने की शक्ति सर्वोदय मंडल में होनी चाहिए।

सर्वोदय-मंडल और शांति-सैनिक

प्रश्न : लोक-सेवक और शांति सैनिक में फर्क क्या है ?

उत्तर : सत्याग्रही लोकसेवक की कल्पना सीमित थी। जैसे सेवक ज्यादा मिलेंगे यह कल्पना हमें नहीं थी। लगा था कि थोड़े से निष्ठावान निश्चित सेवक मिल जायँगे और वे गिने-गिने के निदेशक बनेंगे। अब यह कल्पना विशाल हो गयी है। शांति-सेना अलग चीज है। सेवा-सेना के ही सैनिक उसमें रहेंगे, परन्तु सत्याग्रही लोक-सेवकों की पवित्र निष्ठा के अलावा उनको सर्वोदय मंडल का नैतिक आदेश मानना होगा। मान लो आप शांति-सेना के सैनिक हैं। किसी एक क्षेत्र में काम भी करते हैं परन्तु सर्वोदय-मंडल का

आदेश मिला कि आपको दूसरे किसी क्षेत्र में जाना है, तो वह आदेश आपको मान्य होगा। लेकिन ऐसा सैनिक उसे मानने के लिए बाध्य नहीं हो सकता। साधारणतया शांति-सैनिक अपने परिचित क्षेत्र में ही रहेगा फिर भी मानो कनाडा के सर्वोदय मंडल ने आपसे पाँच सौ सैनिकों की मदद माँगी। उस हालत में आपको भेजना पड़ेगा और वहाँ के सर्वोदय मंडल का आदेश होता है, तो जाना ही पड़ेगा। आखिर वह सेवा निष्फल भी हो परन्तु जाना पड़ेगा।

यह शांति-सेना अगर कामियाब साबित हुई तो हम सरकार से कहेंगे कि हमारे गाँव के लिए सुव्यवस्था के नाम से जो खर्च करते हो, वह खर्च करने की जरूरत नहीं है। उतना हमें दे दो। तो गाँवों में चोरी, दंगा, झगड़ा नहीं होगा और उससे सरकार को समाधान है, तो हम सरकार से कह सकेंगे कि हमको स्टेट पुलिस की या सरकारी सेना की जरूरत नहीं। परन्तु सरकारी रिपोर्ट में यह आना चाहिए कि अमुक १ गाँवों के लोगों ने अपनी योजना अच्छी बना ली है और वहाँ स्टेट की जरूरत नहीं। ऐसे भाव से और उम्मीद से आप काम कीजिये।

शांति-सेना के लिए अनुशासन आवश्यक

प्रश्न : क्या शांति-सेना के सैनिकों के लिए खास गणवेश और कवायद आदि का भी इन्तजाम किया जा सकता है?

उत्तर : सर्वसाधारण लिबास में रहना ही अच्छा है। विशेष वेश अगर हमारे सेवक पहनेंगे तो जिनकी सेवा करनी है, उन पर विरुद्ध प्रतिक्रिया होगी। वे अलग समझे जायँगे। सैनिकों को समाज से अलग नहीं पड़ना चाहिए। सैनिक तो ऐसे होने चाहिए कि जब चाहे तब लोग उनकी सेवा की माँग निःसंकोच कर सकें। इस दृष्टि से अगर विशिष्ट लिबास करने में बाधा आती हो, तो न करना ही अच्छा है। मुख्य बात यही है कि सैनिक समाज से अलग न पड़ें। अनुशासन के ख्याल से कवायद कर सकते हैं। शांति-सैनिकों के लिए अनुशासन आवश्यक है। गाँव में किसी घर को आग लगती है, तो दौड़कर बहुत-से लोग जाते हैं। परन्तु उसकी ही भीड़ हो जाती है। आग बुझाने का ही काम

व्यवस्थित किया जाय, तो थोड़े समय में ही आग बुझ सकती है। इसीलिए शांति-सेना के लिए अनुशासन जरूरी है। वैसे ही उनको सुन्दर-सुन्दर भजन आने चाहिए। मानो कहीं दंगा हो रहा है तो ये सैनिक वहाँ जाकर शांति से भजन गाते हैं।

हर सदस्य को वीटो का हक

प्रश्न : एकमत से निर्णय लेने पर क्या हरएक व्यक्ति को वीटो का अधिकार नहीं मिल जायगा ?

उत्तर : सर्वोदय मंडल के सामने एक कार्य की योजना है। कोई सदस्य उसके विरोध में है, तो ऐसी हालत में वह योजना अमल में नहीं आ सकेगी। एक व्यक्ति को भी अपना वीटो चलाने का अधिकार है। इसीलिए यहाँ पार्टी की या बहुमत की जरूरत नहीं है। ऐसी आपत्ति बार-बार आये, तो गाँव का कारोबार कैसे चलेगा ? क्या गाँव के पास सत्याग्रह की शक्ति नहीं है ? आपका बहुमत होकर भी वह आपके विरोध में अकेला खड़ा है, क्योंकि वह मानता है कि आप जो करने जा रहे हैं, वह गलत है, नीति के खिलाफ है। इस तरह से सत्याग्रह की शक्ति, सारे समाज के खिलाफ जीने की शक्ति इसमें है।

कालडी (केरल) —सर्वोदय-मंडल के सदस्यों के बीच
११-७-५७

सन् '५७ के बाद क्या ? : १७ :

सन् '५७ के बाद का कार्यक्रम

प्रश्न : पाँच करोड़ एकड़ जमीन सन् '५७ के अंत तक नहीं मिली, तो अगला कदम क्या होगा ?

उत्तर : सन् ५७ के अंत तक प्रयत्न करने के बाद आगे सोचना चाहिए। जब हम पर्वत पर चढ़ते हैं तो मालूम होता है कि सामनेवाले शिखर पर चढ़ने से हम पर्वत के शिखर पर पहुँचेंगे। परन्तु आगे बढ़ते हैं तो लगता है,

आगे एक और शिखर है। आगे जाते हैं तो फिर मालूम होता है और भी आगे शिखर है। आगे एक एक पर्वत चढ़ना पड़ता है। इसलिए उसको पर्वत कहते हैं। सन् ५७ के अंत तक एक पर्वत चढ़ गए, फिर आगे का सोचा जाय।

हमने सन् ५७ के अंत के पहले ही ग्रामदान कदम सोच लिया। वह खयाल ही हमारे सामने आया। ज्यादा सोचना भी नहीं पड़ा। हमने तय किया कि हम ग्रामदान का संदेश ही फैलायेंगे। व्यक्तिगत मालिकी छोड़ने की प्रेरणा देंगे तो ४ करोड़ एकड़ भूमि हाथ में आ जायगी। पाँच करोड़ तो उसका हिस्सा है। इसलिए कुल गाँवों का ग्रामदान और लोग 'सहकारी पद्धति से काम करायें', यह असामान्य कदम हमने लोगों के सामने रखा। अभी तक ४०-४५ लाख एकड़ जमीन मिली है। उसमें से यह युक्ति स्वाभाविक रूप से हाथ में आयी। कई लोगों को भूदान से ग्रामदान आसान मालूम हुआ। ग्रामदान मिलने लगे। हवा तैयार होने लगी। व्यक्तिगत दान परिवर्तन के साथ-साथ सामाजिक हवा तैयार हो गयी। एक राह खुल गयी और यह एक नया दर्शन सन् '५७ के अंत के पहले ही हुआ। यह इस कार्य की सफलता का लक्षण है।

तपस्या के बिना दर्शन नहीं

अब यह पूछा जा सकता है कि ग्रामदान का काम नहीं होगा तो क्या किया जायगा? यह सवाल पूछना आलस्य का लक्षण है। अभी-अभी जिसकी शादी हुई है उसका पति मरेगा तो क्या किया जायगा, यह कभी पत्नी सोचती है? हमें श्रद्धा से प्रयत्न करना है। उसके बाद ही अगला कदम सूझेगा। घर में बैठे-बैठे चिन्तन या ध्यान से मनन शुरू करने लगेंगे तो विचार नहीं सूझेगा। पुराण की कथा है, परमेश्वर ने ब्रह्मदेव को आज्ञा दी कि तुम सृष्टि की रचना करो। उसके पास दुनिया को बनाने का मसाला नहीं था। वह बैठ गया और सोचने लगा। खूब ध्यान चिन्तन किया। आखिर घबड़ाने लगा तब उसने तप किया। उसके बाद उसको सूझा। उसका एक सुन्दर मन्त्र वेद में आता है – ऋतं च सत्यं चाभीद्धात् तपसोऽध्यजायत। प्रखर तपस्या से ऋत और सत्य का ध्यान हुआ। फिर सृष्टि उत्पन्न करने का मार्ग खुल गया। इसलिए

प्रखर तपस्या के बिना कार्य नहीं होगा। पर्वत के नीचे खड़े हैं और चर्चा चल रही है कि पर्वत के ऊपर से कैसा दीखेगा ! नीचे से ही आँख खोल-खोलकर देख रहे हैं। सामने तो पेड़ ही पेड़ दीखते हैं। ऊपर जायेंगे तभी न पर्वत के ऊपर का दृश्य दीखेगा ! भूदान के बाद का कदम तो पहले ही मिल गया है।

स्वप्न की बीमारी की दवा : जागना

प्रश्न : आपको ऐसा नहीं लगता कि आज की हालत में अपने देश की राजनीति में दलों का होना आवश्यक है ?

उत्तर : एक मनुष्य सोया हुआ था। उसने स्वप्न देखा। स्वप्न में ही उसको बीमारी हुई। वह औषध, डॉक्टर का इन्तजाम करने की तैयारी में लगा। परिणामतः स्वप्न लम्बा हो गया। इसके बदले अगर वह जाग जाता, तो स्वप्न खतम और बीमारी भी खतम। बाबा स्वप्न में नहीं है। वह जागता है। और जो सब स्वप्न में हैं, बाबा उनको जगाने की कोशिश करता है। स्वप्न को जितनी जल्दी पहचानोगे, उतनी जल्दी बीमारी दूर होगी। जब तक स्वप्न को नहीं पहचानोगे तब तक पार्टी से मुक्ति नहीं है। हम कहते हैं जितना जल्दी हो सके, उतनी जल्दी पहचानो। अंग्रेजी में कहावत है 'यू मे ऐक्ट लाइक फूल बट डू नाट थिंक लाइक फूल्स'। आपको मूरख के समान बर्ताव करना है तो करो परन्तु मूरख के समान सोचो मत। यह मत सोचो कि पार्टी से लाभ है। विचार समझने पर उस पर अमल होगा। इसलिए राजनीति से जितने जल्दी देश मुक्त होगा उतने जल्दी वह सुखी होगा।

जब तक यह पार्टी प्रथा मौजूद है, तब तक कुछ लोग ऐसे चाहिए, जो सब पार्टियों से भिन्न रहें। ऐसा माना जाता है कि विरोधी पार्टी सुधारक होती है परन्तु वह पूर्ण रूप से सुधारक नहीं होती। वह भी सत्ता चाहती है। दोनों के मन में द्वेष मत्सर होता है। इसलिए पार्टियों से अलग ऐसा एक समूह चाहिए, जिसका दोनों पार्टियों पर नैतिक प्रभाव हो।

चलीकोटी (केरल)
२१-७-५७

सरकार पर सारा दारोमदार

देश का कारोबार, देश की रक्षा आदि सारे काम आज सरकार करती है। यह सरकार किसी न किसी पक्ष की होती है। पाँच साल के बाद उसको बदल सकते हैं। आज जैसे देश में तो सरकार बन ही नहीं पाती। यहाँ ४-५ महीने में ही सरकार बदलती है। इसका कुछ अनुभव आपको इस प्रदेश (केरल) में आया है। जैसे-जैसे पक्षगत राजनीति बढ़ेगी वैसे वैसे आपका अनुभव बढ़ेगा। अनेक पार्टियाँ खड़ी होती हैं, एक के सिद्धान्त से दूसरे के सिद्धान्त की टक्कर होती है और परिणाम यह आता है कि लोगों में झगड़े पैदा होते हैं। उस हालत में लोग कभी इस पार्टी को चुनते हैं, कभी उस पार्टी को चुनते हैं। कभी यह भी होता है कि जिसके हाथ में सेना हो वह सत्ता ले लेता है। सेना का कमांडर इन-चीफ लोकप्रिय है, मन्त्रि-मंडल कमजोर है, लोगों में दलीय राजनीति के झगड़े हैं, तो वह अपने हाथ में सत्ता ले लेता है, जैसा मिस्र में नासिर ने किया। लोकशाही में और दिक्कत भी सामने आ सकती है। कभी किसीका जादू चल जाय तो बार-बार लोग उसीको चुनते हैं। प्रेसिडेण्ट रूजवेल्ट चार दफा चुनकर आये। वे मरते नहीं तो पाँचवीं बार भी चुनकर आते; क्योंकि उनका जादू चल गया था। इसलिए दलीय राजनीति के जरिये जो लोक-रक्षा होती है, वह भ्रमात्मक है। लोग असहाय हो रह जाते हैं। अपनी रक्षा हम स्वयं कर सकते हैं, यह हिम्मत उनमें नहीं आती।

मालिक स्वयं कुछ नहीं करता

हम अपनी रक्षा नहीं कर सकते, हम न्याय नहीं दे सकते, हम अपना कारोबार नहीं चला सकते। जो भी कुछ करना है वह सब हमारे प्रतिनिधि

करेंगे" यह भी कोई बात है। हम मालिक हैं और प्रतिनिधि हमारे नौकर हैं। क्या नौकर ही सब कुछ कर सकते हैं, मैं स्वयं कुछ कर नहीं सकता? मुझे प्यास लगी है लेकिन मैं पानी नहीं पीता। नौकर यहाँ नहीं होगा, तो १५ मिनट ठहरूँगा। वह आयेगा, मुझे पानी देगा और मैं पीऊँगा। वह ऐसे ही बार-बार देरी करेगा तो उसको निकालकर दूसरा नौकर रख लूँगा, क्योंकि मैं मालिक हूँ, पानी पीने की ताकत मुझमें नहीं है—क्या यह ठीक है?

हम केवल नाममात्र के मालिक हैं, वास्तव में गुलाम हैं। जैसे दरिद्र लड़की का नाम लक्ष्मी और बेवकूफ लड़की का नाम सरस्वती, विद्या, वैसे ही डेमाक्रेसी के नाम पर जनता अपने नौकर चुनती है, अपने हाथों से पानी पीने का अधिकार उसको नहीं है। लोग स्वयं उठ खड़े नहीं हो सकते, मटके के पास नहीं जा सकते, ढक्कन नहीं हटा सकते, लोटा मटके में नहीं डाल सकते, पानी नहीं निकाल सकते और वह पी नहीं सकते। नौकर की राह देखेंगे, वह आयेगा और पानी देगा। यह हालत कुछ देशों की ही नहीं, कुल दुनिया की है।

जनता स्वयं कारोबार चलाये

हम चाहते हैं कि आपके प्रतिनिधि थोड़ा काम करें, परन्तु आपकी रक्षा आपका कारोबार आप स्वयं करें। स्वयं आपकी सत्ता लोगों की सत्ता हम चाहते हैं। उनके साथ आपके प्रतिनिधि भी रहें। ऐसे भी कुछ काम होते हैं जो कुल देश को जोड़ते हैं तो वैसे काम वे करें। परन्तु हमारे गाँव का कारोबार हम चलायें। हम चाहते हैं तालीम की योजना करें, जमीन का बँटवारा करें और सब मिलकर काम करें। आज यह सब मिनिस्टर करते हैं। अगर आप यह सब करने लगेंगे, तो आपकी बुद्धि का विकास होगा, आपकी सत्ता बढ़ेगी और आपका अपने प्रतिनिधियों पर अंकुश रहेगा।

नाममात्र की डेमोक्रेसी

आज क्या हालत है? आप अपना कारोबार चलाते नहीं और चला सकते हैं ऐसा विश्वास भी नहीं है। इसी कारण नौकरों पर आपकी सत्ता नहीं।

मिलता, दासता ही रहता है। स्टेट के जितने प्रकार हैं राजसत्ता लोकसत्ता वेलफेयर स्टेट कम्युनिज्म—सारे-के-सारे यही सोचते हैं कि लोगों पर अपनी सत्ता कैसे चले। हरएक की भाषा अलग-अलग है परन्तु अर्थ एक ही है। वे कहते हैं आप काम नहीं कर सकते हम ही आपके लिए काम करेंगे। हम आपके नौकर हैं आपके प्रतिनिधि हैं और आपका सिर आपका ही है, आपकी ही सम्मति से हम यह पत्थर आपके सिर पर रखेंगे। भविष्य में यह पत्थर नहीं होगा, इसके बदले लड्डू रहेगा, ताकि भूख लगे तो जब चाहे तब खा सके।

सर्वोदय-मंडल की भूमिका

शान्ति-सेना सर्वोदय, ग्रामदान इन सबका आशय यही है कि आपको अपना कारोबार अपने हाथ में लेना है। अब तो हम पार्टी बनाकर अपने पर सत्ता लाद लेते हैं खुद कुछ नहीं करते। हमें पार्टियों से मुक्त होना है। यहाँ इस काम के लिए सर्वोदय-समाज बना देंगे ऐसा पार्टीवाले ही कहते हैं। पर सर्वोदय मंडल करेगा, आपको ही बनाना है। भगवान् ने गीता में कहा है 'उद्धरेदात्मनात्मानम्'—स्वयं हमें हमारा उद्धार करना चाहिए। इसीलिए सर्वोदय मददगार बनेंगे। यह आप कर सकते हैं आपको ही करना है। हम आपको मदद दे सकते हैं यथा करके कुछ रुपया आप चाहें तो देंगे। इसीके लिए हम संपत्ति-दान लेते हैं। हम अपने हाथ में नहीं लेते। दाता ही स्वयं खर्च करता है। अगर वह नहीं कर सकता तो प्रतिनिधि के तौर पर सर्वोदय मंडल करेगा परन्तु कोशिश यह होगी कि दाता ही उसे खर्च करे।

सरकार को सबकी सम्मति हासिल है

सरकार सेना रखती है। उसके पीछे आपकी सम्मति होती है। आपमें से हरएक ने उसके लिए मदद दी है। मान लीजिये, दो सौ चार सौ करोड़ का खर्च सेना पर होता है तो आप सब दे रहे हैं। गरीब आदमी भी दे रहा है क्योंकि वह कपड़ा पहनता है तो कपड़े पर टैक्स लगता है। पोस्टकार्ड लिखता है तो उस पर टैक्स लगता है। ट्रेन में भी बैठता है तो उस पर भी टैक्स लगता है। आप सब टैक्स दे रहे हैं। टैक्स याने आपकी सम्मति। सरकार चाहे वह भी

करे, उसको आपकी सम्मति है। सरकार सेना रखती है तो उसके लिए भी आपकी सम्मति है। इस तरह सब लोगों की सम्मति ही एक शक्ति है।

शांति-सेना के लिए घर-घर से सम्मति-दान

हम चाहते हैं गाँव गाँव के लोग अपने लिए शांति सेना तैयार करें। नित्य सेवा करने के लिए सेवा-सेना होगी परन्तु रक्षण करने के लिए भी शांति-सेना बनेगी। शांति-सेना की ताकत रहेगी सब लोगों की सम्मति। ताकत तब तक नहीं बनेगी जब तक आप उनकी सम्मति उनको नहीं मिलती। इसलिए हम चाहते हैं कि हर घर से 'सम्मति-दान' मिले। शांति-सेना का कार्य सम्पत्ति दान से चलेगा परन्तु उसकी ताकत बनेगी सम्मति-दान से। गोवर्धन पर्वत की कहानी है न! भगवान् ने कहा था मैं पर्वत उठा सकता हूँ, उठा भी लूँगा परन्तु उससे आपकी ताकत नहीं बनेगी। इसलिए गोकुल के बच्चे बूढ़े, भाई बहन सबने मिलकर गोवर्धन को उठाया। फिर भगवान् ने अपनी एक उँगली लगायी। इसका अर्थ यह हुआ कि सब हाथ नहीं लगाते, तो ताकत न बनती।

हर घर से एक मुट्ठी

शांति सेना की ताकत बढ़नी चाहिए। उसके लिए आपको हर घर में जितने लोग हैं उनकी तरफ से सम्मति-दान के तौर पर कुछ देना होगा। सम्पत्ति-दान तो अवश्य [illegible] मदद है परन्तु अब हमने सुझाया है कि पैसे के बदले अन्न दो। हर महीने न पाँच मनुष्य के घर से रुपये की एक मुट्ठी मिलनी चाहिए। उसका कीमत [illegible] नये पैसे होगी। हम पैसे नहीं चाहते, चीज मले पैसे का अन्न [illegible]। अगर यह बात होगी तो बहुत बड़ी शक्ति होगी। घर घर में [illegible] दान [illegible]। बूढ़ा और बीमार भी एक मुट्ठी दे सकता है। इस तरह [illegible] सम्मति मिलेगी। एक मुट्ठी से शांति सेना को [illegible] मदद मिलेगी सम्पत्ति-दान से, परन्तु [illegible]। इसलिए हर घर से सम्मति मिलनी चाहिए।

मेमनकप्पु (करल)
२१ [illegible] ४

लड़ाई के कारणों का निर्मूलन

प्रश्न : लड़ाई के समय शान्ति-सेना सशस्त्र सेना के सामने क्या करेगी ?

उत्तर : रोज लड़ाई नहीं होती या रोज झगड़े भी नहीं होते। फिर भी शान्ति-सेना को रोज २४ घंटे काम करना होगा। यह सेना होगी हमेशा के लिए, पर विशेष प्रसंग में यह शान्ति-सेना का काम करेगी। इसलिए एक कायम की सेवा-सेना लोग नहीं करेंगे। परिणामस्वरूप देश की सेवा होगी। यह गरीबों की मदद देगी, अमीरों के सामने गरीबों का दुःख प्रकट करेगी, उनकी सहानुभूति हासिल करेगी, जमीन की मालिकियत मिटाने की कोशिश करेगी, बीमारों की सेवा करेगी, गाँव का उत्पादन बढ़ाने की कोशिश करेगी और ग्रामीण की योजना करेगी। इस तरह शान्ति-सेना गाँव की सेवा करेगी तो गाँव में अशान्ति नहीं होगी। याने अशांति के जो भी कारण हैं उनका निर्मूलन करना शांति-सेना का काम होगा। विषमता, निष्ठुरता, मालकियत की भावना, मेरा-तेरा, ऊँच-नीचता, जातिभेद, धर्मभेद और इनके झगड़े—ये सब अशांति के लिए कारण हैं। कुछ आर्थिक, कुछ सामाजिक और कुछ धार्मिक भी कारण होते हैं। परन्तु आजकल इनमें एक 'पार्टी पालिटिक्स' भी दाखिल हो गया है। जब इन कारणों का निर्मूलन कर देश की समग्र शक्ति से हल करेगी। परिणाम यह होगा कि देश की चित्त शुद्धि होगी और आपस में स्नेहभाव बढ़ेगा। उस हालत में सरकार का भी बोझ पर बहुत बढ़ना नहीं होगा। आन्तरिक व्यवस्था के लिए भी बहुत ज्यादा खर्च नहीं करना पड़ेगा। देश की नैतिक शक्ति बढ़ेगी, जिसका अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में भी उसका प्रभाव पड़ेगा।

अभी हम आर. गी. के मामले में बंबई में देखे हुए। सरकार ने गोलियाँ चलाईं। सैकड़ों लोग मारे गये। [illegible] ने भी बहुत बुरे काम किये। शासन

युद्ध नहीं हुआ, लेकिन हिंदुस्तान की बेइज्जती सारी दुनिया में हुई। दुनियावाले कहने लगे कि ये लोग शांति की बात करते हैं, परन्तु इनके अंदर ही दंगे होते हैं और गोलियाँ चलती हैं। ऐसी घटनाओं से देश की ताकत घटती है। शांति-सेना के सैनिक हमेशा सेवा करते रहेंगे और अशांति के जो भी कारण हैं, उनका निर्मूलन करेंगे। इस कारण जनता के हृदय में उनके लिए प्रेम रहेगा। जहाँ भी प्रसंग होगा, वहाँ प्रेम के कारण शांति होगी। अगर जोश ज्यादा हुआ, तो शांति सैनिक अपना बलिदान भी देगा। इस तरह की सेना बनेगी, तो वह युद्ध को रोकेगी।

शांति-सेना का शस्त्र : सेवा

शांति-सेना लड़ाई के मौके पर क्या करेगी? आक्रमणकारियों के हाथों में तो बन्दूकें रहेंगी, परन्तु शान्ति-सैनिकों के हाथ में क्या? क्या इनके चेहरे देखकर शत्रु भाग जायगा? इनके हाथ में भी शस्त्र चाहिए। वह शस्त्र कौन-सा होगा? उनकी जो सेवा होगी, वही उनका शस्त्र होगा। इसलिए अगर सैनिक सेवाविहीन रहते हैं, तो वे शस्त्रविहीन बन जाते हैं। आयुध रहित सैन्य बेकार है। शांति-सेना आयुध रहित नहीं रहेगी। वह अद्भुत तीक्ष्ण शस्त्रधारी रहेगी। प्रेम से निरंतर सेवा करती रहेगी, तो दया और करुणा में उसकी इज्जत बढ़ेगी।

आज दुनिया में क्या चल रहा है, जरा सोचो। दुनिया का विवेक जागृत हुआ है। अभी आपने सुना कि ब्रिटेन ने मिस्र पर हमला किया। दुनिया के सारे देशों में उसके विरुद्ध अभिप्राय प्रकट हुए। इंग्लैंड की जनता भी विरोध में खड़ी हुई। आखिर दुनिया ने ब्रिटेन को अपना कदम वापस लेना पड़ा, क्योंकि दुनिया की नैतिक भावना का प्रश्न खड़ा हो गया है। आज कोई भी देश किसी देश पर एकदम हमला नहीं करेगा, क्योंकि दुनिया की नैतिक भावना जाग उठी है। इस हालत में जिस देश में शांति-सेना है, उस देश में अंदर से समाधान होगा और उसकी नैतिक शक्ति बढ़ी होगी।

फायदा कैसे हो?

प्रश्न : यहाँ जो जमीन मालिक और पैसेवाले अपना बहुत थोड़ा सा हिस्सा देते हैं। इससे प्रश्न हल कैसे होगा

उत्तर : बड़े लोग भी जमीन देते हैं परन्तु थोड़ी देते हैं। बात ऐसी है कि बच्चा पहले बोलता नहीं। बाद में पापा बाबा, मामा माता बोलने लगता है। माता पिता को आनन्द होता है और वे कुतूहल से सुनते हैं। यह नहीं कहते कि यह क्या करता है? व्याख्यान क्यों नहीं देता? इसी तरह सीखते सीखते वह एक बड़ा वक्ता बन जाता है। इसी तरह मैं कहता हूँ। शुभ आरम्भ तो होने दो। आज तक हाथों को छीनने की ही आदत पड़ी थी अब धीरे-धीरे देने की आदत पड़ रही है। पहले हम थोड़ा हिस्सा माँगते थे परंतु अब तो सर्वस्व समर्पण करने की बात चली है। अब मालकियत विसर्जन की ही बात है। लेकिन इसके लिए कुछ धैर्य रखना पड़ेगा। सब लोगों में उत्साह आना चाहिए। साहित्यिक यह विचार समझकर इस पर ग्रंथ लिखें। फिर सब मन में संकल्प करें। वह संकल्प वाणी में प्रकट होगा और बाद में उसके अनुकूल कृति होगी।

जीवन-दानी की परिभाषा

प्रश्न : जीवनदान का मतलब क्या है? जीवनदानी कौन है?

उत्तर : आजकल हम किसीको जीवनदान देने के लिए नहीं कहते। हम तो कहते हैं कि आप अपना ज्यादा-से ज्यादा समय इस काम के लिए दे दो। फिर आपको उसमें रस मालूम होगा आप भक्त बन जायँगे। भक्तों को भक्ति के बिना कुछ सूझता नहीं वैसे ही सामाजिक कार्य करनेवाले को समाज-सेवा के बिना सूझता नहीं। आपने बाबा को देखा होगा उसको दूसरा कुछ भी सूझता नहीं। एक ही काम में लग गया है। इसी तरह आपका जीवन पूर्णतया तन्मय हो जायगा। काया वाचा मन से इसी काम में लगे रहेंगे। महाभारत में व्यास भगवान् ने कहा है :

> सर्वेषां यः सुहृन्नित्यं सर्वेषां च हिते रतः।
> कर्मणा मनसा वाचा स धर्मं वेद जाजले ॥

— कर्मणा मनसा वाचा जो सबका सुहृद् है और जो सबके हित में रत है उसीने धर्म समझा।" यही है जीवनदानी।

अबुल कलाम आजाद ने कुरान पर एक सुंदर किताब उर्दू में लिखी है। वह किताब अभी पूरी नहीं हुई कुछ हिस्सा बाकी है। उसकी प्रस्तावना में उन्होंने इस्लाम को अच्छी तरह समझाया है। हमने अभी जो बताया है उसी तरह वहाँ कहा गया है।

पूँजीवाद की प्रतिक्रिया साम्यवाद

प्रश्न : मुझे लगता है कि भारतीय संस्कृति के खिलाफ कम्युनिज्म जाता है। आपकी क्या राय है?

उत्तर : कम्युनिज्म क्या है? कम्युनिज्म यूरोप की परिस्थिति में से पैदा हुआ है। यूरोप में पूँजीवाद का जोर था। वहाँ बड़े बड़े कारखाने बड़े-बड़े शहर बनाये गये। दुनियाभर की संपत्ति इकट्ठा होती थी। फिर मालिक और मजदूरों में झगड़ा हुआ। मालिक मजदूरों को ऊपर उठने नहीं देते थे। उसीके प्रतिक्रियारूप कम्युनिज्म पैदा हुआ। याने वह स्वयं पूर्ण विचार नहीं है। जो प्रतिक्रियारूप विचार होता है वह अधूरा रहता है। सोशलिज्म भी स्वतंत्र विचार नहीं है। एक है प्रतिक्रिया पूँजीवाद की तो दूसरी है व्यक्तिवाद की। दोनों प्रतिक्रियारूप पैदा हुए, इसलिए उनमें पूर्ण दर्शन भी नहीं है। एक में है 'व्यक्ति विरुद्ध समाज' और दूसरे में है 'पूँजी विरुद्ध श्रमशक्ति'। वास्तव में दोनों में विरोध होने की जरूरत नहीं थी। वे विरोध मिट सकते थे। व्यक्ति समाज का ही अंश है। अगर समाज का हित व्यक्ति नहीं सोचेगा तो व्यक्ति का भी उससे हित नहीं होगा। व्यक्ति का विकास नहीं हुआ तो समाज का भी विकास नहीं होगा। इस तरह व्यक्ति और समाज दोनों एक-दूसरे पर आधार रखते हैं। जैसे ताना और बाना दोनों ओतप्रोत होते हैं वैसे ही समाज और व्यक्ति का संबंध है। ताने और बाने का स्वार्थ एक-दूसरे के विरोध में नहीं होता। इसी तरह व्यक्ति और समाज का स्वार्थ वास्तव में भिन्न नहीं है।

पूँजी और श्रम दोनों का विरोध बताया जाता है। परन्तु पूँजी याने क्या? जो श्रम भूतकाल में हो चुका वह पूँजी बनी और जो श्रम आज करते हैं, वह श्रम है। कल के श्रम का आज के श्रम के साथ विरोध नहीं हो सकता। हमने

वह सिर पर बैठ जायगा, बड़ा खतरनाक है!' वास्तव, ईश्वर के लिए उनका कायम का विरोध नहीं है। परन्तु उनको मालूम हुआ है कि ईश्वर का नाम लेनेवाले पूँजीवादी राज्य चाहते हैं। उनका गुस्सा है पूँजीवाद पर, परन्तु वह उतार लेता है ईश्वर पर। लेकिन यहाँ का ईश्वर एक कोने में रहनेवाला एजेंट नहीं है। वह तो व्यापक है, घट-घट का वासी है प्रत्येक शरीर में रहता है। ऐसे सर्व-व्यापक प्रभु की भक्ति यहाँ चलती है। इसलिए धीरे-धीरे ईश्वर को वे मानने लगेंगे।

आज जो अपने को आस्तिक कहलाते हैं वे भी क्या करते हैं? झूठ बोलते हैं, दूसरों को ठगते हैं स्वयं मालिक बनते हैं। माने वे खुद ईश्वर के प्रभु बनते हैं। हमें उम्मीद है कि हिन्दुस्तान में कम्युनिज्म धीरे-धीरे सर्वोदय की तरफ आयेगा। परन्तु उसके लिए सिर्फ एक बात की जरूरत है। जो हम मालिक कहलाते हैं, वे अपनी मालकियत मिटायें। आस्तिक माने ईश्वर को माननेवाले। ईश्वर कौन है? वह मालिक है। अगर हम मालिक बनते हैं तो ईश्वर का ही स्थान लेते हैं। यह तो नास्तिकता है, सही आस्तिकता रखनी चाहिए। सही आस्तिकता माने परमेश्वर ने जो चीजें दी हैं, उनका भोग सबको मिले। इसीका नाम है सर्वोदय।

मधुकरीपाद वेदाभ्यास करेंगे

सर्वोदय स्थिर सिद्धान्त है स्वयं पूर्ण है। वह प्रतिक्रियात्मक नहीं। परन्तु कम्युनिज्म अस्थिर है बदलता ही रहता है। अस्थिर सिद्धान्त का परिणाम स्थिर सिद्धान्त पर नहीं हो सकता। इसलिए सर्वोदय का परिणाम धीरे-धीरे यहाँ के कम्युनिज्म पर होता है। भारतीय संस्कृति का रंग उन पर चढ़ रहा है। परिणामस्वरूप उनके लेख में हाल ही में जाहिर किया है कि जमीन की मालकियत मिटाने का काम जो शान्तिमय पद्धति से होता है वह कानून से नहीं हो सकता। इसलिए हम कम्युनिज्म से डरते नहीं। हम उनको अपने शत्रु भी नहीं मानते। हम उनका खाने बैठे हैं, उनको खाकर पचानेवाले हैं। आप ब्राह्मण बनकर उनको पचा डालने में हमें मदद कीजिये। इस तरह आप

कम्युनिज्म भारत में पच जायगा। आखिर वे भारत के बाहर के तो नहीं हैं। नंबूद्रीपाद हमसे मिलने आये थे। वह पहली ही भेंट थी, इसलिए बात भी क्या हो सकती थी। हमने उनसे कहा : 'अपना जीवन-चरित्र सुनाइये।' उन्होंने बताया कि वे बचपन में वेदाध्ययन करते थे। इस तरह यहाँ के कम्युनिस्ट ने भी वेदाध्ययन किया है। आखिर वह संस्कार जायगा कहाँ? अगर सर्वोदय का काम यहाँ होता है, तो वे फिर से वेदाध्ययन करने लगेंगे। बचपन में जो किया होगा वह अज्ञान से माता पिता ने कहा इसलिए श्रद्धा से किया होगा। अब समझ-बूझकर करने लगेंगे। आप सब हमारा विचार समझकर मार्क्सिज्म मिटा दो। फिर देखो नंबूद्रीपाद वेदाध्ययन शुरू करते हैं या नहीं।

पत्तनापुरम् (केरल)
१८-७-५७

अच्छे काम करने के लिए आगे बढ़ो : २१ :

क्रिया और प्रतिक्रिया

एक भाई ने प्रश्न पूछा है : 'समाजवाद और साम्यवाद के सिद्धान्तों से सर्वोदय कहाँ तक सम्मत है?' समाजवाद और साम्यवाद दोनों लड़ते आये हैं क्योंकि दोनों प्रतिक्रिया के रूप में निर्माण हुए हैं। व्यक्तिवाद की प्रतिक्रिया है समाजवाद और पूँजीवाद की प्रतिक्रिया है साम्यवाद। समाज एक बाजू जब खींचा जाता है, तब उसकी दूसरी बाजू भी उतनी ही जोर से खींची जाती है। एक जमाना था संस्कृत के विद्यार्थी भाषा की तरफ ध्यान नहीं देते थे। हमने तमिलनाड में देखा कि वहाँ लोकभाषा का इतना जोर है कि कहीं-कहीं संस्कृत का विरोध भी होता है। वे समझते हैं यह ब्राह्मणों की भाषा है उत्तर हिन्दुस्थान की भाषा है। यह उन आर्यों की भाषा है जो हमको गुलाम बनाने आये थे। इस तरह की प्रतिक्रिया हुई है, लेकिन वह ज्यादा टिकनेवाली नहीं है। पुराने वाद में भी बहुत जोर था। उतने ही जोर से प्रतिक्रिया हुई। पुराने वाद में

नहीं है। वह स्वतन्त्र विचार है और सर्वांग परिपूर्ण होने की कोशिश करता है। एक जीवन विचार वह समाज के सामने रखता है। सर्वोदय का विचार यह है कि किसी एक का हित दूसरे के हित के विरोध में नहीं। सृष्टि की रचना ही ऐसी विचक्षण है कि मानवों का हित एक दूसरे के विरोध में नहीं जा सकता। हम एक दूसरे को सँभालकर चलेंगे, तो सबका हित होगा। उसके लिए उपाय यह है कि मुझे अपनी चिन्ता नहीं करनी चाहिए। आपकी चिन्ता करनी चाहिए और आप मेरी चिन्ता करेंगे। ब्राह्मण ब्राह्मणेतर की सेवा में लगेगा। केरल का जहाँ तमिलनाड से सम्बन्ध आता है, वहाँ केरलवाले तमिलनाड की पहले चिन्ता करेंगे और उसी संदर्भ में तमिलनाडवाले केरलवालों की चिन्ता करेंगे। हिन्दुस्तान पाकिस्तान की चिन्ता करेगा पाकिस्तान हिन्दुस्तान की चिन्ता करेगा। परन्तु आज क्या होता है? मैं अपनी चिन्ता करता हूँ, इसलिए स्वार्थी बनता हूँ। अपनी जाति की थोड़ी चिंता करता हूँ, तो मेरा स्वार्थ तो थोड़ा कम होता है परन्तु मैं जातीयवादी बनता हूँ। मैं मेरे प्रांत की चिन्ता करता हूँ तो और थोड़ा स्वार्थ कम होता है, परन्तु मैं प्रांतीयवादी बनता हूँ। इससे भी आगे मैं अपने स्वार्थ को जरा व्यापक करता हूँ और अपने राष्ट्र के लिए सोचता हूँ तो संकुचित राष्ट्रवाद होता है। इसलिए मुझे मेरी चिन्ता नहीं करनी है। अपनी चिन्ता करनी है और आप मेरी चिन्ता करेंगे। यह है सर्वोदय विचार।

सर्वोदय अपने हाथ में अभिक्रम रखता है

सर्वोदय विचार सबको पसन्द आता है। परन्तु एक सवाल पैदा होता है कि मैं दूसरों की चिन्ता करूँगा लेकिन दूसरे मेरी चिन्ता नहीं करेंगे तो क्या होगा? आज यही चलता है। अमेरिका शस्त्र-सन्यास के लिए तैयार हो तो रूस तैयार है। अगर रूस तैयार हो, तो अमेरिका तैयार है। मतलब यह कि दोनों मिलकर कोई भी तैयार नहीं। केवल चर्चा ही चलती है। वास्तव में इसके लिए हिम्मत चाहिए, जो कहे कि मैं तैयार हूँ। अंग्रेजी में इसे 'इनीशियेटिव' और संस्कृत में 'अभिक्रम' कहते हैं। पाकिस्तान अमेरिका से मदद माँगकर शस्त्र

सैन्य बढ़ा रहा है। भारत पंचशील को मानता है, इसलिए वह सैन्य बढ़ाना नहीं चाहता। फिर भी हम सोचते हैं कि पाकिस्तान सैन्य बढ़ा रहा है, तो हमें भी तैयार रहना चाहिए। इसका मतलब है कि हमें बन्दर की तरह नचाने की शक्ति हमने पाकिस्तान के हाथ में दे दी। हमारा बल हमारे हाथ में नहीं रहा। सामने शत्रु हो तो हम शत्रु बनेंगे अगर दुष्ट हो तो दुष्ट बनेंगे। यानी हमें दुष्ट या शत्रु बनाने का अधिकार हमने दूसरे के हाथ में दे दिया। हमारे हाथ में अभिक्रम नहीं रहा। कर्मयोगी का मुख्य लक्षण ही यह है कि वह अभिक्रम अपने हाथ में रखता है। पानी का स्वभाव है प्यास बुझाना। गाय प्यासी हो तो नदी उसकी प्यास बुझाती है। प्यासा शेर आये तो उसकी भी प्यास बुझाती है। याने उसने अपना स्वभाव अपने हाथ में कायम रखा। अच्छी किताब पढ़ते हैं तो सूर्य प्रकाश देता है और रद्दी पढ़ते हैं तो भी देता है। सूर्य यह नहीं कहता कि आप अच्छी किताब पढ़ेंगे तो प्रकाश दूँगा और रद्दी पढ़ेंगे तो अँधेरा कर दूँगा। अगर वह ऐसा करे, तो उसके हाथ में अभिक्रम नहीं रहेगा। इसी तरह सर्वोदय अपने हाथ में अभिक्रम रखता है। वह अच्छी बात शुरू कर देता है। मैं आपकी फिक्र करूँगा, आप चाहे मेरी फिक्र करें या न करें। ऐसा निश्चय होगा तभी काम होगा। नहीं तो एक दूसरे की राह देखते ही रह जायेंगे।

सेना घटाना सच्चा सर्वोदय-कार्य

पाकिस्तान सेना बढ़ा रहा है तो बढ़ाने दो। भारत अपनी सेना कम करेगा। आखिर वह सेना क्यों बढ़ा रहा है? भारत से डरता है इसलिए। और भारत भी पाकिस्तान से डरता है। अजीब सा डर है यह! बलवान् बलवान् से डरे और कमजोर कमजोर से! बल बढ़ने से डर नहीं गया और घटने से भी नहीं। यह इसीलिए हो रहा है कि हम यह नहीं सोचते कि हम अपना कदम अपनी ओर से करना है। सामनेवाला क्या करता है, यह हम देखना नहीं चाहिए। हम अपना कर्तव्य कर डालेंगे, पीछे ही भले जो कुछ भी हो जाय—ऐसी हिम्मत होनी चाहिए।

मान लीजिये भारत ने अपनी सेना कम की आन्तरिक व्यवस्था के लिए कुछ थोड़ी रख ली तो क्या होगा ? दो बातें हो सकती हैं। एक तो यह कि पाकिस्तान भारत पर एकदम हमला करे और दूसरी यह कि उसका डर कम हो जाय और वह भी अपनी सेना कम कर दे। दोनों बातों में नुकसान नहीं है। सेना खतम कर देते हैं, तो खर्च भी कम होगा। आन्तरिक व्यवस्था के लिए जो सेना रखेंगे, उस पर करीब २ करोड़ खर्च होगा और बाकी १८ करोड़ गरीबों की सेवा में लग सकेगा। उससे यहाँ के लोग मजबूत बनेंगे। फिर भी मान लें, पाकिस्तान हमला करे, तो उसके खिलाफ कुल दुनिया का विवेक खड़ा होगा। इंग्लैंड क्या कम बलवान् था ? परन्तु मिस्र के सामने वह टिक नहीं सका। इसी तरह भारत को दुनिया की सहानुभूति मिलेगी और यहाँ के लोग भी धैर्य नहीं खोयेंगे। आखिर पाकिस्तान हमें दबा तो नहीं सकेगा। लोग उससे असहयोग करेंगे। इसलिए दोनों हालत में हानि नहीं है। हाँ, एक बड़ी मिसाल दुनिया के सामने रहेगी और भारत की नैतिक शक्ति बढ़ेगी। अगर पाकिस्तान भी अपनी सेना कम करता है तो उसका भी खर्च कम होगा और गरीबों की सेवा होगी। दोनों की नैतिक शक्ति बढ़ेगी। दोनों में प्रेम बनेगा। दोनों एकरस बनेंगे। ऐसा दृढ़ निश्चय कर यदि भारत अपनी सेना कम करता है तो वह सच्चा सर्वोदय कार्य होगा।

सर्वोदय का कोई खास कैम्प नहीं

सर्वोदय में हम चिंता अपनी नहीं सबकी करते हैं। परिणामस्वरूप नैतिक शक्ति बढ़ती है। यह कार्य न समाजवाद कर सकता है, न साम्यवाद। उनका दारोमदार सेना पर है। दोनों एक ही रचना के भक्त हैं। एक ही कैम्प के हैं। एक ही कैम्प में रहकर आपस आपस में लड़ते हैं। लेकिन सर्वोदय का कोई कैम्प नहीं। वह सभी कैम्पों से अलग है।

हड़ताल का हक और कर्तव्य

प्रश्न : पोस्ट और तार आफिस के कर्मचारियों की ८ अगस्त को जो हड़ताल होने जा रही है उस पर आपकी क्या राय है ?

पुर्तगाली निश्चिन्त हो भारत छोड़ें

: २२ :

आज हमने एक चित्र देखा। ईसा मसीह खड़े हैं, उन्होंने हाथों में बकरा लिया है। चित्र के नीचे लिखा था 'जीव-कारुण्यम्'। हम समझते हैं कि ईसा मसीह का जीव कारुण्य हिंदुस्तान के लोग बहुत अच्छी तरह समझते हैं। उसके लिए यह नयी बात नहीं। ईसा के पहले हिंदुस्तान में अनेक मसीहा हो गये हैं। उनमें से गौतम बुद्ध और महावीर को तो आप जानते ही हैं। उन्होंने जीव कारुण्य सिखाया था। परिणामस्वरूप भारत में आज जितनी मात्रा में मांसाहार-परित्याग हुआ है उतना किसी देश में नहीं। हमारे ईसाई भाई अपना प्रचार बहुत करते हैं। उनका उत्साह ज्यादा है। वे कहते हैं ईसा के आश्रय के बिना कल्याण नहीं होता। दुनिया में ज्यादा-से-ज्यादा ईसाई यूरोप और अमेरिका में हैं। वहाँ ज्यादा-से-ज्यादा बाइबल का पठन होता है। किन्तु वहीं ज्यादा-से-ज्यादा मानव-संहार की बातें भी होती हैं और मांसाहार भी चलता है। फिर भी वे लोग यहाँ आकर हमें जीव-कारुण्य का उपदेश देना चाहते हैं। हम उसको प्रेम से स्वीकार करते हैं। लेकिन उनसे इतना ही कहते हैं कि जो उपदेश आप देना चाहते हैं उसे आपके जीवन में भी अमल में लाइये।

फ्रांसीसियों ने भारत का प्रेम समझ लिया और वे प्रेम से इसे छोड़ चले गये। लेकिन पुर्तगाली नहीं समझ रहे हैं। वे भी समझेंगे। बिना समझे गति नहीं। जितने जल्दी वे समझेंगे उतना उनका कल्याण होगा। वे कहते हैं : 'हमारी सभ्यता कुछ अलग है। हम ईसाई हैं, यहाँ ईसाई बस्तियाँ हैं। उनकी रक्षा करने के लिए हमारा यहाँ रहना जरूरी है।' ये अजीब बातें हैं। ईसाइयत पहले भारत में आयी है या पुर्तगाल में? ईसा के जाने के बाद ५ साल के अन्दर यहाँ सेंट थॉमस का मिशन आया था। पुर्तगाल में तो बहुत देर से वह पहुँची। इसलिए ईसाइयत का संरक्षण जैसा करना पर भारत के

लोग मानते हैं। हम 'क्रिश्चैनिटी' को 'हरिजन रिलीजन' कहते हैं। यही भारत की खूबी है। यहाँ के पचासों ईसाई मानते हैं कि ईसाइयत को मांसाहार परित्याग, अद्वैत विचार और पुनर्जन्म का सिद्धान्त स्वीकार करना पड़ेगा। इसके लिए वे बाइबिल का आधार भी बताते हैं। इस तरह यहाँ जो अनेक धर्म और जातियों के लोग आये, उनको भारत ने अपना बना लिया।

हम चाहते हैं कि पाण्डिचेरी जैसे स्थान में फ्रेंच भाषा का संस्कार रहे। हिन्दुस्तान को इस प्रकार के संस्कारों का प्यार है। दुनिया की हर कौमें अपनी कुछ न कुछ देन दुनिया को देती हैं। भारत भी इसे स्वीकार करता है। हम सब भारत की विभिन्नता वैभव समझते हैं। अनेक भाषा, अनेक धर्म यहाँ विकसित हुए हैं। पुर्तगाली लोगों को भी यहाँ पर पूरी सुरक्षा होगी। इसलिए वे निश्चिन्तता से यहाँ रह सकते हैं। अपनी अच्छी चीजें वे यहाँ रख दें और जो बुराइयाँ साथ आयी हों, उन्हें यहाँ के समुद्र में डुबा दें, ताकि वापस जाने की भी जरूरत नहीं रहेगी।

माहे (पाण्डिचेरी टेरिटरी)
७-८-५

परम्परा और क्रान्ति : २३ :

भारत प्राचीनतम देश है। यहाँ सब प्रकार की साधन-सामग्री मौजूद है। प्राचीन काल से यहाँ ज्ञान की अखण्ड परम्परा चली। शायद चीन छोड़कर दुनिया में ऐसा दूसरा कोई देश नहीं, जहाँ प्राचीन काल से आज तक अखण्ड इतिहास चला आया हो। प्राचीन यूनान, रोम, मिस्र आज नहीं रहे। आज [illegible] हैं, [illegible] नाम बच गये हैं। उनकी प्राचीनता का पता भी नहीं है। सिर्फ वह प्राचीनता नाममात्र हो गयी है। लेकिन हिन्दुस्तान में ज्ञान की अखण्ड [illegible] चली आती है।

सन्तों की अटूट परम्परा

[illegible] और [illegible] है। इसमें ऐसे

सैकड़ों शब्द हैं, जो आज भी हमारी भाषा में चलते हैं। मिसाल के तौर पर उसका पहला मंत्र ही लीजिये। 'अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्। होतारं रत्नधातमम्। इस मंत्र के 'अग्नि' 'पुरोहित', 'यज्ञ', 'देव', 'होता' और 'रत्न' ये शब्द आज की भाषा में चलते हैं। इस पर से ध्यान में आयेगा कि प्राचीन ग्रंथ के शब्द आज की भाषा में कितने घुल-मिल गये हैं। ऐसे हजारों शब्द हैं जो आज की मलयालम बंगला और मराठी भाषा में चलते हैं। मैं ऐसी दूसरे किसी देश की भाषा नहीं जानता जिसमें ५ साल के वे ही शब्द आज भी हों। यह साधारण बात नहीं है।

'यज्ञ' के अर्थ में परिवर्तन

इसका अर्थ यह है कि इस देश में जो ज्ञान विचार निकला वह प्रवाहित हुआ। उसमें जो पुराने शब्द थे वे तोड़े नहीं गये उनमें नया अर्थ भर गया। इसका नाम प्रवाह है। यहाँ का विचार प्रवाह खंडित नहीं हुआ बल्कि उसकी पूर्ति हुई। अगर विचार-प्रवाह खंडित हो जाता तो शब्द भी खंडित हो जाते, लेकिन मानसिक शब्द वैसे ही आज तक चलते आये।

'यज्ञ' शब्द लीजिये। एक जमाना था जब यज्ञ मे बकरे का बलिदान देते थे। ब्राह्मण भी उसका प्रसाद सेवन करते थे। बीच में मांसाहार-परित्याग का जमाना आया, तो करोड़ों लोगों ने मांसाहार छोड़ा। जैन, वैष्णव शैव, ब्राह्मणों ने इस प्रकार के प्रयोग किये। पाश्चात्य देशों में इधर ५-६ सालों से मांसाहार परित्याग आरम्भ हुआ है, लेकिन हिंदुस्तान में प्राचीन काल से यह विचार का आरम्भ हुआ है। विचार के क्षेत्र में भारत अगुआ रहा है। हाँ तो अब बकरे का बलिदान नहीं होता। इसलिए 'यज्ञ' शब्द खंडित होना चाहिए था। वैसा अगर होता तो ज्ञान-परम्परा ही खंडित हो जाती। माने यह कहा जाता कि एक नया विचार आया, जिसने पुराने शब्द को तोड़कर समाज को आगे बढ़ाया। समाज ने मांसाहार का परित्याग किया और वह आगे बढ़ा। परन्तु उसमें खूबी क्या थी? 'यज्ञ' शब्द का विस्तार किया गया— 'समाज-सेवा के लिए जो त्याग करना पड़ता है, वह 'यज्ञ' है। मनुष्य में कुछ पशु-अंश भी है।

काम, क्रोध, मोह में मानवता नहीं, पशुत्व है। इसलिए उनका बलिदान याने इस पशुत्व का बलिदान होना चाहिए।' पशु के बदले पशुत्व का बलिदान—यह आध्यात्मिक प्रवृत्ति है।

समझो जैसे हम किसी पेड़ की शाखाएँ तोड़ते हैं, तो वे सूख जाती हैं। वैसी अनेक शाखाएँ तोड़ेंगे तो वह वृक्ष भी सूख जायगा। इसलिए शाखाओं का मर्म पेड़ के साथ चिपके रहने में ही है। इस तरह वृक्ष है प्राचीन परम्परा और शाखाएँ हैं नया संस्कार। नया संस्कार हम कोई भी करें, वह प्राचीन परम्परा से चिपका रहना चाहिए। इसी तरह एकरसता होगी और वह परम्परा खंडित नहीं होगी।

एकरसता की मिसाल आम

हम आम की गुठली बोते हैं तब उसका स्वरूप बिलकुल पत्थर जैसा होता है। बाद में उससे अंकुर निकलता है, उसका स्वरूप कितना नरम होता है! अंकुर और गुठली में कितना फर्क है! लेकिन अंकुर गुठली से ही रस लेता है। फिर एक बड़ा तना हो जाता है। उसे हम खा नहीं सकते। उसकी लकड़ी काटते हैं, मकान बनाते हैं। इस प्रकार उसका नया स्वरूप होता है। गुठली और तने में कितना फर्क है! लेकिन वह तना बीज से रस चूस लेता है। उनकी एकरसता में बाधा नहीं आती। फिर शाखाएँ होती हैं, पत्ते लगते हैं। कितना फरक होता है पत्ते में और तने में! पत्ते बकरी खाती है, पर तना नहीं खायेगी। फिर बौर आया, उसका आम बना। आम का अचार बनता है, पत्ते का अचार नहीं बनता। आम पक गया। कितना परिपक्व मधुर फल! लोग प्यार से खाते हैं। पर क्या गुठली, पत्ते, तना और खाये जायेंगे? कितना फरक दीखता है! परन्तु पहले से आखिर तक उनकी एकरसता कायम थी। आम का मधुर रस लकड़ी से यह नहीं कहता कि "तू (लकड़ी) पुराना समाज है। मेरा और तेरा बिलकुल संबन्ध नहीं। मैं नया समाज मधुर रस परिपूर्ण हूँ। कहाँ मैं और कहाँ तू!" लेकिन वह कहता है : अरे, तू तो मेरा बाप है। तू नहीं तो मैं नहीं। इसी

तरह जहाँ समाज का असंहित विकास होता है, वहाँ प्राचीन काल से आधुनिक काल तक अनुसंधान रहता है।

फ्रान्स में चित्त की चंचलता क्यों ?

आज फ्रान्स में खूब साहित्य है। विज्ञान भी खूब है। परन्तु वहाँ के लोगों के चित्त की चंचलता नहीं जाती। वहाँ प्राचीन काल से आज तक अखण्ड रस नहीं है। पुराने फ्रांस और आज के फ्रांस में कोई सम्बन्ध नहीं। पुराने फ्रांस का उनको स्मरण भी नहीं है। दूसरी कौम आयी और उसने आक्रमण किया इतना ही मालूम है। इसके पहले के काल का स्मरण ही नहीं। कारण, चित्त स्थिर नहीं है। आपके मलयालम और तमिल से कम साहित्य वहाँ नहीं है। फिर भी जो स्थिरता मलयालम और तमिल को है, वह वहाँ नहीं है क्योंकि वे पुरानी परम्परा को तोड़ते चले गये। नये सुधार जरूर करने चाहिए। परन्तु पुरानी परम्परा को तोड़कर नये सुधार करते हैं, तो उसमें ताकत नहीं होती। इसलिए आज फ्रांस में कोई राज टिकता नहीं १-२ महीने में बदलता है। उसकी जड़ें जमीन में नहीं ऊपर ऊपर ही हैं। भारत की हालत इससे भिन्न है। उसकी जड़ें जमीन में गहरी गयी हैं। परिणामस्वरूप हमारे समाज में हम स्थिर बुद्धि देखते हैं। स्थिर बुद्धि का अर्थ यह नहीं कि पुराना ही समाज चल रहा है। जैसे *गुठली* से आम होता है। परन्तु वहाँ अनुसंधान कायम है। वैसे ही नये समाज की पोषण धारा कायम है। पुराने रस से ताकत बनती है और नये विचार से माधुर्य आता है। यहाँ दोनों इकट्ठा हुए हैं। पुराने शब्द हम छोड़ते नहीं उसमें नया अर्थ भरते हैं उसका विकास करते हैं, उसे व्यापक बनाते हैं। यह अहिंसक क्रांति की प्रक्रिया है और यही आज तक भारत में चली आ रही है।

'दान' का नया अर्थ

बाबा ने भूदान शब्द निकाला तो लोग पूछने लगे यह दान क्या है ? भिक्षा माँगने निकले हो क्या ? हमने कहा बाबा भिक्षा माँगने नहीं निकला उसका हक माँगने के लिए निकला है। इस पर पूछा गया कि फिर यह दान शब्द किसलिए ? हम कहते हैं : शंकराचार्य का थोड़ा भाष्य खोलकर देखो। उन्होंने कहा : 'दानं

संविभागः—दान माने सम्यक् विभाजन। हमने यह पुराना शब्द तोड़ा नहीं, उसका व्यापक अर्थ बनाया। सम्यक् विभाजन माने सुव्यवस्थित बँटवारा। शरीर का खून एक जगह इकट्ठा हुआ, तो शरीर कैसे चलेगा? खून का समान प्रसार करना पड़ता है तभी शरीर टिकता है। उसी तरह समाज में संपत्ति भी बहनी चाहिए। समवेदना अनुभव जीवित शरीर का लक्षण है। इसी तरह समाज जीवित होता है तो संपत्ति का केंद्रीकरण नहीं होता। शरीर में खून कम है तो खतरा है। शरीर में खून खूब बढ़ गया तो भी खतरा है। दोनों हालतों में खतरा है। खून का सुव्यवस्थित अभिसरण ही होना चाहिए। इसीलिए शंकराचार्य ने दान का अर्थ संविभाग सम्यक् विभाजन किया है।

दान का अर्थ शंकराचार्य ने ही बताया ऐसी बात नहीं। भगवान् बुद्ध ने भी इसी तरह कहा है: 'यमाहु दानं परमं अनुत्तरं। यं संविभागं भगवा अवण्णयी।'—जिस दान को दुनिया ने अनुत्तम बताया है, उसे भगवान् बुद्ध ने संविभाग कहा। इस तरह बुद्ध से शंकराचार्य तक इस शब्द की परम्परा चली आयी। वैसे बुद्ध और शंकराचार्य में फरक है ही नहीं। सिर्फ चेहरे में फरक आ जाता है।

बीच के काल में एक विचार पैदा हुआ जिसने 'दान' को पुराने अर्थ में मान्य नहीं माना। 'दान दो तो, पुण्य मिलेगा। [illegible] मिलेगा। अभी गोदान देंगे, तो मरने के बाद परलोक मिलेगा। सुवर्णदान देंगे तो इंद्रलोक मिलेगा, भूमिदान देंगे तो पुण्य मिलेगा'—इस प्रकार की पुरानी दान पद्धति लोगों को मान्य नहीं थी। इस दान से अहिंसक क्रांति नहीं बनती। देनेवाला अहंकारी और लेनेवाला दीन बनता है। वह दान काम का नहीं ऐसा क्रांतिकारक विचार आया। उस जमाने में आधुनिक पाश्चात्य विद्या-प्राप्त लोग होते तो उन्होंने इस शब्द को छोड़ दिया होता या उसकी निंदा करने लगते। परिणामस्वरूप गीता, उपनिषद्, वेद निकम्मे हो जाते, क्योंकि उनमें दान की स्तुति की गयी है। लेकिन उन्होंने 'दान' शब्द को तोड़ा नहीं, उसमें नया अर्थ भर दिया—'दानं संविभागः'। यह अर्थ समझ लीजिये और

फिर गीता उपनिषद्, वेद पढ़िये; तब आपको इन्हीं पुराने शब्दों से नया प्रकाश मिलेगा।

'तप' का नया अर्थ

तपश्चर्या माने सिर के बल खड़े होना। इसी तरह 'तप' का अर्थ पुराने जमाने में माना जाता था : सिर के बल खड़े होना, ठंडे पानी में रहना चारों तरफ अग्नि जलाकर बीच में रहना आदि। परन्तु गीता में कहा है कि सत्य बोलना, प्रेम से बोलना स्वाध्याय करना वाणी का तप है। यहाँ तप का अर्थ हुआ, वाणी को पवित्र बनाना। यही वाणी की तपस्या है। बूढ़ों एवं ज्ञानियों की सेवा और ब्रह्मचर्य पालन करना, यह है देह की तपस्या। सेवा के लिए शरीर एकदम उठना चाहिए। इस तरह का अर्थ तप का किया है। परन्तु पुराना आदर कायम रखा है।

पुरानी परम्परा को न तोड़ते हुए क्रांति

आज पुराने शब्द लंडित कर नये शब्द बाहर से आयात किये जाते हैं। ये शब्द ऐसे होते हैं कि उनका अर्थ प्रकट करने के लिए यहाँ शब्द ही नहीं मिलते। उदाहरणार्थ 'रेशनलाइजेशन' ही ले लीजिये। अपनी भाषा में इसका प्रतिशब्द क्या होगा। इस पर अपना दिमाग चलायें। 'रेशन' पर से 'रेशनल' बाद में 'रेशनलाइज' और फिर 'रेशनलाइजेशन' हो गया—एक इतना लंबा शब्द। परन्तु उसका अर्थ यह है कि कारखाने में आज १० मजदूर काम करते हैं तो ५ कम करके उतना ही काम कराना है। इसका नाम है रेशनलाइजेशन। यह हिंदुस्तान के लिए शोभादायक नहीं। यहाँ की कल्पना का विकास यहाँ के पुराने शब्दों से ही होगा।

हम जो सर्वोदय-समाज बनाने जा रहे हैं, वह पुराने समाज से सर्वथा भिन्न है। इतना भिन्न जितना मीठा मधुर आम और खट्टा। सर्वोदय समाज हम परिपक्व मधुर आम जैसा बनाना चाहते हैं। पुराना समाज नीरस, कठिन और लकड़ी जैसा है। फिर भी सर्वोदय-समाज पुराने समाज को न तोड़ते हुए यह करना चाहता है। जैसे कुशल इंजीनियर हमें कुएँ ऊपर चढ़ा देता है, हम

लगता है कि बाबा हमारी हमदर्दी बढ़ाता है, हमारे लिए हमदर्दी रखता है। इस तरह वामपक्षी, दक्षिणपक्षी दोनों एक हो जाते हैं।

सारा समाज की रचना हमें पूरी तरह से बदलनी है। थोड़ा सुधार नहीं पूरी क्रांति करनी है। परन्तु वह इस ढंग से करनी है कि उसमें हमें सबका सहयोग मिले। सहयोग मिल भी सकता है अगर हम धर्म को कायम रखते हैं। धर्म को तोड़ो नहीं उसमें अधिक अर्थ भरो उसका विकास करो। फिर लोगों में बुद्धि-भेद नहीं होगा। हम दान माँगते हैं इसलिए दाताओं से प्रेम-संबंध बनता है। उनके हृदय में प्रवेश होता है। घर में हम प्रवेश चाहते हैं, तो दरवाजे से करना पड़ता है। दीवाल से करना चाहेंगे, तो टक्कर होगी। जहाँ का दरवाजा खुला हो वहीं से प्रवेश करना होगा। हमें पूरी क्रांति करनी है। परन्तु ऐसी कुशलता से करनी है कि प्राचीन काल से चली आनेवाली जलधारा और विचारधारा कुंठित न हो।

कल्याणपुर (मैसूर)
१-८-५७

भेड़ और गड़ेरिया : १२४ :

इन दिनों दुनिया के सब देशों के लोग तंग आ गये हैं। सूझ नहीं रहा है कि क्या किया जाय। पुराने जमाने की अपेक्षा आज भौतिक सुख के साधन काफी बढ़ गये हैं। आने जाने के साधन भी अति सुगम हो गये हैं। फिर भी सारे दुःखी हैं। सर्वत्र लड़ाई परस्पर द्वेष है। एक देश एक-दूसरे से डर रहा है। पहले जानवरों के खिलाफ लड़ना पड़ता था, तो मनुष्य-मात्र [illegible] थे। परन्तु अब मनुष्य मनुष्य से डरता है इसलिए बड़े-बड़े शस्त्रों की आवश्यकता महसूस होती है। रूस अमेरिका के नाम से डरता है और अमेरिका रूस के नाम से। दोनों को पारिवारिक प्रेम का अनुभव है दोनों सुख दुःख पहचानते हैं। एक-

दूसरे से बातचीत करना हो तो आसानी से कर सकते हैं। फिर भी कैसी शान्ति है!

भेड़ गड़ेरिया चुनने लगी

प्राचीन काल में लोग अलग-अलग रहते थे। व्यवस्था नहीं थी। उनका समाज नहीं बना था, इसलिए उनको जानवरों का डर था। फलस्वरूप उन्होंने व्यवस्था कायम की। जिसे आज हम सरकार, राज्य कहते हैं, वह व्यवस्था हुई। सरकार माने क्या? जैसे गो-पालन, मधुमक्खी-पालन, वैसे ही मनुष्य-पालन की व्यवस्था! भेड़ों को गड़ेरिया चाहिए था। सोचते थे, उसके बिना कैसे चलेगा? हमारी कुछ व्यवस्था तो होनी चाहिए। पहले कोई भी जबरदस्ती से आता और कहता कि तुम चाहो या न चाहो, मैं तुम्हारी रक्षा करूँगा। मैं तुम्हारा रक्षक हूँ। भेड़ों को यह अच्छा नहीं लगा। उन्होंने तय किया कि हमारा गड़ेरिया हम चुनेंगे। तब से यह लोकशाही शुरू हुई। गड़ेरिया चुनने के अलावा उसके हाथ में अपने हाथ की लकड़ी दी। अपनी सेवा कराने की ताकत दी। पाँच साल के लिए ये हमारे गड़ेरिया रहेंगे।

इस तरह आज कुल दुनिया में गड़ेरियों का राज है। कोई गड़ेरिया ४ करोड़ भेड़ों का पालन करता है, कोई २५ करोड़ का, तो कोई ४ करोड़ का। इस तरह कम ज्यादा तादाद में उन उनके पास भेड़ होते हैं। वे समाज के एक एक हिस्से में बैठे हैं। चरते रहते हैं बेचारे! परन्तु यहाँ के गड़ेरिये को लगता है कि वह गड़ेरिया खतरनाक है, आक्रमण कर देगा। उसे लगता है यह गड़ेरिया खतरनाक है। लेकिन बेचारी भेड़ों को कुछ भी नहीं लगता। वे सोचती ही नहीं, चरने में लगी हैं। कहीं इनमें आपस-आपस में झगड़ा हो जाता है तो गड़ेरिया लकड़ी लगाता है। इनके लिए कोई [illegible] न्याय, पंचों है। क्या? यहाँ गड़ेरिया उन्हें भेज देगा। परन्तु गड़ेरिया को लगता है, इसे बंदूक का ज्यादा हिस्सा चाहिए। उसके बिना हमारी भेड़ों का हित होगा, उनका पालन नहीं हो सकेगा। हमारी भेड़ों का रहन-सहन का स्तर ऊँचा होना चाहिए। दूसरा गड़ेरिया नहीं चाहता है। इसलिए दोनों के बीच द्वेष पैदा

होता है। फिर वह सेना बढ़ाता और कहता है: 'देखो भेड़ो तुम्हारे लिए लकड़ी पुलिस काफी है। परन्तु अब आक्रमण होने का डर है, इसलिए सेना बढ़ानी चाहिए। आक्रमण होगा तो तुम्हें खाना भी नहीं मिलेगा। अतः जैसे तुमने मेरे हाथ में एक लकड़ी दी है, वैसे ही दूसरे हाथ में हाइड्रोजन और ऐटम दे दो। उसके लिए इतना पैसा खर्च होगा, वह मंजूर कर दो। भेड़ कहेंगी: "इतना पैसा खर्च करना होगा? जरूरत क्या है इसकी?" "मूर्खों, तुम समझते नहीं, उतना देने के लिए तैयार हो जाओ। उसके बिना तुम्हारा पालन नहीं कर सकता।" बस, घबरा गयी बेचारी भेड़ें। कितना मंजूर करना है? कहता है पाँच हजार करोड़। अच्छा, ठीक है। यह सारा सरकार का स्वरूप है।

प्रातिनिधिक व्यवस्था में खतरा

आपके ध्यान में आ गया होगा कि जो यह व्यवस्था के लिए बनायी, उससे अव्यवस्था बनी। अब क्या किया जाय? यह सवाल आज दुनिया के सामने है। एक गड़ेरिया दूसरे गड़ेरिये से द्वेष करता है। इतना ही नहीं एक देश में ही 'मुझे गड़ेरिया चुन दो' इसलिए भी झगड़े चलते हैं। दलीय राजनीति के अखाड़ा गाँव-गाँव में क्षुद्र स्वार्थ के झगड़े हैं ही। याने गाँव-गाँव में क्षुद्र स्वार्थ के झगड़े देश में दलीय राजनीति के झगड़े और अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में परस्पर द्वेष और झगड़े—इस तरह गाँव से लेकर अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र तक झगड़ों की सुव्यवस्थित योजना बनायी गयी। पूछा जा सकता है कि जब शांति और समाधान के लिए योजना बनायी गयी तो शांति और समाधान होना चाहिए था? लेकिन सोचने की बात है केवल योजना बनाने से काम न होगा शान्ति का सक्रिय प्रयत्न करना होगा। जैसे पुराने ब्राह्मण कोई भी कार्य शुरू करने के पहले 'शान्तिः शान्तिः शान्तिः' ऐसे तीन बार कहते थे। इसी तरह ये सारे लड़नेवाले भी इधर शस्त्रास्त्र बना रहे हैं और उधर शांति का जप कर रहे हैं। रूस अपने पहाड़ों में अणुबम का प्रयोग कर रहा है तो अमेरिका अपने समुद्र में। बम के ढेर पड़े हैं। कोई नहीं जानता किसके पास कितने हैं। फिर भी चर्चा शान्ति की चलती है।

सारा [illegible] इस समय उन भयभीत है। इसके लिए अब गाँव से लेकर केन्द्रीय सरकार तक प्रतिनिधि के जरिये काम करने की आज की योजना छोड़ देनी होगी। आपको सूझ लगी हो और आपका प्रतिनिधि जाये तो क्या अकल वह ले जायगा? आपको स्वयं ज्ञान होगा। इसी तरह आपके गाँव का इन्तजाम आपको स्वयं करना होगा। जब तक प्रतिनिधियों के जरिये हम काम कराते हैं, तब तक खतरे में रहेंगे। यह भलीभाँति समझना चाहिए।

विकेन्द्रित व्यवस्था आवश्यक

आज हमारा जिंदा रहना या मरना चन्द लोगों के हाथ में है। उनमें से किसी एक की बुद्धि बिगड़ गयी तो सारा जीवन खतरे में है। फिर हमारी अक्ल नहीं चलेगी। इस साधन पर हमारा सारा जीवन आधृत है। वास्तव में वह राक्षस नहीं है। वह भी हमारे जैसा ही मनुष्य है। परन्तु उसके हाथ में सब सत्ता देकर उस पर अपनी कुल जिम्मेवारी डालकर हमने ही उसे राक्षस बनाया और खुद बिल्कुल असहाय बन गये हैं। आज विज्ञान बहुत बढ़ा है। विज्ञान के आधार पर जगह-जगह का इन्तजाम हो सकता है। अब अणुयुग आ रहा है। दुर्भाग्य से बिजली से जितनी विकेन्द्रित व्यवस्था नहीं हो सकी, उतनी आणविक शक्ति से हो सकती है। यह जो सारी विद्युत् शक्ति, आणविक शक्ति और भाप-शक्ति है, वह विध्वंसकारी हो सकती है और निर्माणकारी भी। वह नुकसान कर सकती है और उपकार भी। इसलिए विज्ञान बढ़ा है, यह अच्छी बात है। उससे जीवन सुलभ होता है। अगर उसके साथ अहिंसा जुड़ जाय, तो दुनिया में स्वर्ग आयेगा। लेकिन हिंसा उसके साथ जुड़ जाती है तो उसकी बर्बादी हो जायगी।

सत्ता किसके हाथ में हो?

होना यह चाहिए कि आगे विज्ञान के साथ अहिंसा जोड़कर जगह-जगह लोग अपना-अपना कारोबार चलायें। उस हालत में केन्द्रीय सरकार में कम-से-कम शक्ति रहेगी। रहना चाहिए तो वह रहेगी, लेकिन उसके पास [illegible] नहीं रहेगी।

हमारी प्राचीन योजना यह थी कि दंड संन्यासी के हाथ में होता था। लेकिन आज तो १२ रुपये छावनीवाले के हाथ में दंड दिया जाता है। चुने तमोगुणी राक्षसों के हाथ में दंड-शक्ति है। देश में शराबबंदी हो, तो भी उन राक्षसों (सैनिकों) के लिए शराब का इन्तजाम करना पड़ता है, क्योंकि वे हमारी रक्षा करते हैं, उनके भोग की पूर्ति होनी चाहिए। उनके व्यभिचार की पूर्ति के लिए कन्याएँ दी जाती हैं, क्योंकि वे घर से बाहर रहते हैं। वे त्यागी हैं, वे हमारे रक्षक हैं। हम सारी भेड़ें हैं। हमारी रक्षा के लिए हमारे गड़ेरियों ने उन्हें चुना है। अगर वे सुख में न रहे, उनकी भोग-पूर्ति न हुई, तो हम मारे जायँगे। उनको उत्तम खाना मिलना चाहिए, चाहे हम भूखों रहें। यहाँ तक कि वह देशभक्ति मानी जाती है। उनके आधार से देश की रक्षा होती है, ऐसा माना जाता है। यह कितना हत-बुद्धि का लक्षण है। देश में बड़े-बड़े विद्वान्, ज्ञानी अपने को अनाथ समझते हैं और दुष्टों के हाथ में उन्होंने दंड शक्ति दे दी है। सोचने की बात है कि क्या रामजी की सेना शराब पीनेवाली या व्यभिचारी थी? कभी नहीं। वे तो फलाहार करनेवाले बंदर थे। सैनिक तो वे हैं ही। सामान्य मनुष्य जो भोग करता है उससे भी कम वे भोग करते हैं। वे त्यागी सात्त्विक और शीलवान् हैं, ऐसे ही लोग हमारी रक्षा कर सकेंगे। किंतु आज १२ रुपये छावनीवाले ही पुलिस-सेना में चुने जाते हैं और उनको मारने की तालीम दी जाती है।

हमें करना है

एक भाई ने कहा कि आपकी बात तो अच्छी लगती है, परन्तु यह होगा किस तरह? हम कच्चे हैं। 'किस तरह होगा' ऐसा सवाल मत पूछो। हम किस तरह करेंगे, यह सोचो। पहले हमें निश्चय करना चाहिए, फिर अक्ल सूझेगी। अपने गाँव का इन्तजाम क्या नहीं करना? अपना ही करना होगा। गाँव के झगड़े बाहर न जायँ। गाँव में पुलिस की जरूरत न हो। बाद चोरी करेगा भी कौन, जब कि गाँव में मालकियत नहीं है। इस तरह करने से सरकार को मालूम होगा कि इस इलाके में बाहर और पुलिस की

जरूरत नहीं है। इस तरह उन्हें बेकार बनाने की हिम्मत हमें करनी चाहिए। तभी दुनिया सुखी होगी।'

पत्तनागाडी (केरल)
११-८-५

प्राप्ति-पत्र दीजिये : २५ :

आज स्वातन्त्र्य-दिन है। इस दिन कुछ-न-कुछ करना होता है। इसलिए हमने बहुत बड़ा कदम आगे बढ़ाया है। आज सभा में सवेरे एक भाई भूदान-पत्र देने आये। हमने कहा हम दान-पत्र नहीं लेते। वह पुराना रिवाज हो गया। अब हम प्राप्ति-पत्र चाहते हैं। आज से बाबा मालकियत पत्र या प्राप्ति-पत्र ही लेगा, भूदान-पत्र नहीं, चाहे दूसरे भले ही लें।

आज क्या होता है? भूदान देते हैं और जमीन वैसे ही अटकी रहती है। कहते हैं समिति के लोग आयेंगे और बाँटेंगे। जिस माता ने बच्चे को जन्म दिया वह दूध नहीं पिलायेगी? क्या कोई दूसरी बहन आयेगी दूध पिलाने के लिए? इसलिए भूदान-पत्र दाताओं से लो। वह जमीन बाँट दो। जिनको देते हो उनको अधिकार-पत्र दे दो और 'हमें इतनी इतनी जमीन मिली है' ऐसा उनसे स्वीकृति-पत्र लो। यही प्राप्ति-पत्र होगा। इस तरह का नया कदम हमने आज यहाँ उठाया है। इस तरह शुरू से आज तक विचार की प्रगति हुई है। अब आचार शुरू होगा।

करिवेल्लूर (केरल)
१५-८

भारत के दो स्नेह-बन्धन : हिंदी और नागरी : २६

हिंदुस्तान की दूसरी कुल भाषाओं को हम मणियों की उपमा देते हैं, तो हिंदी भाषा इन मणियों को एक साथ पिरोनेवाले सूत की जगह ले लेती है।

जैसे सूत की कीमत मणि से ज्यादा नहीं, पर वह मणियों को एक साथ रखता है।

हिन्दी भाषा प्रेम-तन्तु है

हम बेलूर मठ में थे। वहाँ दक्षिण भारत के कई भाषाभाषी इकट्ठा हुए थे। बेचारे एक दूसरे से अपनी भाषा में बातें नहीं कर सकते थे। पढ़े लिखे थे, इसलिए अंग्रेजी में बातचीत कर लेते थे। फिर भी आम जनता के लिहाज से ऐसा काम तो अंग्रेजी सब लोगों को जोड़नेवाली कड़ी नहीं हो सकती। वह स्थान हिंदी भाषा का ही हो सकता है। मैंने कहा कि वह प्रेम-तंतु है। वह जबरदस्ती का नहीं होता। कैदियों को जकड़कर बाँधनेवाली जंजीर लोहे की होती है। परन्तु प्रेम-तंतु कच्चा होता है। फिर भी लोग प्रेम के कारण उसे टूटने नहीं देते। वैसा ही हिंदी का प्रेम तंतु है।

जो हिंदी का अभिमान रखते हैं और उसकी खींचातानी करते हैं वे उसे तोड़ने की कोशिश करते हैं। अभी पंजाब में हिंदी के लिए नाहक आन्दोलन चलाया गया है। हम किसी पर टीका नहीं करते फिर भी यह कहना चाहते हैं कि अगर हम हिंदी का आग्रह रखेंगे, तो नुकसान होगा। लोग उसे प्रेम से स्वीकार करें यही उसकी ताकत है।

दूसरा स्नेह-तन्तु नागरी

सारे भारत को एक रखने के लिए हम जितने स्नेह बन्धनों से बांध सकते हैं उतने स्नेह बन्धनों की जरूरत है। जैसे हिंदी यह एक स्नेह-तंतु है वैसे ही उतने ही महत्त्व का दूसरा स्नेह-तंतु नागरी लिपि का है। आज भिन्न भिन्न भाषाओं को लोग अपनी-अपनी लिपि में लिखते साथ ही नागरी में भी तो कितना लाभ होता। उनकी लिपि अच्छी है, सुन्दर है हम उसका निषेध नहीं करते। परन्तु उसके साथ ऐच्छिक तौर पर नागरी म अपनी भाषा में लिखना शुरू करते हैं तो सारे भारत की भिन्न-भिन्न भाषाओं को सीखना दूसरों के लिए सुलभ हो जायगा।

नागरी का वैभव

सारे भारत के लिए एक लिपि नागरी ही हो सकती है। कुछ लोग समझते हैं कि वह रोमन लिपि हो सकती है। लेकिन यह उनकी गलत धारणा है। वे नहीं समझते कि आज नागरी का क्या स्थान है। पन्द्रह करोड़ हिंदीभाषी नागरी में लिखते हैं। तीन तथा तीन करोड़ मराठीभाषी अपनी भाषा नागरी में लिखते हैं। दो पौने दो करोड़ गुजराती अपनी भाषा नागरी में लिखते हैं। नागरी और गुजराती थोड़ी ही अलग दीखती है। पर है वह नागरी ही। गुजराती में ऊपर की शीर्षरेखा नहीं देते और दो-तीन अक्षरों का फरक है। फिर नेपाली भाषा जो हिंदुस्तान के बाहर की भाषा है, वह भी नागरी लिपि में लिखी जाती है। हमने पवनार-आश्रम में बैठे-बैठे उस भाषा का अध्ययन किया क्योंकि लिपि नागरी थी। इसके अलावा पंजाबी और नागरी में बहुत थोड़ा फरक है। एक घंटे की मेहनत में एक दूसरे की भाषा सीख सकते हैं। सबसे बड़ी बात यह है कि संस्कृत का कुल आध्यात्मिक साहित्य नागरी लिपि में है। इतना वैभव किसी दूसरी लिपि में नहीं है। इस तरह दस हजार वर्ष का साहित्य और आध्यात्मिक खजाना नागरी लिपि में है। इसके अलावा जैनों के ग्रंथ जो अर्धमागधी में हैं उनकी लिपि भी नागरी है। बौद्धों के त्रिपिटकों का बहुत सारा हिस्सा नागरी में आया है। नागरी के जरिये ही हिंदू, बौद्ध, जैन धर्म के ग्रंथ पढ़ सकते हैं। इसलिए आज की भिन्न भिन्न भाषाएँ भी नागरी में लिखी जायँ तो काफी बल बढ़ेगा।

इसी तरह के परस्पर स्नेह बंधन के साधन जितने बढ़ सकते हैं, उतने बढ़ाने चाहिए। यह स्नेह-बंधन सांस्कृतिक तौर पर हुआ। वैसे ही आर्थिक क्षेत्र में भी स्नेह बंधन रहना चाहिए। इसलिए भूदान, संपत्तिदान हमने निकाला। इसमें भूमिहीन और भूमिवान के बीच स्नेह पैदा होता है। मालिक और मजदूर में प्रेम सम्बन्ध बनता है और समाज एकरस बनाने में भी मदद होती है। नहीं तो आज जाति, धर्म, पंथ के जरिये समाज के टुकड़े पड़े हैं। ये जो विविध भेद हिंदुस्तान में पड़े हैं उन्हें तोड़कर जनम से अभेद की बुद्धि तब आयगी

तभी भारत का रूप बनेगा। हमें सांस्कृतिक, आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक और राजनैतिक क्षेत्र में भारत को एकरस बनाने का हर प्रयत्न करना चाहिए।

भारत की एकात्मता

हमें स्वराज्य मिले दस साल हो गये। अब दूसरे नये दशक में प्रवेश कर रहे हैं। अगले दस सालों में हम भारत को एकरस बनाते हैं, तो समझ लें कि भारत की जय है। यह कठिन नहीं। बाहर से इतने भेद होते हुए भी अन्दर से हम कितनी अधिक आत्मीयता देखते हैं! जो चेहरे आज हम यहाँ देखते हैं वे ही हमने बंगाल, उड़ीसा, बिहार में भी देखे हैं। लोग यह नहीं पूछते कि बाबा किस प्रान्त का है। उन्हें लगता है, यह अपना ही है। हम उड़ीसा के आदिवासी क्षेत्र में घूमते थे। वहाँ कंध-जाति के लोग हैं। वे कहते थे कि बाबा हमारी ही जाति का है, क्योंकि यह हमारे जैसा नंगे बदन रहता है। यह है भारत की एकात्मता। क्या आज यूरोप में कोई सेवक ऐसा है जो रूस की सेवा करता है और साथ ही फ्रांस या इंग्लैंड की भी सेवा करता है? रूस के मसले हल करने को घूमता है, क्या वही फ्रांस के मसले हल करने घूमता है? परन्तु यहाँ केरल की भूमि-समस्या हल करने के लिए बाबा घूम रहा है। उड़ीसा की समस्या हल करने के लिए बाबा घूमा है। वास्तव में बाबा का जन्म हुआ है महाराष्ट्र में लेकिन लोग पूछते नहीं बाबा कहाँ पैदा हुआ? यह भारत की भारतीयता है, एकात्मता है। अगर ऐसा न होता तो शंकराचार्य सारे भारत में कैसे घूम सकते? किस तरह सारे भारत ने उनका स्वागत किया? यह एकात्मता का दर्शन है। भारत की आत्मा एक है। अलबत्ता ही लिबास, खान-पान में फरक होता है पर उससे तो मिठास और बढ़ती है। इसलिए उसका निषेध करने का कारण नहीं है। भारत की एकरसता बनाने का प्रयत्न हमें करना है।

निलेश्वर (केरल)
१८-७-५७

केरल प्रदेश में हमारे करीब २७ हफ्ते बड़े आनंद से बीते। अब इस आखिरी पड़ाव में आनंदाश्रम में आने का हमें सौभाग्य प्राप्त हुआ है। इस आश्रम का अस्तित्व भारत में ही नहीं दुनिया में ख्यात है। परन्तु यही बात यह है कि यह केरल प्रदेश में बसा है। दीपक का प्रकाश जैसा दूर-दूर फैलता है वैसा ही उसके नजदीक भी होता है। इसी तरह ऐसे आश्रम से प्रकाश दूर तक फैलता है, वैसा नजदीक भी होता है।

आनंदाश्रम कार्यकर्ताओं का स्फूर्ति-स्थान बने

केरल प्रदेश के कार्यकर्ताओं ने धर्म-संकल्प किया है। उनका आदर्श है—ग्रामराज्य की स्थापना, सर्वोदय-समाज बनाना, शांति-सेना की तैयारी करना और जमीन की मालकियत मिटाना। यह छोटी बात नहीं है। यहाँ के कार्यकर्ताओं ने ऐसी भाषा बोलना शुरू किया है। यह सब किसके बल पर किया? कुछ कार्य सामान्य मनुष्य की शक्ति से हो सकते हैं। परन्तु कुछ ऐसे भी कार्य होते हैं, जिनके पीछे आध्यात्मिक बल चाहिए, प्रेम का बल चाहिए। सारे कार्यकर्ताओं को यह बल पहुँचाने का काम यह संस्था कर सकती है, ऐसा हमें यहाँ भास हुआ। उपनिषद् में कहानी है। पक्षी सुबह अपना घोंसला छोड़कर दूर जंगल में जाते हैं। शाम होने के बाद शाम को वापस अपने घोंसले में लौटते हैं, तो जंगल-जंगल भटकनेवाले को जो स्थान घोंसला देता है वही स्थान यह आश्रम दे सकता है। कुछ आध्यात्मिक स्फूर्ति की जरूरत पड़ी तो कार्यकर्ता यहाँ आकर रह सकते हैं। यहाँ के लोग भी जहाँ-जहाँ कार्यकर्ता हैं, उनसे जाकर मार्गदर्शन कर सकते हैं। इस तरह केरल के सर्वोदय कार्यकर्ता इस आश्रम के साथ सम्बन्ध जोड़ सकते हैं।

आप लोग जानते हैं कि आज दुनिया की स्थिति डाँवाडोल है। विज्ञान बहुत बढ़ा है। उसके विकास के साथ हमें शांति मिलनी चाहिए। परन्तु आज

उसमें यह शक्ति संहार में लगी है। अग्नि का उपयोग रसोई बनाने के लिए होता है और उससे घर को आग भी लग सकती है। अग्नि स्वयं तटस्थ शक्ति है। वैसे ही शुद्ध विज्ञान की शक्ति तटस्थ है। आत्मज्ञानी उसका उपयोग कल्याण के लिए करेगा और अज्ञानी मानव-संहार के लिए। यह मानव संहार आज हो रहा है, क्योंकि बड़े-बड़े राष्ट्र एक-दूसरे से डरते हैं और इधर शस्त्रास्त्रों के ढेर बना रहे हैं। इतना ही नहीं वे शस्त्र अच्छे बने हैं या नहीं यह देखने के लिए प्रयोग करते हैं। उसके दुष्परिणाम हवा में फैलते हैं और उसका बुरा असर होता है। एक वैज्ञानिक ने कहा है कि ऐसे ही प्रयोग चलते रहेंगे, तो आगामी शिशु अधम पैदा होंगे।

राम-नाम की ताकत

आज अखबार में हमने खबर पढ़ी। कश्मीर में एक तालाब की कुछ की कुछ मछलियाँ मर गयीं। वैज्ञानिकों का कहना है, अणु-रश्मिक्रिया के कारण मछलियाँ मरी हैं। ऐटम हाइड्रोजन के प्रयोग यहाँ से दूर हुए हैं पर सारे वातावरण में उसका विष फैल रहा है। ऐसा विष फैलानेवाले अस्त्रों के यहाँ ढेर लगे हैं। वातावरण में परमाणु फैलाने का हिंदुस्तान का अपना अभिनव ढंग है। हम इस आश्रम की लाइब्रेरी देखने गये थे। वहाँ राम नाम लिखे कापियों के ढेर के ढेर थे। वे अच्छी तरह ओरे की आलमारियों में बहुत हिफाजत से रखे थे। उसका परिणाम यह होगा कि कुछ दुनिया में स्वच्छ सुन्दर अमृत परमाणु फैल जायँगे। जैसे कश्मीर की मछलियाँ हवा में विष के परमाणु फैलने से मरती हैं, वैसे ही यहाँ के अमृत बिन्दु अमेरिका के लोगों को मिलने चाहिए। यह है हमारे पागल हिंदुस्तान का तरीका। यह हिंदुस्तान को ही सूझ सकता है।

चीनी यात्री कीय पू हांग ने लिखा है : 'इंडिया इज गॉड इण्टॉक्सीकेटेड लैंड' (भारत ईश्वर के पीछे पागल है) यह भारत का निस्सीम गौरव है। आज भी वैसा ही भाव बना है। उधर ऐटम और हाइड्रोजन बम के ढेर बन रहे हैं और इधर संग्रह हो रहा है राम-नाम का। ये इन कागजी ऐटम बम से क्या बच सकते हैं। एक ऐटम बम पड़ेगा तो कागज

भी ख़तम और रामनाम लिखनेवाला भी ख़तम। फिर भी भारत बची है इसका कारण है और वही ताकत है जिसने भारत को बचाया। हिंदुस्तान पर पुराने ज़माने से कम आक्रमण नहीं हुए हैं। आज यूनानी रोमन संस्कृति केवल स्मृति में ही मिलती है। लेकिन अनेक आक्रमणों के बावजूद भारत की आत्मा पराजित नहीं हुई। भारत की संस्कृति कायम रही। उसने अपना सिर ऊँचा रखा। इसलिए आज यहाँ के लोगों का पागलपन देखकर हमें आनंद हुआ। हमें आशा यह ताकत भूदान काम के लिए मदद दे सकती है।

राम-नाम भक्तों का अधिक बचाव करता है

हरएक मनुष्य के मन का बचाव रामनाम करता है। उसमें भी कुछ पक्षपात जरूर होगा। हनुमान् का ज्यादा बचाव होगा भारत का ज्यादा बचाव होगा। यह शंकराचार्य ने अपने भाष्य में उपमा देकर अच्छी तरह समझाया है। उन्होंने कहा है कि परमेश्वर अग्नि के समान समभावयुक्त है। अग्नि के जो नजदीक रहेगा उसे ज्यादा गर्मी पहुँचेगी और जो दूर रहेगा उसे गर्मी नहीं पहुँचेगी। यह अग्नि का दोष नहीं उससे नजदीक और दूर रहनेवाले का दोष है। अग्नि निष्पक्ष होती है। इसी तरह दुनिया के सब लोग रामनाम का आशीर्वाद प्राप्त कर सकते हैं। हम समझते हैं कि ग्रामदान और भूदान का आशीर्वाद प्राप्त होने का अधिकारी है। हम चाहते हैं कि केरल के सब सर्वोदय कार्यकर्ता इस बल का उपयोग करें।

कर्म भक्ति का योग हो

हमने बहुत दफा कहा है कि ग्रामदान विश्व शान्ति के लिए बोट है। लेकिन यह बोट ही नहीं उससे आध्यात्मिक शक्ति बढ़ती है और प्यार के परमाणु सारी दुनिया में फैलते हैं। इन परमाणुओं का रामनाम के बल का बल मिलता है तो वह रामबाण बनेगा। आज हमें आशा हुई कि हमारे कार्यकर्ताओं का ध्यान कर्म न भाव के साथ संयोग बन सकता है। शास्त्रों में बहुत दफा भक्त और परमात्मा के युद्ध करने की बात आती है। वेद में कहा है: "अरे इंद्र तुम और हम युद्ध करें —[illegible] इत्यादि संयुगाव। यहाँ परमेश्वर को ललकार

संज्ञा दी है। इन्द्र माने 'इंद्र-द्रष्टा'। परमेश्वर से भक्त कह रहा है, तेरा और मेरा जोड़ा बन जायगा, तो बड़ा ही सुख होगा। कर्मयोग की भक्ति के साथ योग की बात प्राचीन काल से चल रही है। गीता में भी यही कहा है। लेकिन कर्मयोग में इतनी नम्रता होनी चाहिए कि वह भक्ति की शरण जाकर उसका आश्रय ले। इसी तरह भक्ति में इतना वात्सल्य होना चाहिए कि वह कर्मयोग को अपना पोषण दे। भक्ति मातृस्थानीय है, कर्मयोग पुत्रस्थानीय। माता पराक्रम का काम अपने पुत्र के जरिये करती है और उसे स्वयं पोषण देती है। यही गीता में अर्जुन और कृष्ण के बारे में दीखता है। इसी तरह इस स्थान से हम भक्ति और कर्मयोग के योग की अपेक्षा करते हैं। यह सारा विषय विस्तार से हमने अपने गीता प्रवचन में कहा है। वह पुस्तक बहुतों के पास पहुँची है।

कालडि (केरल)
१०-८-२०

शान्ति-सेना की स्थापना : २८ :

[प्रार्थना-सभा के पहले शांति-सेना के संगठन की घोषणा की गयी और शांति-सैनिक के नाते केरल के आठ कार्यकर्ताओं ने प्रतिज्ञाएँ कीं। उसके बाद प्रतिज्ञा-पत्र पू. बाबा को समर्पित किये गये।]

केरल की विशेषता : शांति-सेना की स्थापना

आज हमारी केरल-यात्रा का अंतिम दिन है। अभी यहाँ आपकी उपस्थिति में एक गंभीर प्रसंग हुआ। शांति-सेना की स्थापना केरल की विशेषता मानी जायगी। ग्रामदान तो तमिलनाड में हुए थे, उड़ीसा में भी हुए और दूसरे प्रांतों में भी हुए हैं। पहले केरल के कार्यकर्ताओं को उतना विश्वास नहीं था कि यहाँ ग्रामदान होंगे। परन्तु देखा गया कि यहाँ की जनता की उदारता दूसरे किसी प्रान्त की जनता से कम नहीं है। यहाँ भी सैकड़ों ग्रामदान हुए हैं। ग्रामदान के गाँव छोटे हैं। आरंभ में ऐसा ही होता है। आगे बड़े बड़े गाँव भी

मिलेंगे। फिर भी ग्रामदान केरल की विशेषता नहीं। यहाँ ग्रामदान के आगे का चरम उत्साह है और वह है शांति सेना की स्थापना।

आज यहाँ आठ लोगों ने प्रतिज्ञा ली। शांति-सेना की प्रतिज्ञा लेने का अर्थ यह होगा कि वे अपना जीवन और प्राण जन-सेवा में अर्पण करते हैं। वे अपनी सेवा में किसी प्रकार का भेदभाव नहीं रखेंगे। अहिंसा और सत्य पर हमेशा चलने की कोशिश करते रहेंगे और लोगों को उसी राह पर ले जायेंगे।

बुनियाद बनी

अब केरल की तरफ सारे भारत का यानी दुनिया का ध्यान रहेगा। क्योंकि यहाँ शांति-सेना का आरंभ हुआ है। यहाँ के कार्यकर्ताओं पर प्रभु ने बड़ी भारी जिम्मेदारी डाली है। वह उन्होंने विश्वास के साथ उठायी है। हम नहीं चाहते कि आज ज्यादा लोग प्रतिज्ञा लें। हम केवल दिखावा नहीं पक्की बुनियाद चाहते हैं। वह बुनियाद आज आठ लोगों ने डाली है। आगे दिन व दिन कार्य बढ़ेगा। पहले सैकड़ों लोकसेवक बनेंगे, उनमें से शांति सैनिक होंगे।

गांधीजी आज अधिक काम कर रहे हैं

भारत में शांति सेना होगी, यह महात्मा गांधीजी की इच्छा थी। उसके लिए कोशिश भी काफी की गयी थी। परन्तु उस वक्त हम सारे उनके साथी कमजोर थे। महापुरुषों की आत्मा शरीर में रहते जितना काम करती है, उससे ज्यादा काम शरीर से मुक्त होने पर करती है। इसलिए गांधीजी ने शरीर में रहते जो कार्य किया उससे ज्यादा काम आज हो रहा है।

मंजेश्वरम् (केरल)
२१-८-'५७

हकदार कौन और बेहकदार कौन ?

अभी यहाँ हम दिये गये मानपत्र में यह उल्लेख है कि जिनके पास है, उनसे लेना है और जिनके पास नहीं है उन्हें देना है। सोचने की बात यह है कि हकदार कौन है और बेहकदार कौन है। आरंभ में हम भी इसी तरह सोचते थे कि जिनके पास भूमि या सम्पत्ति है, वे भूमिहीनों संपत्तिहीनों को भूमि और सम्पत्ति दें। भूमिवाले और संपत्तिवाले हकदार हैं और भूमिहीन संपत्तिहीन हकहीन। लेकिन इस भाषा में धीरे धीरे हमारी बुद्धि के पटल खुल गये। आकाश सेवन से बुद्धि विशाल बनती है। सूर्य किरणों के सेवन से तेजस्वी बनती है और हवा के सेवन से मुक्त बनती है। हमारी बुद्धि भी धीरे धीरे व्यापक होती गयी उसमें प्रकाश आया। वह मुक्त होती गयी। अब यह विचार स्पष्ट हुआ है कि इस दुनिया में बेहकदार कोई नहीं है। भगवान् ने हरएक को कुछ-न-कुछ दे ही रखा है। वह ऐसा निष्ठुर नहीं कि किसीको बेहकदार बनाये। उसने किसीको बुद्धि दी है, तो किसीको श्रम शक्ति; किसीको भूमि दी है, तो किसीको संपत्ति। और भी पचासों प्रकार के दान उसने दिये हैं। उसने हरएक को पाँच इंद्रियाँ दी हैं सुन्दर नर देह दी है। हरएक को माता के उदर में जन्म दिया है। मातृ-प्रेम दिया है, पिता का प्रेम दिया है। ऐसी बहुत-सी चीजें उसने हरएक को दी हैं। कोई चीज किसीको कम मिली है तो कोई चीज ज्यादा। इसमें उसका पक्षपात नहीं। जिसकी जितनी वासना थी जैसी करनी थी उसके अनुसार उसे चीज मिली। आप किसी बनिये की दूकान पर जाइये। वहाँ भी शक्कर, गुड़ आदि कई चीजें होने पर भी दियासलाई माँगिये, तो वह आपको दियासलाई ही देगा। जो चीज अच्छी है उसे वह अपनी ओर से नहीं देगा। आप जो

कुछ नहीं हुआ। जो प्रेम वह अपने लड़के को दे सकता है, क्या वह दूसरों को नहीं दे सकता? परन्तु मान लीजिये उसे भगवान् का विचार सूझा कि मुझे भी समाज को कुछ न कुछ देना है। फिर उसे जिस किसी मनुष्य का दर्शन होगा उसका हृदय भर आयेगा और वह उसे खूब प्रेम देगा। तो, उसमें न्यून नहीं चीज थी। ऐसे मनुष्य के दर्शन के लिए सब लोग लालायित रहेंगे। वे लोग कहेंगे कि यह एक पुरुष है, जिसे हरएक के दर्शन में भगवान् का ही दर्शन होता है वह सबको प्रेम ही प्रेम देता है। प्रेम तो हरएक के पास पड़ा है। परन्तु वह अपने-अपने परिवार के लिए सीमित रखता है। यह उसके लिए दूषण नहीं है।

मैं कहना यह चाहता हूँ कि इस दुनिया में 'मुफ्तखोर' कोई नहीं है। अपने पास देने की जो चीज पड़ी है उसे हम छिपा रखते हैं यह पाप विचार है। इसलिए ऐसी गलतफहमी में मत रहिये कि इतने चन्द लोगों का धन देना है और चन्द लोगों का काम लेना है। जो धर्म होता है वह सबको लागू होता है। सत्य बोलना करुणा प्रेम आदि धर्म है। यह सबको लागू है। अगर यह धर्म विचार चन्द लोगों को लागू होता है और चन्द को लागू न होता तो समझना चाहिए कि यह धर्म विचार ही नहीं है।

निष्काम सेवक की दुर्लभता

इन दिनों जिसे हम निष्काम सेवा कहते हैं वह चीज बड़ी दुर्लभ हो गयी है। हम आज भी ढूँढ रहे हैं कि निष्काम सेवक कहाँ है? इन दिनों सार्वजनिक कार्य के नाम से कुछ काम चलता है, परन्तु उसमें मत्सर, सत्ता का लोभ, कीर्ति की अभिलाषा आदि होती है। आज लोगों को बहुत सारी सेवा सत्ता के जरिये करने का लोभ हो गया है। म्युनिसिपैलिटी, जिला बोर्ड, असेम्बली, सरकार आदि सब सेवा के साधन हैं। लोग उनमें जाना चाहते हैं। वहाँ स्पर्धा चलती है। एक स्थान के लिए दस व्यक्ति खड़े हो जाते हैं। अगर सेवा की भावना हो तो एक स्थान के लिए दस खड़े हों यह अच्छा ही माना जायगा। परन्तु उसमें केवल सेवा की भावना नहीं होती सत्ता की भावना भी होती है। वहाँ हम चाहे

हैं। यही देखते हैं कि मनुष्य चाहता है कि हम सत्ता के जरिये समाज में अपना कुछ-न-कुछ चलावें; माने हम सेवा करना नहीं चाहते, बल्कि अपना स्थान जमाना चाहते हैं। ऐसी सेवा से कोई उल्लेखनीय काम नहीं बनता। सेवा विशुद्ध सेवा के लिए होनी चाहिए।

विराजपेट (मैसूर)
११ २०

विश्व-स्वराज्य, ग्राम-स्वराज्य, आत्मस्वराज्य : ३० :

'वन वर्ल्ड' का स्वप्न

कुर्ग की जनता का उत्साह देखकर ही हमने कहा था कि यहाँ सर्वोदय-राज्य होना चाहिए। वह हो सकता है। आप जानते हैं कि धीरे-धीरे दुनिया के देश एक-दूसरे के नजदीक आ रहे हैं। अब वह दिन दूर नहीं, जब कि 'वन वर्ल्ड' (एक विश्व) का स्वप्न साकार हो सकता है। विज्ञान ने ऐसे हिंसक शस्त्र बनाये हैं कि उनसे मनुष्य जाति का खात्मा ही होने का भय पैदा हुआ है। जहाँ हिंसा-शक्ति ने इतना विकराल रूप धारण कर लिया, वहाँ अब शक्ति अहिंसा की शरण आ जायगी। वह दिन बहुत दूर है, ऐसा हम नहीं समझते। तब हर देश का नागरिक कुल दुनिया का नागरिक होगा। जैसे आज कुर्ग का नागरिक कन्नड़ प्रदेश का और भारत देश का नागरिक है, वैसे ही वह दुनिया का भी नागरिक होगा। आज कुर्ग का मनुष्य सारे भारत में कहीं भी बेरोक-टोक जा सकता है, काम कर सकता है। हम वह दिन लाना चाहते हैं, जब किसी भी देश का नागरिक दुनिया में कहीं भी बेरोक-टोक जा सके, कहीं भी प्रेम से सेवा कर सके, अपना धंधा कर सके। किसी भी देश के नागरिक को दुनिया का नागरिकत्व हासिल होगा। उसके पूरे हक हासिल होंगे। वह दिन नजदीक आ रहा है। ऐसा स्पष्ट दर्शन हमें हो रहा है।

है, यही देखते हैं कि मनुष्य चाहता है कि हम सत्ता के जरिये समाज में अपना कुछ न कुछ जमायें यानी हम सेवा करना नहीं चाहते बल्कि अपना स्थान जमाना चाहते हैं। ऐसी सेवा से कोई उल्लेखनीय काम नहीं बनता। सेवा विशुद्ध सेवा के लिए होनी चाहिए।

सिराजपेट (मैसूर)
११ २०

विश्व-स्वराज्य, ग्राम-स्वराज्य, आत्मस्वराज्य : ३०

'वन वर्ल्ड' का स्वप्न

कुर्ग की जनता का उत्साह देखकर ही हमने कहा था कि यहाँ सर्वोदय-राज्य होना चाहिए। यह हो सकता है। आप जानते हैं कि धीरे-धीरे दुनिया के देश एक-दूसरे के नजदीक आ रहे हैं। अब वह दिन दूर नहीं जब कि 'वन वर्ल्ड' (एक विश्व) का स्वप्न साकार हो सकता है। विज्ञान ने ऐसे हिंसक शस्त्र बनाये हैं कि उनसे मनुष्य-जाति का खात्मा ही होने का भय पैदा हुआ है। जहाँ हिंसा-शक्ति ने इतना विकराल रूप धारण कर लिया वहाँ अब शक्ति अहिंसा की शरण आ जायगी। वह दिन बहुत दूर है ऐसा हम नहीं समझते। तब हर देश का नागरिक कुल दुनिया का नागरिक होगा। जैसे आज कुर्ग का नागरिक कन्नड़ प्रदेश का और भारत देश का नागरिक है, वैसे ही वह दुनिया का भी नागरिक होगा। आज कुर्ग का मनुष्य सारे भारत में कहीं भी बेरोक टोक जा सकता है काम कर सकता है। हम वह दिन लाना चाहते हैं, जब किसी भी देश का नागरिक दुनिया में कहीं भी बेरोक टोक जा सके कहीं भी प्रेम से सेवा कर सके, अपना धंधा कर सके। किसी भी देश के नागरिक को दुनिया का नागरिकत्व हासिल होगा। उसके पूरे हक हासिल होंगे। वह दिन जल्दी आ रहा है। ऐसा स्पष्ट दर्शन हमें हो रहा है।

समर्पण करें, तो ग्रामदान का और एक हिस्सा होगा। यह नहीं सोचना चाहिए कि मेरे पास क्या नहीं है। बल्कि यही सोचना चाहिए कि मेरे पास देने की क्या चीज है? मान लीजिये, वह शख्स दुर्बल है परन्तु पढ़ा लिखा है तो वह अपनी सेवा गाँव को समर्पण करे, विद्या गाँव को दे।

आप कहेंगे कि आज भी यही होता है मजदूर गाँव की सेवा करता है, गुरु पढ़ाता है, व्यापारी, साहूकार पैसे देते ही हैं। हाँ वे देते हैं पर वह दान नहीं है समर्पण नहीं है वह सौदा है। हम इतना दें, तो उसमें से इतना लेना है। यह लेन देन तो दुनिया में चल ही रही है। परन्तु दान में केवल समर्पण की बात है। इस पर कोई पूछेगा : 'तो क्या हमें कुछ भी वापस नहीं मिलेगा ?" नहीं आपको वापस जरूर मिलेगा, पर वह समाज की तरफ से प्रसाद के रूप में। समाज की तरफ से उसका यथाशक्ति संरक्षण होगा। हमें इतना वापस मिलना चाहिए, यों सोचकर हम नहीं देते—निरपेक्ष बुद्धि से गाँव को समर्पण कर देते हैं, तो ग्रामदान पूरा हो जाता है। विद्यादान से ग्रामदान का एक हिस्सा पूरा होता है।

फिर भी आप कोई ऐसा शख्स खोज निकालेंगे, जिसके पास न जमीन है, न संपत्ति न बुद्धि है न श्रम शक्ति। बीमार होकर अस्पताल में पड़ा है। पूछेंगे वह क्या देगा? उसकी सेवा में दूसरों को बहुत कुछ देना पड़ता है। लेकिन उसके पास भी देने की चीज है। हमें अपने अंदर की परीक्षा करनी चाहिए कि क्या मेरे पास कोई चीज है, जिसे मैं दे सकता हूँ और क्या मैं उसे दे रहा हूँ। उस बीमार के पास भी देने की कोई चीज है। वह बूढ़ा है उसका लड़का उससे मिलने आया। बूढ़े ने लड़के की ओर बहुत प्यार से देखा। उसकी आँखों से धारा बहने लगी। उसने अपने बेटे को प्रेम दिया। उसके पास देने की कोई चीज नहीं थी। परन्तु जहाँ उसने अपने बेटे को देखा उसका प्रेम हृदय में नहीं भरा। प्रेम का प्रवाह बाहर फूट पड़ा। उसने अपने बेटे को प्रेम का स्नान कराया। वह लड़का चला गया और थोड़ी देर बाद गाँव का दूसरा कोई लड़का आया। बूढ़े ने उसकी ओर भी देखा, लेकिन सिर्फ देखा ही और

कुछ नहीं हुआ। जो प्रेम वह अपने लड़के को दे सकता है क्या वह दूसरों को नहीं दे सकता? परन्तु मान लीजिये, उसे ग्रामदान का विचार जँचा कि मुझे भी समाज को कुछ न कुछ देना है। फिर उसे जिस किसी मनुष्य का दर्शन होगा, उसका हृदय भर आयेगा और वह उसे खूब प्रेम देगा। तो, उसने अद्भुत नई चीज दी। ऐसे मनुष्य के दर्शन के लिए सब लोग आकर्षित होंगे। वे लोग मानेंगे कि यह एक पुरुष है, जिसे हरएक के दर्शन में भगवान् का ही दर्शन होता है और वह उनको प्रेम ही प्रेम देता है। आज भी हरएक के पास प्रेम पड़ा है। परन्तु वह अपने अपने परिवार के लिए सीमित रखता है। वह सबके लिए खुला नहीं है।

मैं कहना यह चाहता हूँ कि इस दुनिया में 'मुस्तसना' कोई नहीं है। अपने पास देने की जो चीज पड़ी है, उसे हम दिल खोलकर दें यह दान विचार है। इसलिए ऐसी गलतफहमी में मत रहिये कि इसमें चन्द लोगों का काम देना है और अन्य लोगों का काम लेना है। जो धर्म होता है, वह सबको लागू होता है। सत्य बोलना करुणा प्रेम आदि धर्म है। वह सबको लागू है। अगर यह दान विचार चन्द लोगों को लागू होता है और चन्द को लागू न होता तो समझना चाहिए कि यह धर्म विचार ही नहीं है।

निष्काम सेवक की दुर्लभता

इन दिनों जिसे हम निष्काम सेवा कहते हैं वह चीज बड़ी दुर्लभ हो गयी है। हम आज यही ढूँढ रहे हैं कि निष्काम सेवक कहाँ हैं? इन दिनों सार्वजनिक कार्य के नाम से कुछ कार्य चलता है परन्तु उसमें मत्सर सत्ता का लोभ कीर्ति की अभिलाषा आदि होती है। आज लोगों को बहुत सारी सेवा सत्ता के जरिये करने का लोभ हो गया है। म्युनिसिपैलिटी जिला बोर्ड असेम्बली सरकार आदि सब सेवा के साधन हैं। लोग उसमें जाना चाहते हैं। वहाँ स्पर्धा चलती है। एक स्थान के लिए दस व्यक्ति खड़े हो जाते हैं। अगर सेवा की भावना हो तो एक स्थान के लिए दस खड़े हों यह अच्छा ही माना जायगा। परन्तु उसमें केवल सेवा की भावना नहीं होती सत्ता की भावना भी होती है। वहाँ हम जाते

हैं यही देखते हैं कि मनुष्य चाहता है कि हम सेवा के जरिये समाज में अपना कुछ न कुछ बनायें; माने हम सेवा करना नहीं चाहते बल्कि अपना स्थान जमाना चाहते हैं। ऐसी सेवा से कोई उल्लेख्य काम नहीं बनता। सेवा विशुद्ध सेवा के लिए होनी चाहिए।

शिरालकोप (मैसूर)
२१ २७

विश्व-स्वराज्य, ग्राम-स्वराज्य, आत्मस्वराज्य : १० :

'वन वर्ल्ड' का स्वप्न

कुर्ग की जनता का उत्साह देखकर ही हमने कहा था कि यहाँ सर्वोदय-राज्य होना चाहिए। यह हो सकता है। आप जानते हैं कि धीरे धीरे दुनिया के देश एक-दूसरे के नजदीक आ रहे हैं। अब वह दिन दूर नहीं जब कि 'वन वर्ल्ड' (एक विश्व) का स्वप्न साकार हो सकता है। विज्ञान ने ऐसे हिंसक शस्त्र बनाये हैं कि उनसे मनुष्य जाति का खात्मा ही होने का भय पैदा हुआ है। जहाँ हिंसा-शक्ति ने इतना विकराल रूप धारण कर लिया वहाँ अब शक्ति अहिंसा की शरण आ जायगी। वह दिन बहुत दूर है ऐसा हम नहीं समझते। तब हर देश का नागरिक कुल दुनिया का नागरिक होगा। जैसे आज कुर्ग का नागरिक कन्नड प्रदेश का और भारत देश का नागरिक है, वैसे ही वह दुनिया का भी नागरिक होगा। आज कुर्ग का मनुष्य सारे भारत में कहीं भी बे रोक टोक आ जा सकता है, काम कर सकता है। हम वह दिन लाना चाहते हैं, जब किसी भी देश का नागरिक दुनिया में कहीं भी बे-रोक टोक जा सके, कहीं भी प्रेम से सेवा कर सके, अपना धंधा कर सके। किसी भी देश के नागरिक को दुनिया का नागरिकत्व हासिल होगा। उसके पूरे हक हासिल होंगे। वह दिन जल्दी आ रहा है। ऐसा स्पष्ट दर्शन हमें हो रहा है।

कुछ नहीं हुआ। जो प्रेम वह अपने लड़के को दे सकता है, क्या वह दूसरों को नहीं दे सकता? परन्तु मान लीजिये, उसे साम्ययोग का विचार जँचा कि मुझे भी समाज को कुछ-न-कुछ देना है। फिर उसे जिस किसी मनुष्य का दर्शन होगा, उसका हृदय भर आयेगा और वह उसे खूब प्रेम देगा। तो उसने बहुत बड़ी चीज दी। ऐसे मनुष्य के दर्शन के लिए सब लोग आकर्षित होंगे। वे लोग कहेंगे कि यह सत्पुरुष है जिसे हरएक के दर्शन में भगवान् का ही दर्शन होता है, वह सबको सम ही प्रेम देता है। आज भी हरएक के पास प्रेम पड़ा है। परन्तु वह अपने-अपने परिवार के लिए सीमित रखा है। वह उनके लिए कृपण नहीं है।

मैं कहना यह चाहता हूँ कि इस दुनिया में 'दरिद्रवर्ग' कोई नहीं है। अपने पास देने की जो चीज पड़ी है उसे हम दिल खोलकर दें, यह दान-विचार है। इसलिए ऐसी गलतफहमी में मत रहिये कि इसमें कुछ लोगों का काम देना है और अन्य लोगों का काम लेना है। जो धर्म होता है, वह सबको लागू होता है। सत्य, अहिंसा, करुणा, प्रेम आदि धर्म हैं। वह सबको लागू है। अगर यह दान-विचार कुछ लोगों को लागू होता है और चंद को लागू न होता, तो समझना चाहिए कि यह धर्म-विचार ही नहीं है।

निष्काम सेवक की दुर्लभता

इन दिनों जिसे हम निष्काम सेवा कहते हैं, वह चीज बड़ी दुर्लभ हो गयी है। हम आज बड़ी ढूँढ़ रहे हैं कि निष्काम सेवक कहाँ हैं। इन दिनों सार्वजनिक कार्य के नाम से कुछ काम चलता है, परन्तु उसमें मत्सर, सत्ता का लोभ, कीर्ति की अभिलाषा आदि होती है। आज लोगों को बहुत सारी सेवा सत्ता के जरिये करने का लोभ हो गया है। म्युनिसिपैलिटी, जिला बोर्ड, असेम्बली, सरकार आदि सब सेवा के साधन हैं। लोग उसमें जाना चाहते हैं। वहाँ स्पर्धा चलती है। एक स्थान के लिए दस व्यक्ति खड़े हो जाते हैं। अगर सेवा की भावना हो तो एक स्थान के लिए दस खड़े हों, यह अचम्भा ही माना जाता। परन्तु उसमें केवल सेवा की भावना नहीं होती, सत्ता की भावना भी होती है। वहाँ हम जाते

है, यही देखते हैं कि मनुष्य चाहता है कि हम सेवा के जरिये समाज में अपना कुछ न कुछ बनावें यानी हम सेवा करना नहीं चाहते बल्कि अपना स्थान बनाना चाहते हैं। ऐसी सेवा से कोई उल्लेखनीय काम नहीं बनता। सेवा निष्काम सेवा के लिए होनी चाहिए।

[illegible] (मैसूर)
१ १ २०

विश्व-स्वराज्य, ग्राम-स्वराज्य, आत्मस्वराज्य : ३०

'वन वर्ल्ड' का स्वप्न

कुर्ग की जनता का उत्साह देखकर ही हमने कहा था कि यहाँ सर्वोदय-राज्य होना चाहिए। यह हो सकता है। आप जानते हैं कि धीरे धीरे दुनिया के देश एक-दूसरे के नजदीक आ रहे हैं। अब वह दिन दूर नहीं जब कि 'वन वर्ल्ड' (एक विश्व) का स्वप्न साकार हो सकता है। विज्ञान ने ऐसे हिंसक शस्त्र बनाये हैं कि उनसे मनुष्य जाति का खात्मा ही होने का डर पैदा हुआ है। जहाँ हिंसा-शक्ति ने इतना विकराल रूप धारण कर लिया वहाँ अब शक्ति अहिंसा की शरण आ जायगी। वह दिन बहुत दूर है ऐसा हम नहीं समझते। तब हर देश का नागरिक कुल दुनिया का नागरिक होगा। जैसे आज कुर्ग का नागरिक कन्नड प्रदेश का और भारत देश का नागरिक है, वैसे ही वह दुनिया का भी नागरिक होगा। आज कुर्ग का मनुष्य सारे भारत में कहीं भी बेरोक-टोक आ जा सकता है काम कर सकता है। हम वह दिन देखना चाहते हैं, जब किसी भी देश का नागरिक दुनिया में कहीं भी बेरोक-टोक जा सके, कहीं भी काम या सेवा कर सके, अपना धंधा कर सके। किसी भी देश के नागरिक को दुनिया का नागरिकत्व हासिल होगा। उसके पूरे हक हासिल होंगे। वह दिन नजदीक आ गया है। ऐसा स्पष्ट दर्शन हमें हो रहा है।

आज एक गाँव के भाई हमसे मिलने आये थे। वे ग्रामदान के बारे में सोच रहे हैं। हमने अपने मन में सोचा कि वे लोग क्या सोचते होंगे! क्या आज के समाज में भाई निर्भयता से रहता है? फिर उसे छोड़ने में डर क्यों मालूम हो? एक सुन्दर बिछौना है, परन्तु उस पर साँप पड़ा है यह मालूम होने पर भी क्या उसका मोह होगा? हमें यह भान होना चाहिए कि आज के समाज में जो ऊँच-नीच आदि भेद हैं वे सारे साँप हैं। उनसे दुनिया पर सेना भी ही लद चल सकती है। और जब तक हम सेना की सत्ता मान्य करेंगे तब तक दुनिया में लड़ाई खतम नहीं होगी। इसलिए सर्वोदय-राज्य की भावना हम इस प्रकार करेंगे कि गाँवों के झगड़े बाहर के कोर्ट में न जायँ। जब लोग झगड़ा नहीं करेंगे तो वकील बेकार बनकर बाबा के पास जमीन माँगने आयेंगे। वे किसान बनेंगे, तब सर्वोदय राज्य होगा। गाँव गाँव के लोग यह नियम कर सकते हैं कि हमारे गाँव का झगड़ा बाहर नहीं जायगा। लेकिन सिर्फ ऐसा नियम करने से काम नहीं बनेगा। उसके लिए गाँव की रचना ही ऐसी करनी होगी कि गाँव में झगड़े न हों।

जब हमसे पूछा जाता है कि क्या ग्रामराज्य के लिए ग्रामदान करना ही पड़ेगा, तो हम जवाब देते हैं कि तुम ग्रामदान से डरते क्यों हो। हमें ग्रामदान से मतलब नहीं है, हम तो ग्राम स्वराज्य चाहते हैं। तुम अगर यह जिम्मेवारी उठाओ कि अपने गाँव के हर मनुष्य को पूरा खाना मिलेगा, काम और उत्तम शिक्षण मिलेगा तो हो गया ग्रामदान! उसके लिए जमीन की मालकियत मिटानी पड़ती है। यह तो बुनियाद है। मकान ग्राम मंदिर है। इसमें सारे गाँव का एक परिवार बनाकर लोग प्रेम से रहते हैं, सर्वसम्मति से गाँव का कारोबार चलाते हैं।

सर्वोदय राज्य में ऊँच-नीच का भेद नहीं रहेगा। पाँच अँगुलियों के जैसी समता रहेगी। पाँचों अँगुलियाँ समान हैं, पर बिलकुल समान नहीं। उनमें थोड़ी सी विषमता है, बहुत ज्यादा नहीं। हर अँगुली की अलग अलग ताकत है और पाँचों सहयोग से काम करती हैं। इसे हम विवेकयुक्त समता का

मुकम्मल करते हैं। अपने गाँवों में हरएक की अलग अलग शक्ति विकसित होनी चाहिए और सबका सहयोग होना चाहिए।

गाँव छोटी इकाई और देश बड़ी

गाँव में अच्छे सेनापति, अच्छे प्रधानमंत्री दार्शनिक, कवि साहित्यिक चित्रकार, व्यापारी वैद्य, संगीतज्ञ सब निकलने चाहिए। लेकिन आज हिंदुस्तान की हालत यह है कि पंडित नेहरू अगर प्रधानमंत्री पद से हटने की बात करते हैं तो लोग सोचते हैं कि फिर अपना क्या होगा? लेकिन इस तरह क्यों रोते हो? आखिर पंडित नेहरू करते क्या हैं? वे कारोबार चलाते हैं। कारोबार चलाना तो एक मामूली बात होनी चाहिए और गाँव गाँव में कारोबार चलानेवाले निकलने चाहिए। देश में जो करना पड़ता है, वो गाँव में करना पड़ता है। गाँव में सफाई करनी पड़ती है, तो देश में सेनीटेशन की व्यवस्था करनी पड़ती है। गाँव में तालीम, रक्षण जैसे अच्छे रास्ते, अच्छी फसल, आरोग्य आदि सब करना पड़ता है। एक गाँव का दूसरे गाँव के साथ सम्बन्ध आता है। वैसे ही एक देश का दूसरे देश के साथ आता है। जितना देश में चाहिए, सारा गाँव में चाहिए। एक छोटी इकाई है और दूसरी बड़ी। फिर कारोबार चलानेवालों की कमी क्या होनी चाहिए? एक ग्राम से पचासों आने चाहिए। परन्तु आज हमें कारोबार चलाने की आदत नहीं। हम अपने को अनाम समझते हैं। इसलिए सारी जिम्मेदारी योजना-आयोग पर सौंप देते हैं। आज ग्राम नियोजन नहीं राष्ट्रीय नियोजन है। माना जाता है कि सोचने का काम दिल्लीवालों का है हमारा नहीं। होना तो यह चाहिए कि गाँव का कारोबार गाँव में चले।

स्कूल के लड़के जानते हैं कि जो सिद्धान्त एक छोटे त्रिकोण में सिद्ध हुआ उसे बड़े त्रिकोण में फिर से सिद्ध नहीं करना पड़ता। आप अपने गाँव में कारोबार चलाने का काम सीखेंगे तो वह देश के काम में आयेगा। मान लो कि किसी गाँव का कारोबार बहुत अच्छा चलता है। वहाँ हिंदू मुसलमान ईसाई सब हैं। गाँववालों ने दोनों की तालीम की अच्छी योजना बनायी है, उसे सब लोग बड़े प्रेम से चलाते हैं। अगर दिल्लीवालों के सामने समस्या आयी कि देश

में जो भिन्न भिन्न धर्मों के लोग हैं उन सबके विकास की व्यवस्था कैसे की जाय तो गाँव के लोग कहेंगे कि हमने अपने गाँव में यह व्यवस्था कर ली है। दिल्ली वाले योजना आयोग का सदस्य उस गाँव में देखने आयेगा कि गाँववालों ने किस तरह योजना बनायी है, फिर वही नमूना देश को लागू किया जा सकेगा। देहली में बहुत झगड़े चलते हैं और कोर्ट में मामले मुकदमे चलते हैं। किसी गाँव के लोग कहेंगे कि हमने अपने गाँव में ऐसी अच्छी व्यवस्था की है कि पिछले दस सालों में बाहर के कोर्ट में कोई मामला नहीं गया। फिर दिल्लीवाला वहाँ आकर देखेगा कि गाँववालों ने सबको काम और खाना देने की व्यवस्था की है। अगर गाँव का कोई मूरख चोरी करे, तो उसे तीन साल की सजा नहीं बल्कि तीन एकड़ जमीन की सजा दी जाती है और कहा जाता है कि मेहनत करके खाओ और बाल-बच्चों को खिलाओ। वह आलसी हो तो उसे सूखी नहीं बल्कि अच्छी तरी जमीन दी जाती है जिससे उसका काम आसान बने। इस तरह आप लोग गाँव में ग्रामराज्य स्थापन करेंगे तो देश सुखी होगा।

पोम्बुरपेट (मैसूर)
११-९-५७

नमक और चमक

: ३१ :

आज एक वैदिक ब्राह्मण हमारे पास आये थे। उन्होंने कुछ वैदिक मंत्र सुनाये। उनमें कुछ ऐसे मंत्र हैं जिनमें सबको नमस्कार किया है। उन्हें 'नमक मंत्र' कहते हैं। एक-एक पदार्थ का, एक-एक प्राणी का, एक-एक मनुष्य का नाम लेकर 'उसे नमस्कार-उसे नमस्कार' ऐसा कहा गया है। यहाँ तक कि चोरों का, लुटेरों का, डाकुओं का भी उल्लेख कर उन्हें भी नमस्कार किया गया है। ये नमक मंत्र हम जब-जब सुनते हैं हमारे दिल पर बहुत असर होता है। परमेश्वर के नाम अनेक हैं। कोई उसे विष्णु कहते हैं, तो कोई राम; कोई कृष्ण कहते हैं तो कोई हरि। ये नाम उस मंत्र में नहीं लिये गये बल्कि चोर, डाकू, किसान जैसे नाम लेकर उन्हें नमस्कार किया गया है। ब्राह्मणों में

कुछ जातियों को ऐसे वेद-मंत्र बोलने और सुनने का अधिकार नहीं दिया था। बोलने का अधिकार न देना ठीक भी हो सकता है, क्योंकि उसमें उच्चारण का सवाल है। किन्तु सुनने का भी अधिकार नहीं दिया। एक तरफ तो यह हालत है और दूसरी तरफ इन मंत्रों में उन जातियों के नाम ले-लेकर परमेश्वर मान के उन्हें प्रणाम किया है।

फिर दूसरे हैं 'चमक मंत्र'। उन्हें भी हमने आज सुना। उनमें ऋषि भगवान् से एक चीज माँगता है। कहता है : 'गोधूमाश्च मे तिलाश्च मे। — मुझे गेहूँ चाहिए, तिल चाहिए। बेचारे ऋषि का पेट तो छोटा होगा लेकिन उसने इतनी चीजें माँगी कि वह सारा बोलने में भी दस मिनट लगते हैं। उसे अच्छा रास्ता चाहिए, स्वच्छ पानी चाहिए, सुन्दर गायें चाहिए, घोड़े, बैल प्रेम चाहिए। इस तरह उसने मानसिक गुण और भौतिक वस्तुएँ भी माँगी हैं।

गाँव के लिए क्या चाहिए ?

हमने जब ये दो तरह के मन्त्र सुने, तो मामला क्या है, इस विषय में पूरा प्रकाश दिखाई दिया। ऋषि कहता है कि ग्राम के लिए सब चाहिए, मेरे लिए कुछ नहीं चाहिए। एक जगह उसने स्पष्ट कर दिया है : विश्वम् पुष्टम् ग्रामे अस्मिन् अनातुरम्। यानी हमारे गाँव में सब प्रकार की पुष्टि आरोग्य रहना चाहिए। इस तरह ऋषि जब कहता है कि मुझे यह चाहिए और वह चाहिए, तो उसका मतलब है कि गाँव के लिए चाहिए। गाँव में कुछ अच्छे लोग होते हैं और कुछ बुरे भी। कुछ उपयोगी होते हैं, तो कुछ आलसी भी। भगवान् की सृष्टि है इसमें तरह-तरह के रूप हैं—सत्त्वगुण, रजोगुण, तमोगुण। सारा भगवद्-रूप ही है। इसलिए ऋषि सबको नमस्कार करता है। अच्छे-बुरे सभी ईश्वर के रूप हैं। ऐसा हम मानते हैं तो वे ईश्वरमय हो जाते हैं। एक क्षण में परिवर्तन हो जाता है। दुनिया में कोई ऊँच होते हैं तो कोई नीच। लेकिन जब हम उन्हें ईश्वर रूप में देखते हैं, तो ऊँच-नीच आदि सब भेद खतम हो जाते हैं। जहाँ अंधकार होता है वहाँ छोटे-बड़े सितारे प्रकट होते हैं। इतनी चमक सारा उनकी कम, इस तरह कहा जाता है। परंतु जहाँ

बनती है तो बहुत पंचायत (झगड़ा) हो जाती है। आज की पंचायतें विकेंद्रित शोषण योजना है। कोई एक सुल्तान है। वह शासन करता है, सबको तकलीफ देता है, उनका शोषण करता है। एक स्थान में रहकर वह अच्छी तरह शोषण नहीं कर सकता इसलिए वह गाँव गाँव में पंचायत बनाता है। पंचायत का मतलब माने गाँव गाँव में सुल्तान। इस तरह की योजना आजकल बनती है। इसलिए लोगों को शंका होती है। इस गाँव के एक एक भाई कहते हैं कि लोगों को शंका आती है कि यह पढ़ा लिखा है, इसका सरकार के साथ संबंध है तो इसका अचानक परिवर्तन कैसे हो रहा है? यह अचानक उदार कैसे बन रहा है? इसमें कुछ कारण अवश्य होगा। लेकिन शंका से शंका बढ़ती है। इसलिए जरा विश्वास भी रखना चाहिए और समझना चाहिए कि ग्रामदान के बाद जो ग्राम पंचायतें बनेंगी, वे दूसरे ही ढंग की होंगी। गाँव के १८ साल के ऊपर के सब स्त्री-पुरुष ग्राम सभा के सदस्य होंगे। जिनके हाथों सब सत्ता रहेगी वे सिर्फ कारोबार चलाने के लिए, अपने में से ही ९-५ लोगों को सर्वानुमति से चुनेंगे।

ग्रामदान के बाद क्या हो?

ग्रामदान के बाद प्रथम क्या काम किया जाय यह उस-उस गाँव की परिस्थिति पर निर्भर रहेगा। गाँव के लोग सोचें कि गाँव की प्रथम आवश्यकता क्या है। मैं क्या करूँगा, यह मैं आपको बताता हूँ। मैं सबसे पहले गाँव में एक सामूहिक दूकान बनाऊँगा। उसमें हर मनुष्य के नाम से शेयर होगा। जो पैसा नहीं दे सकते वे श्रम देंगे। जिनके पास जितना है उसके मुताबिक कोई कम देगा तो कोई ज्यादा, पर अधिकार सबका समान होगा। जैसे आजकल व्यवस्था है कि जिसके पास शेयर हैं उसका पाँचगुना हक वहाँ नहीं रहेगा। वह सर्वोदय की पद्धति नहीं है। घर में हर कोई कम-अधिक कमाते हैं परन्तु यह नहीं होता कि जिसने जितना कमाया उसके अनुसार वह खायेगा। उसी तरह गाँव में जिसकी जितनी शक्ति होगी उसके अनुसार वह काम करेगा। अगर आज गाँव में कोई ज्ञानी

दूकान चलती है, तो दूकानवाले से प्रेम से कहा जायगा कि तू अब सामूहिक दूकान गाँव की तरफ से चला। उसी दूकान की तरफ से बाहर का माल लाया जायगा और गाँव का माल बाहर भेजा जायगा। फिर ६ महीने के बाद दूकान के हिसाब पर चर्चा करने के लिए ग्राम-सभा बुलायी जायगी। उसमें दूकानवाला कहेगा कि अपने गाँव में बाहर से इतना तेल आया है, तो क्या गाँव में जो मूँगफली है, उससे इतना तेल अपने गाँव में ही पैदा नहीं किया जा सकता? गाँववाले मंजूर करेंगे कि गाँव में तेलघानी चलायी जाय और वही तेल दूकान में रखा जाय। इस तरह बाहर से आनेवाली एक-एक चीज गाँव में ही बनाने की कोशिश की जायगी। गाँव में दो साल का अनाज रहना चाहिए। नहीं तो लड़ाई की सूरत में गाँव को खतम करना पड़ेगा।

गाँव का कपड़ा भी गाँव में ही बनाना होगा, जिससे कपड़ा खरीदने के लिए अनाज न बेचना पड़े। बहनें चूड़ियाँ पहनती हैं, जो बाहर से खरीदी जाती हैं। उसका यह उपाय हो सकता है कि वे धागे और सूत की माला बनाकर जनेऊ की तरह वेद मंत्रों से अभिमन्त्रित करके पहनें। इससे यहाँ के ब्राह्मणों को मंत्र सिखाने का काम मिल जायगा और बहनें भी वेद मंत्र सीखेंगी। यह फूटने-वाली काँच की चूड़ी, जो गाँव में बनती नहीं, बाहर की फैक्टरी में बनती है, तब क्यों उसे पहना जाय? यह मानना गलत है कि काँच की चूड़ी सौभाग्य लक्षण है। वह टूटी तो अपना नसीब फूटा! सोचने की बात है कि क्या सौभाग्य का लक्षण खरीदा जायगा? इस तरह आप सब लोग मिलकर गाँव की उन्नति के बारे में सोच सकेंगे। ग्रामदान के बाद सारी जमीन एक बनाने की जरूरत नहीं है। गाँववाले अपनी इच्छा के अनुसार अलग-अलग प्रयोग करेंगे और देखेंगे कि फसल कैसे बढ़ती है। मुख्य वस्तु यही है कि आपस का प्रेम न टूटे। इसके लिए 'नमक' और 'चमक' मंत्र काम करते हैं।

मंत्रोपदेश

गाँव का कोई भी मनुष्य सामने आये, तो उसे नमस्कार करना चाहिए, ऐसा हमारे पुरखों ने सिखाया। आज हम भगवन् नमस्कार करते हैं। इससे

करके ये सारे नारायणमूर्ति हैं यह समझकर नमस्कार करना चाहिए और सबके लिए प्रेम के शब्द का ही उच्चारण करना चाहिए। यह हो गया 'नमक'।

'चमक' का मतलब है कि गाँव के लिए सब चीजें चाहिए। गाँव की लक्ष्मी सरस्वती और शक्ति बढ़ानी है। गाँव को सपन्न बनाना है। उसमें भी पहले कौन सी चीजें चाहिए, यह तय कर यथाक्रम एक एक चीज बढ़ानी चाहिए। दूध बढ़ने से पहले कोकोमाल्ट बनाना उचित नहीं है। सारे गाँव का एक राज्य होना चाहिए, जिसमें रक्षण, शिक्षण स्वास्थ्य पोषण सफाई आदि सबकी योजना बने। गाँव में कोई पंडित नेहरू हों कोई राजेन्द्रबाबू, तो कोई पटवी। सारे गाँववाले मिल-जुलकर काम करें, तो कितना आनन्द हो!

आप ब्राह्मण से पूछिये कि तुम्हारे 'नमक' और 'चमक' में क्या है। अगर वह कहे कि हरिजनों को और दूसरों को वेद सुनने का अधिकार नहीं है तो उससे कहिये कि तुम्हारा ब्राह्मणत्व हम नहीं मानते। बाबा ने हमें सिखाया है कि शूद्र को, चोर को हरिजन सबको नमस्कार करना चाहिए। ऐसा ही नमस्कार नहीं उन्हें सद्-रूप भगवत्-रूप समझकर नमस्कार करना चाहिए। क्या ऐसे रुद्र रूप को वेद सुनने का अधिकार नहीं है? नहीं तो फिर रुद्र का तुम पर कोप होगा इसलिए कृपा करके ऐसे भेदभाव मत रखो। सबको आदर दो, सबका सम्मान करो। आपस में शरीर के अवयवों की तरह प्रेम रखो तब गाँव सुखी होगा।

कलाटी (केरल)
१२ । ६ । ५७

ऐतिहासिक संकल्प

: ३२ :

जिस काम को अभी तक हम करते आये, उसमें यहाँ के सम्मेलन में (सवरायण मैत्री-सम्मेलन) एक नया अध्याय शुरू कर दिया है। मैं मानता हूँ कि यह मधान एक ऐतिहासिक महत्व की वस्तु बन जायगी। यहाँ बहुत बड़ा संकल्प हुआ है। इसके साथ जिम्मेवारी भी आती है। 'जिम्मेवारी' शब्द से

पद तो वर्षों में जो महापुरुषों का दर्शन हुआ वह अद्‌भुत ही है। इतने छोटे समय में इतने ऊँचे दर्जे के महापुरुष भारत में हुए, जितने कभी तक नहीं हुए थे। रामकृष्ण परमहंस, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, श्री अरविन्द घोष महात्मा गांधी स्वामी दयानन्द सरस्वती लोकमान्य तिलक—ये सारे क्या छोटे नाम हैं? आज का समय महाकाव्य के लायक है। इस बात का भान कहाँ पुष्पा को हुआ। दूसरी जगहों पर तो स्फुट काव्य ही लिख जा रहे हैं। महाकाव्य लिखने के लिए भी पुष्पा ने कौन-सा काव्य उठाया? रामायण। हम समझते हैं कि यह हनुमान् की प्रेरणा है। वह इस प्रदेश में काम कर रहा है और उसीने इस प्रकार से यह काम करवाया है।

मैंने अपनी कोई संस्था नहीं बनायी। मैं किसी राजनैतिक या गैर राज-नीतिक संस्था का सदस्य नहीं हूँ। यह मेरा निर्पेक्ष दर्शन हुआ क्योंकि मैं किसी संस्था का सदस्य नहीं हूँ, इसलिए सब संस्थाएँ मेरी हैं। जितने लोग हैं वे सब मेरे कार्यकर्ता हैं। आप लोग जो सुन रहे हैं मेरे कार्यकर्ता हैं। आप कमर कसिये और हनुमान् की वानर-सेना में दाखिल हो जाइये। फिर पुष्पा को नयी रामायण लिखने की जरूरत पड़ेगी। अभी तो उन्होंने पुरानी कथा लेकर रामायण लिखी। लेकिन नये पराक्रम की गाथा लिखने के लिए आप उन्हें प्रेरित कर सकते हैं।

विश्व-मानव का निर्माण आवश्यक

हमें नया मानव बनाना है जिसे ज्ञानदेव ने 'विश्व मानुष' नाम दिया है। आज हमारे सामने बहुत छोटे-छोटे मानव खड़े हैं। कोई जातिवाले, कोई भाषावाले कोई प्रान्तवाले, कोई पक्षवाले, कोई देशवाले कोई धर्मवाले हैं। हिंदुस्तान के कुछ अखबारों में पाकिस्तान सरकार की निंदा आयेगी। पाकिस्तान के कुछ अखबारों में हिंदुस्तान की निंदा आयेगी। रूस के कुछ अखबारों में अमेरिका की निंदा आयेगी और अमेरिका के कुछ अखबारों में रूस की निंदा आयेगी। यानी देशाभिमान भी तोड़नेवाली चीज बन गयी है जोड़नेवाली नहीं। केरल में घूमते समय प्रार्थना में ईश्वर का कौन-सा नाम लिया जाय इस पर हमें बड़ी

मुश्किल मालूम होती थी। राम का नाम लें, तो ईसाई और मुसलमानों को पसंद नहीं आता और अल्लाह का नाम लें तो हिंदू और ईसाइयों को पसंद नहीं आता। दूसरे तीसरे धर्मों में तो हम इकट्ठा हो सकते हैं पर भगवान् का नाम लेने में इकट्ठा नहीं हो सकते। इस तौर से मैं नास्तिकों को पसंद करता हूँ। क्योंकि उनका एक प्लेटफार्म बन सकता है जहाँ कुछ नास्तिक इकट्ठा हो सकते हैं। यह परमेश्वर तोड़नेवाला बना है। क्या यह कोई ईश्वर का दोष है कि अपनी कल्पनाओं में विभेद करें? हमने राम के नाम से भी हृदय को संकुचित बना दिया है। जाति, भाषा, प्रांत, पक्ष, धर्म—ये सारे हमें तोड़नेवाले बन गये हैं। इन सबको अब बदलना है और विश्व मानुष का निर्माण करना है।

हम समझते हैं कि इसकी नींव इस भवन में डाली गयी है। सब बड़े नेता एक जगह आ गये हैं, एकत्र विचार और चर्चा करते हैं, नैतिक, अहिंसक तरीकों की प्रशंसा करते हैं और उसका ग्रहण करते हैं—सर्वोदयवाले, पी० एस० पी० वाले, कांग्रेसवाले और कम्युनिस्ट सारे एकत्र होकर एक बात बोलते हैं—यह बहुत बड़ी बात है। उन्होंने जो पत्रक निकाला है, उसमें ग्रामदान में नैतिक उन्नति के साथ-साथ भौतिक उन्नति का मुद्दा है इस बात का समर्थन किया है। हम इसे बहुत महत्त्व देते हैं। इससे आपको और हम सभी चेतना मिलनी चाहिए।

यलवाल (मैसूर)
२२-९-'५७

ग्रामदान : अहिंसात्मक और सहयोगी पद्धति : ३३ :

त्रिविध आशीर्वाद

यहाँ का ग्रामदान परिषद् हुई। उसमें अनेक विचारों को माननेवाले नेता आये थे। उन्होंने । दिन चर्चा की और परिणामस्वरूप देश को एक दीक्षा दी। उस पत्रिका में दो शब्द हैं जो हमारे लिए त्रिविध आशीर्वाद हैं। उसमें लिखा है कि विनोबा ने सामाजिक मसले हल करने के लिए जो अहिंसात्मक और

सहयोगी पद्धति अपनायी है, यह हमें मान्य है। उन्होंने हमारे काम में दो चीजें देखीं : १ अहिंसात्मक पद्धति, यह प्राचीन आशीर्वाद है और २ सहयोगी पद्धति, यह आधुनिक आशीर्वाद है। इस तरह उन्होंने उस संहिता में दोनों आशीर्वाद दिये।

अहिंसात्मक पद्धति और सहयोगी पद्धति, ऐसी दो पद्धतियाँ हमारे सर्वोदय के कार्य में जुड़ जाती हैं। अहिंसात्मक पद्धति आत्मा की एकता के अनुभव पर आधार रखती है। यह आध्यात्मिक विचार है। सहयोगी पद्धति विज्ञान पर आधार रखती है। आध्यात्मिक और वैज्ञानिक दोनों का योग सर्वोदय में हुआ है। इसकी पहचान नेताओं को हुई। हम समझते हैं कि साढ़े छह साल तक जो आंदोलन चला, उसका सर्वोत्तम फल हमें इस परिषद् में मिला। हम यही कहते थे कि सर्वोदय का विचार आध्यात्मिक और वैज्ञानिक, दोनों मिलकर बनता है। कुछ लोग समझते थे कि सर्वोदय का अर्थ दकियानूस है। वे लोग मिल से चरखे को अधिक पसन्द करेंगे चरखे से तकली को और लोहे की तकली से लकड़ी की तकली को अधिक पसन्द करेंगे। अगर कोई हाथ से सूत कातें तो उसे उससे भी अधिक पसंद करेंगे। इनका नाम है सर्वोदयवादी। इनके लिए वैज्ञानिक शोधों की कोई कीमत नहीं। पर अब नेताओं के ध्यान में आया है कि इसमें वैज्ञानिक अंश है। पंडित नेहरू ने कहा है कि ग्रामदान स्थिर रहने वाला है यह एक बात है। दूसरी तरह से इसकी आध्यात्मिकता तो जाहिर ही है। सर्वोदय की आध्यात्मिकता के विषय में किसीको कोई शक नहीं था, किन्तु वैज्ञानिकता के विषय में संदेह अवश्य था। अब दोनों विषयों में निर्संदिग्धता हो गयी और हमें द्विविध आशीर्वाद हासिल हुआ है।

वैज्ञानिकता के अभाव में अहिंसात्मक, आध्यात्मिक योजना कैसे होगी इसकी हम एक मिसाल देते हैं। चीन में लाओत्से नाम के एक दार्शनिक हो गये। उन्होंने आदर्श ग्राम की एक कल्पना बतायी कि ग्राम में कुल चीजों में स्वावलम्बन है, बाहर से कोई चीज लाने की जरूरत नहीं ग्रामवाले सब प्रकार से परितुष्ट हैं। उन्हें इतना ही मालूम है कि नजदीक में कोई गाँव होना चाहिए,

कि तरह-तरह के विरोध सामने उपस्थित हैं पर वे कुछ-के-कुछ विरोध मुँह नहीं दिखायेंगे, अगर विश्वात्मा के साथ अपना अनुसंधान करने का अभ्यास हमें होगा।

सर्वोदय जैसी हृदय-परिवर्तन का दावा करनेवाली विचार-पद्धति जिन्होंने अपनायी, उन लोगों ने पुराने संतों से भी अधिक ज्यादा गहराई में जाने की प्रतिज्ञा की। इस वाक्य से आपको डरना नहीं चाहिए। हम संतों से एक कदम आगे नहीं जायेंगे, तो यह उनके लिए भी अच्छा नहीं है और हमारे लिए भी। संतों ने केवल आत्मशुद्धि का दावा किया। वे समाज की यथाशक्ति उपेक्षा करते थे। सेवा में तन्मयता से मानव-स्पर्श हो जाता है और उसीसे समाज की शुद्धि होती है, ऐसा वे समझते थे। परन्तु 'समाज-रचना बदलनी है पूरा का-पूरा जीवन-परिवर्तन करना है, नया मानव बनाना है विश्व-मानव बनाना है'—यह तो महादेव की भाषा है किसी सामान्य प्राणी की नहीं। ऐसी भाषा हम बोलते हैं, तो हमें आध्यात्मिक गहराई में जाना होगा। स्वाध्याय इसके लिए सबसे अच्छा साधन है।

गहराई में जाने की जरूरत

अभी मैंने ग्रामदान सम्मेलन में कहा था कि बुद्ध भगवान् के बाद करुणा पूर्ण हृदय से दीनों दुःखियों एवं दरिद्रों की आवाज अगर किसीने बुलंद की तो महामुनि मार्क्स ने की है। उसके साथ मैंने यह भी कहा था कि केवल स्थूल रूप की क्रिया करने में करुणा नहीं होती। निष्ठुरता की जड़ें बहुत गहराई में होती हैं। इसलिए वहाँ जाकर उन्हें काटने से ही दुःख-निवृत्ति होती है। बुद्ध भगवान् वहाँ तक गये इसीलिए उनका विचार आज तक काम देता है और निरन्तर काम देनेवाला है। मार्क्स का विचार प्रतिक्रियात्मक था इसलिए वह आज पिछड़ गया है। वह अब आगे काम नहीं देगा। दोनों में करुणा पूर्ण थी। क्रान्ति के लिए कितने ही बुरे काम हुए, कत्लें भी हुए। परन्तु वे बुरे-से-बुरे काम करुणा से प्रेरित थे, यह समझना ही होगा। इसमें उनका बचाव नहीं है। करुणा अगर गहराई में नहीं पहुँचेगी तो बहुत क्रूर कार्य होगा। हम

हमने उनसे आगे कहा : "आप एक धार्मिक परिभाषा में बोल रहे हैं आर्थिक सिद्धान्त नहीं। व्यक्तिगत मालकियत शब्द रूढ़ हो गया है, इसलिए आप उसका प्रयोग कर रहे हैं। किसीकी व्यक्तिगत मालकियत पर दूसरे को हमला नहीं करना चाहिए, इस अर्थ में वह पवित्र है। इसे हम भी मान्य करते हैं। परन्तु क्या आप यह मानने के लिए राजी नहीं कि सामाजिक सेवा की भावना से व्यक्तिगत मालकियत का विसर्जन उत्सर्ग कोई करता है तो वह त्याग पवित्र है?" आखिर उन्हें मानना पड़ा कि हमारी बात सही है। इसके बाद भी वे कहने लगे कि 'यह है बड़ा कठिन।' मैंने कहा : 'कठिन काम भी आसान हो जाता है जब जमाना उसके लिए अनुकूल होता है। विज्ञान का जमाना ग्रामदान के लिए अनुकूल है ऐसा समझकर हम इस काम में लगे हैं।"

ग्रामदान पर केवल आर्थिक दृष्टि से सोचा जाय जैसा कि बहुत सारे लोग सोचते हैं तो उसमें खतरा पैदा होता है। इसलिए हमें जो संहिता (ग्रामदान-सम्मेलन के प्रस्ताव से) मिली है, उसे ठीक से पढ़नी चाहिए। वह इस जमाने के लिए और हमारे लिए एक उपनिषद् है। उसमें लिखा है कि अहिंसात्मक और सहयोगी तरीके से नैतिक उत्थान के साथ आर्थिक उत्थान भी होगा। इस तरह दोनों का उच्चारण साथ-साथ किया और वहाँ सब पक्षों के जितने भाई आये थे सबने उसे मान्य किया। उसका एक हिस्सा आर्थिक है, लेकिन कोई उसीको लेकर काम करे, तो खतरा है।

'ग्रामराज्य' शब्द पहले से चला। उसमें दोष मालूम होने से हमने 'ग्राम-स्वराज्य' शब्द निकाला। वेद में सूर्य को स्वराट् कहा है। 'आदित्यः स्वराट्'। वह स्वयं प्रकाश है। चन्द्र को 'अन्यराट्' कहा है। वह दूसरे के प्रकाश से विराजमान है। 'स्वराज्य' शब्द बहुत ही सुंदर अर्थ बतानेवाला है। उन ऋषियों ने भी जो कि सामाजिक दृष्टि से पराधीन नहीं थे, कहा था— 'यतेमहि स्वराज्ये'—हम स्वराज्य के लिए यत्न करेंगे। उनके लिए यह मन की बात हो गयी थी। ऐसे व्यापक अर्थ का 'स्वराज्य' शब्द है। उसकी शब्द शुद्धि हमें करनी होगी और 'ग्राम स्वराज्य' शब्द चलाना होगा।

व्यापक अध्ययन करें

यह सब मैंने इसलिए कहा कि गहराई में जाकर अध्ययन करने की जरूरत है। हमारे कुछ भाई कहते हैं कि हम भूदान यात्रा में लगे हैं इसलिए अध्ययन नहीं कर सकते। यह मेरी समझ में नहीं आता। मैं भूदान-यात्रा में लगा हूँ कोई नहीं कह सकता कि 'मैं भूदान-यात्रा में लगा हूँ, इसलिए श्वासोच्छ्वास ठीक से नहीं ले सकता।' हर कोई यही कहेगा कि भूदान-यात्रा में लगा हूँ, इसलिए खुली हवा मिलती है तो श्वासोच्छ्वास अधिक आसानी से ले सकता हूँ। उसी तरह भूदान यात्रा में स्वाध्याय अधिक आसानी से हो सकता है। हम खुले आकाश में घूमते हैं, तो एक घंटे में इतना अध्ययन होता है जो घर पर ४-५ घंटे में भी नहीं हो सकता। नींद कितने घंटे ली, इसका महत्त्व नहीं है। महत्त्व इसीका है कि वह गहरी होनी चाहिए। इसी तरह स्वाध्याय के लिए एकाग्रता चाहिए। उसके लिए खुली हवा, एकान्त अधिक अनुकूल होता है। हमारे उड़ीसा के साथियों को इसका अनुभव है। हमने उनके साथ इसी तरह भागवत का अध्ययन किया है। भूदान यात्रा हो रही है, इसलिए अध्ययन न कर पाना अपने पाँव उखाड़ने की बात है।

मैं बार-बार कहता हूँ कि स्वाध्याय की बहुत बड़ी जरूरत है। मैं इसकी कुछ साधना करता रहता हूँ और अपने साथियों की कुछ परीक्षा भी लेता रहता हूँ। जिसे हम सर्वोदय विचार कहते हैं वह उसके पहले के किसी भी आध्यात्मिक विचार से कम गहरा नहीं है। [illegible] विकासवाद, परिणामवाद आदि तरह तरह के [illegible] पश्चिम के दार्शनिकों ने अद्वैत [illegible]। इन सबसे यह विचार गहरा है। यह विचार न [illegible] स्पर्श करता है, बल्कि जीवन की हर बात को [illegible] है। इसलिए [illegible] व्यापक अध्ययन की जरूरत है। उसकी [illegible]। आज का व्यापक अध्ययन [illegible] है।

केषाम् अमोघवचनम् ?

एक दफा जयप्रकाशजी से बात हो रही थी। सामने शंकराचार्य की पुस्तक 'गुरुबोध' थी। प्रभावती मेरी विद्यार्थिनी है। उसीको ध्यान में रखकर मैंने शंकराचार्य का एक वचन सुनाया 'केषाम् अमोघवचनम्' ये च पुनः सत्य-मौन-शम-शीलाः। जिनकी वाणी अमोघ होती है? जो निरन्तर सत्य का पालन करते हैं, जो निरन्तर मौन रखते हैं, जो निरन्तर शान्ति रखते हैं, उनकी वाणी अमोघ होती है। व्याख्यान देते हुए भी मौन होना चाहिए। मौन का मतलब 'न बोलना' ही नहीं है। न बोलनेवाला भी अपने मन में हजारों बातें बोल सकता है। वह बाह्य वस्तु नहीं, आन्तरिक वस्तु है। इसलिए हर शब्द का उच्चारण मननपूर्वक होना चाहिए। उसका पूरा अर्थ समझकर ही उच्चारण करना चाहिए। मौन की बड़ी जरूरत है।

एक भाई ने कहा कि सौम्य प्रहार से कुछ नहीं हुआ इसलिए तीव्र प्रहार होना चाहिए। लेकिन हमने इस बारे में पहले ही सूत्र बताया है, सौम्य सौम्यतर, सौम्यतम। सौम्य से काम न बने, तो आपको सौम्यतर होना चाहिए, उससे भी काम न बने तो सौम्यतम बनना चाहिए। अगर यह कहा जाय कि हमारी वाणी सौम्य है, इसलिए काम नहीं होता उग्र वाणी चाहिए, तो यह गलत विचार है। इससे वाणी की शक्ति कुंठित होती है, अमोघ वाणी नहीं होती। हम लोगों के पास जाकर ग्रामदान-भूदान समझाते हैं। हमारी वाणी अमोघ बनेगी तो हमारा काम बनेगा। इसलिए सत्य, मौन, शम—ये तीन चीजें स्वाध्याय के साथ हमारी वाणी में आनी चाहिए।

मैसूर —शिक्षक-शिविर के कार्यकर्ताओं के बीच
२१-६-५७

मैसूर शहर में रास्तों के बहुत सुन्दर नाम हैं : शंकर रास्ता, रामानुज रास्ता, कबीर रास्ता, पुरन्दरदास रास्ता, अशोक रास्ता, हर्ष रास्ता, बुद्ध रास्ता, अकबर रास्ता, शिवाजी रास्ता, हैदरअली रास्ता आदि। दो प्रकार के नाम पसन्द किये गये, एक वीर पुरुषों के और दूसरे संतों के। समाज-व्यवस्था की जिम्मेवारी उठानेवाले कुछ लोग वीर पुरुषों की परम्परा में हुए, तो कुछ समाज में चित्त-शुद्धि का विचार फैलाकर सामाजिक क्रांति लानेवाले संतों की परम्परा में हुए। ऐसे दो बड़े प्रवाह भारत के इतिहास में चले। दोनों का स्मरण इस मैसूर नगर के रास्तों में होता है। सर्वोदय में ये दोनों प्रवाह एक हो जाते हैं। उसमें वीर और संत का भेद मिट जाता है। वीर ही संत और संत ही वीर बनता है। समाज को धारण करनेवाला ही समाज में क्रान्ति करता है और समाज में क्रांति करनेवाला ही समाज को धारण करता है। याने सर्वोदय में विचारों का समन्वय होता है। उसमें समग्रता आ जाती है।

अविरोधी व्यक्तित्व

आपके यहाँ माधवाचार्य हुए। उनका नाम विद्यारण्य भी है। वे संत थे या राज्य संस्थापक, यह कोई नहीं कह सकता। आपके इस प्रदेश की एक दूसरी मिसाल भी है, जहाँ विचारों का समन्वय होता है। वे हैं बसव। वे ऐसे महान् थे कि उनके जीवन में दोनों तत्त्व एक हो गये। मुहम्मद पैगम्बर भी इसी कोटि के थे। ऐसी कुछ मिसालें इतिहास में मिलते हैं। परन्तु ये सारे पुराने समाज में अपवाद हैं। जब भी मनुष्य वीर पुरुष का रूप लेकर हाथ में शस्त्र उठाता है और मन लगाकर भगवद्-भक्ति की बात करता है तब विरोध आ जाता है। उसमें दो विचार-प्रवाह मिलते तो हैं लेकिन कुछ विरोध के

साथ। किन्तु जो समन्वय सर्वोदय में होता है उसमें दो विरोधी प्रवाह मधुरता एकरूप होते हैं। विरोध रह ही नहीं जाता।

समाज-रक्षा की जिम्मेवारी एक विचार है और समाज के लिए कारुण्य दूसरा विचार। रक्षा की जिम्मेवारी शक्ति को दे दी। शक्ति-देवी स्वतंत्र देवी है। यहाँ के सामने पहाड़ पर चामुंडा खड़ी है वह रक्षणकर्त्री शक्ति-देवता है। उसकी उपासना करनेवाले हैं वीर पुरुष। समाज को सुधारनेवाली दूसरी देवी है कारुण्य मूर्ति। करुणा की उपासना करनेवाले हैं संत। रक्षण के लिए शक्ति उपासना और समाज शुद्धि के लिए करुणा की उपासना। शुद्धि और शक्ति दोनों देवताओं की उपासना में कुछ न-कुछ विरोध आता है, इसलिए एकाग्र उपासकों के द्वारा दोनों देवताओं की आराधना नहीं हो सकती। इस तरह फिर इस मैसूर के भी दो प्रकार के रास्ते बन जाते हैं। उधर बसवेश्वर रास्ता बनाता है तो इधर कबीर उधर शंकराचार्य रास्ता बनाता है तो इधर शिवाजी रास्ता बनाता है। यह विविधता हमें बड़ा आनन्द देती है। बसवेश्वर शंकर शिवाजी नहीं हो सकता और शिवाजी शंकर नहीं बन सकता। इन दोनों के लिए पूज्य भाव रखने की जिम्मेवारी मैसूर शहर पर आती है।

सर्वोदय का वैशिष्ट्य

इन दो उपासनाओं में विरोध है। उस विरोध को पचाकर उपासना करनेवाले मुहम्मद पैगम्बर माधवाचार्य जैसे निकल जाते हैं। दोनों को पचा लेना एक अलग बात है और दोनों का विरोध ही मिटा देना दूसरी बात है। सर्वोदय विचार में यह विरोध ही मिट जाता है। रक्षा के लिए चामुंडा और करुणा के लिए विष्णु इस प्रकार के दो देवता सर्वोदय में नहीं रहते। उसमें एक ही देवता रहता है। वही रक्षण करता है और वही शुद्धि। वही करुणा का रूप लेता है और वही रक्षणकारिणी शक्ति बनता है। दोनों उसमें समा जाते हैं। दोनों का उसमें कोई विरोध नहीं रहता। उसका नाम है समन्वय। समन्वय से समाज में एकरसता आती है गुण विभाजन नहीं होता। यह दोनों के लिए

अमुक गुण और पाप दोनों के लिए अमुक गुण, ऐसा नहीं होता। क्षत्रिय धर्म का धर्म है समाज के लिए हिंसा करना। ब्राह्मण का धर्म है रक्षा के लिए भी हिंसा न करना। गृहस्थ का धर्म है—समाज जीवन के लिए परिग्रह करना और संन्यासी का धर्म है—पूर्ण अपरिग्रह की उपासना करना। इस तरह परस्पर विरोधी गुणों की विभाजित योजना करनी पड़ती है। कांचन संग्रह संन्यासी के लिए पाप है, तो गृहस्थ के लिए पुण्य। एक के लिए जो गुण वही दूसरे का दोष है। एक के लिए जो दोष है वही दूसरे के लिए गुण है। इस प्रकार समाज के दो टुकड़े बनते हैं। गुणों का विभाजन होता है तो कोई भी व्यक्ति पूर्ण नहीं बनता। समाज भी पूर्ण नहीं बनता। समाज के अंतरंग में विरोध कायम रहता है। झगड़े भी बनते हैं। परिणामस्वरूप संघर्ष होता है। इसलिए सर्वोदय में अहिंसा को ही शक्तिरूपिणी समझकर उपासना करनी है। वही बचाव करेगी वही पालन करेगी और वही प्रेम करेगी।

सेना और शिक्षा का समन्वय

प्रेम की महिमा लोग जानते हैं। परन्तु प्रेम रक्षणकारी बनेगा, ऐसी लोगों में श्रद्धा नहीं है। ज्ञान की महिमा लोग समझते हैं, लेकिन ज्ञान रक्षणकारी होगा ऐसा भी विश्वास नहीं है। इसलिए एक होता है सेना विभाग और दूसरा शिक्षा विभाग। दोनों चाहिए। शिक्षण विभाग सुधार के लिए चाहिए और सेना विभाग दंड के लिए। कुछ महान् लोग इन दोनों को विरोध के बावजूद जीवन में एकत्रित करते हैं। तुम्हारा शिक्षक एक हाथ में किताब रखता है और दूसरे हाथ में डंडा। इसमें विरोध दिखता नहीं। दिखाई दे जाता है पर एक आकार बन नहीं सकती। ताना-बाना बुनकर जो वस्त्र बनते हैं वह एक चीज है और कपड़े के दो टुकड़े जोड़कर एक बनाना दूसरी चीज है। माधवाचार्य ने दोनों को जोड़ दिया। इधर राज्य के मंत्री बनकर राज्य निर्माण भी चलाया और उधर शंकराचार्य के अनुयायी होकर पंचदशी भी लिखी। परन्तु लोगों को इतना ही दिखा। उसमें ताना-बाना बुनकर आकार बनाने की कला नहीं आयी।

सत्याग्रह की मीमांसा

सर्वोदय में सत्याग्रह का जो दर्शन हुआ है, उसके परिणामस्वरूप सिपाही मिट गयी और ताना बाना एकरूप होकर अखण्ड वस्त्र बन गया। सत्याग्रह में संत और वीर दोनों एक हो जाते हैं, दोनों एक-दूसरे में पिरोये जाते हैं सीय नहीं जाते। वह सत्याग्रह की सूती है। यह अपने देश की चीज है अपने अनुभवों का परिणाम है। इसका थोड़ा दर्शन गांधीजी के कारण हुआ। इस शक्ति को हमें विकसित करना है।

इन दिनों हिंदुस्तान की हालत बड़ी विचित्र है। विचार स्वैर होता जा रहा है। चिन्तन मर्यादा में नहीं चलता। आचार में संयम नहीं है। निष्ठाएँ गिर रही हैं। न पुरानी व्यवस्था टिकती है और न नयी निष्ठा बन रही है। परिणामस्वरूप किस वक्त कहाँ क्या दुर्घटना घटेगी, नहीं कहा जा सकता। इस खतरनाक हालत से बचानेवाली शक्ति सत्याग्रह ही हो सकता है।

लोगों में इस समय सत्याग्रह का बिल्कुल ही गलत अर्थ रूढ़ हो गया है। यह भी एक बला बन गयी है। कहीं सत्याग्रह होने की बात सुनते हैं तो मनुष्यों के मन में अनुकूल भावना होने के बजाय प्रतिकूल भावना पैदा होती है। सत्याग्रह को दबाव डालने की बात माना जाता है। सब प्रकार के दबावों से दबे समाज को उन दबावों से मुक्त करना ही सत्याग्रह है। मनुष्य के हृदय पर अनेक प्रकार के दबाव हैं इसलिए उसकी बुद्धि विचार के लिए आजाद नहीं रही। अनेक परिस्थितियों के कारण बुद्धि पर आये हुए इन दबावों को हटाने की प्रक्रिया का नाम 'सत्याग्रह' है। पचास दबाव के खिलाफ ५१वाँ दबाव खड़ा करना सत्याग्रह नहीं है। बुद्धि आजाद हो इसीके लिए सत्याग्रह यत्न करता है। उसके चार साधन हैं। एक साधन है निरन्तर सेवा और दूसरा है निरन्तर आत्म शुद्धि। जहाँ इस प्रकार के सत्याग्रह का उदय होगा वहाँ लोगों के दिलों की टंकार पहुँचेगी। उनके हृदय के पर्दे खुल जायँगे। बुद्धि पर आनेवाले आवरणों को दूर करने के लिए सत्याग्रह का प्रयोग है। विचार समझाना, उसके लिए

जरूरी सेवा करना, मैत्री की भावना स्थापित करना, सामनेवाले के हृदय में जरा भी डर न होने देना 'सत्याग्रह' है।

सत्याग्रह की शुद्धि

जब मैंने जब जमीन माँगना शुरू किया, तो आरम्भ में कुछ विचित्र अनुभव आये। एक ओर जहाँ लोग उदारता से देने लगे, वहाँ दूसरी ओर लोग डरने भी लगे। कभी-कभी बाबा जिस गाँव में जाता, कुछ लोग गाँव छोड़कर चले जाते थे। वे डरते थे, क्योंकि उनके पास मालकियत थी। वे चोरों से डरते थे, सरकार से डरते थे, कम्युनिस्टों से डरते थे और बाबा से भी डरते थे। हमने कहा : 'अरे भाई, बाबा से डरोगे तो कहाँ जाओगे?' हम अपने मन में सोचने लगे कि उन्हें डर क्यों पैदा होता है? यह ठीक है कि उनके पास जमीन है, सम्पत्ति है और उसकी आसक्ति है। ये दोषी हैं, परन्तु क्या बाबा के पक्ष में भी कोई दोष आता है? तब हमारे ध्यान में आया कि इसमें बाबा के पक्ष में भी दोष है। क्योंकि हम सबके पास जाते और कहते हैं कि 'दुःखी, दरिद्री और भूमिहीनों के लिए दो।' हमारा यह कहना समाज के एक ही अंश को लागू होता है। धर्म सारे समाज को लागू होता है। सत्य बोलने का धर्म समाज के एक अंश को लागू नहीं होता। प्रेम और करुणा किसी एक ही विभाग का धर्म नहीं हो सकता। अतएव वह सारे समाज को लागू होता है। इसलिए हमारा भूमिहीनों के लिए माँगना कोई धर्म-विचार नहीं है। उसमें करुणा है। पर ऐसी करुणा तो मालिक में भी है। उसका यह कहना कि 'अगर और किसी तरीके से नहीं बनता, तो सरकार से भी सहायता कर गरीबों का उद्धार कर सकते हैं' इन बातों में करुणा ही प्रकट है। लेकिन उसमें पूरा विचार नहीं है, इसलिए वह धर्म नहीं हो सकता। अतः हम लोगों के सामने ऐसा ही विचार रखना चाहिए, जो प्रत्येक को लागू हो।

हम आगे सोचने लगे कि क्या हर किसीके पास देने के लिए कुछ नहीं है? ऐसी बात तो नहीं। भगवान् ने प्रत्येक को कुछ न कुछ दे रखा है। यह स्वयंसिद्ध [illegible] नहीं रहता। किसीके पास श्रम-शक्ति है, तो किसीके

पास बुद्धि, संपत्ति जमीन। भगवान् ने इस तरह का दान विविधता के लिए दे रखा है। वह एक ही प्रकार का देता तो एक ही प्रकार की छाप होती। उससे काम न बनता। सिर्फ सा "सा" सा "से संगीत नहीं बनता। संगीत के लिए सा रे ग "म" स्वरों की विविधता चाहिए। साथ ही उस विविधता में विवाद नहीं होना चाहिए। भगवान् ने किसीके हाथ मजबूत बनाये हैं तो किसीका दिमाग। इसलिए उनको अपने पास जो कुछ है भगवान् ने जो कुछ दान दिया है वह समाज को दे देना चाहिए।

किसी गाँव की सारी-की-सारी जमीन दान दे देने पर भी वह पूर्ण ग्रामदान नहीं कहा जा सकता। ग्रामदान में पूर्णता तभी आयेगी जब जमीन-वाले अपनी सारी जमीन गाँव को दे देंगे श्रमनिष्ठ अपना कुछ श्रम गाँव को दे देंगे बुद्धिनिष्ठ अपनी सारी बुद्धि गाँव को दे देंगे और शक्तिवाले अपनी कुछ शक्ति गाँव को दे देंगे। आज जमीनवाला अपनी जमीन का श्रम सिर्फ अपने परिवार को देता है श्रमसम्पन्न मजदूर अपनी मजदूरी का श्रम सिर्फ उसने परिवार को देता है ग्रामदान में सारी जमीन श्रम संपत्ति बुद्धि पूरे गाँव परिवार को अर्पण होनी चाहिए। इस तरह होगा तभी वह पूर्ण ग्रामदान होगा। इसलिए बाबा से डरने का कोई कारण नहीं है। अगर डरना है तो सभी को बाबा से डरना चाहिए, अन्यथा किसीको भी नहीं। यह विचार जब सूझा तब बाबा का सत्याग्रह शुरू हुआ।

परस्परं निरुद्धयन्ते तैरयं न निरुध्यते

पहले भूमिवानों को हमें देखकर ऐसा लगता था कि यह कोई माँगनेवाला आया है। यह कुछ लोगों से माँगकर कुछ लोगों को देगा। यह वर्ग-संघर्ष नहीं मानता वर्ग-समन्वय करता है। अब ग्रामदान के नाम में किसीको पैदा नहीं लगता। ग्रामदान का अर्थ है—विविधता के साथ सारा समाज एकरूप बने। श्रमिकों का श्रम बुद्धिमानों की बुद्धि और जमीनवालों की जमीन सबकी योग्यता समान है। जिसने अपने पास की चीज समाज को समर्पित कर दी, वह समत्व-योगी हो गया। जिस किसीके पास जो कुछ भी था वह दे दिया वह

मस्त हो गया। जब कोई निर्भय धर्म-विचार समाज के सामने आता है, तो उससे डर नहीं रहता। ग्रामदान का विचार अत्यन्त निर्भय विचार है। इसमें परिपूर्णता और समन्वय है।

ग्रामदान में यह खूबी है कि वह परस्पर विरोधी तत्त्वों का विरोध मिटा कर उनको एकरस बना देता है। गौड़पादाचार्य ने एक प्रसिद्ध श्लोक में यही कहा था : 'परस्परं विरुध्यन्ते तैरयं न विरुध्यते।' ये लोग परस्पर विरोध करते हैं। लेकिन मेरे साथ उनका कोई विरोध नहीं है। ग्रामदान आज सबको यही कहता है कि तुम सब लोग परस्पर विरोध करते हो। पर ग्रामदान में आ जाओ तो तुम्हारे सभी विरोध मिट जायेंगे। मैसूर शहर में भी रास्तों के नामों ने विरोध पैदा किये हैं। वे मिटा देने चाहिए। सब रास्ते सर्वोदय के रास्ते बन जाने चाहिए—सर्वोदय रास्ता नं० १, सर्वोदय रास्ता नं० २, सर्वोदय रास्ता नं० ३। सर्वोदय में जीवन से विरोध ही खत्म करने की बात है। हम कहना चाहते हैं कि यह सारी दुनिया के लिए तो लाभकारी है, लेकिन भारत के लिए अत्यन्त बचाव करनेवाली चीज है। हमारे इस विशाल देश में, जहाँ अनेकविध भेद हैं, अगर अविरोध और समन्वय की शक्ति न रही तो देश के टुकड़े टुकड़े हो जायेंगे।

मैसूर
११ १ ५

स्त्रियों के लिए विविध कार्य : ३६ :

आज समाज में जितने भेद निर्माण हुए हैं, उनमें पुरुष स्त्रियों को दासी रखना चाहता है। यूरोप, अमेरिका में स्त्रियाँ सेना में भर्ती की जाती हैं। वे उसमें अपना गौरव समझती हैं कि हम पुरुषों की बराबरी में आ गयीं। देश की रक्षा के काम में तो उन्हें गौरव समझना चाहिए, परन्तु विनाशकारी कार्यों में पुरुषों का साथ देने में भी अगर उन्हें गौरव मालूम हुआ तो इसका मतलब यह हुआ कि माता-पिता अपना मिलकर बच्चे की जवाबदारी छोड़ रहे हैं। फिर

प्रभाव का कोई भाग नहीं रह जायगा। इसलिए स्त्रियों को जाति धर्म भाषा देश, पक्ष आदि सब भेदों से परे रहना चाहिए। स्विट्जरलैंड में स्त्रियाँ मताधिकार नहीं माँगती। वे माँगती तो उन्हें मिल जाता परन्तु वे समझती हैं कि यह कोई महत्व की चीज नहीं है। मानव के विकास के लिए महत्व के जो काम हैं उनके साथ इसका संबंध नहीं है। बच्चों की तालीम, नीति-विचार कायम रखने की बात धर्म-भावना बनाये रखने की श्रद्धा आदि सब बातें हम कर सकती हैं, करती हैं तो फिर वोट के कारण पैदा होनेवाले झगड़ों में क्यों पड़ें ? उसमें उनको रस नहीं है। यह कोई पिछड़ा हुआ देश नहीं प्रगतिशील देश है। पचास साल पहले इंग्लैंड की स्त्रियों को मताधिकार नहीं था। उन्होंने उसके लिए आन्दोलन किया तब उन्हें वह मिला। स्त्रियों को वह तो होना ही चाहिए, हकों में किसी प्रकार की कमी नहीं रहनी चाहिए। परन्तु मैं कहना यह चाहता हूँ कि मानवता की रक्षा के जो काम करते हैं, उनके लिए पार्टी पॉलिटिक्स कोई चीज नहीं है। पार्टी पॉलिटिक्स से ऊपर उठी हुई बहनों को शान्ति स्थापना के कार्य में आगे आना चाहिए। शान्ति-सेना के काम में वे सहायक हो सकती हैं।

सांस्कृतिक क्षेत्र स्त्रियों के हाथ में हों

स्त्रियों को वे सारे क्षेत्र हाथ में लेने चाहिए, जो सांस्कृतिक क्षेत्र माने जाते हैं। आज तक इन क्षेत्रों में प्रधान रूप से ज्यादातर पुरुषों का हाथ रहा है दुनिया के महान् काव्य, जिनका दुनिया पर असर है चाहे वह वाल्मीकि रामायण हो, व्यास का महाभारत हो या होमर, डांटे, मिल्टन आदि के काव्य हों सबके सब पुरुषों ने लिखे हैं। वेद में थोड़ी स्त्रियों ने मंत्र-निर्माण किया है और बीच के समय में कर्नाटक की अक्क महादेवी राजस्थान की मीराबाई आदि २४ नाम हैं। परन्तु कुल साहित्य पर स्त्रियों का ज्यादा असर नहीं रहा है। बच्चों की तालीम आदि का सामाजिक कार्य भी आज पुरुषों के हाथों में है। पुरुषों में बच्चों को तालीम देने लायक कोई अक्ल नहीं है। बड़े होने पर भले ही पुरुष उन्हें तालीम दे सकें परन्तु प्राइमरी स्कूल के बच्चों के साथ कैसा व्यवहार

उनकी नैतिक ताकत रहेगी। गांधीजी की विशेषता यह थी कि उन्होंने स्त्री-शक्ति को जगाया। वे स्त्री-शक्ति को इसलिए जगा सके कि उनका कार्य अहिंसा का था। समाज में जब तक सारा व्यवहार हिंसा पर रहेगा तब तक स्त्रियों का स्थान गौण रहेगा। एक झाँसीवाली रानी निकली परन्तु वैसी ज्यादा नहीं निकल सकतीं। अगर हमने यह माना कि हिंसा-शक्ति से समाज का बचाव होना चाहिए तो उस कार्य में पुरुषों का ही मुख्य स्थान रहेगा, स्त्रियों का गौण स्थान रहेगा। अहिंसा में स्त्री का बहुत ज्यादा प्रवेश है। गांधीजी ने सामाजिक क्षेत्र में अहिंसा को मान्य किया, इसीलिए स्त्री-शक्ति को जगा सके। व्यक्तिगत क्षेत्र में तो अहिंसा पहले से ही मान्य थी, परन्तु गांधीजी उसे सामाजिक क्षेत्र में लाये। इसलिए इस क्षेत्र में स्त्रियाँ पुरुषों की बराबरी में या कुछ ज्यादा ही काम कर सकती हैं।

इस तरह स्त्रियों के सामने बहुत बड़ा क्षेत्र खुल गया है। ग्रामदान, शान्ति-सेना, आश्रम और तालीम इस तरह विविध कार्य उन्हें करना चाहिए। आज तक वे इन कामों में गौण रूप से रहती थीं, परन्तु अब उन्हें मुख्य बनना होगा।

मदुरै
२१ १ ५

शान्ति-सेना-दर्शन

: ३७ :

मन [illegible] के आगे की बात का जवाब देते हुए हमने कहा था कि हम काम [illegible] से काम नहीं करते। हमारा काम शासनातीत है, पक्षातीत है। हम [illegible] स्वराज्य तो आ ही गया। अब इसकी रक्षा के लिए शान्ति-सेना बननी [illegible] ग्रामराज्य के काम में [illegible] की कितनी कमजोर पड़ रही है, [illegible] जानते हैं। उन प्रसंगों का इतिहास लिखा जायगा तब [illegible]। लेकिन अपने मन में हमने मान लिया कि यह बात ही [illegible] कि [illegible] लोग क्या करेंगे। उन्होंने [illegible] [illegible] इन चार शक्तियों

ने पेशवा पर कब्जा कर लिया था वे पाप शक्तियाँ खतम होंगी। इधर रामदास थे तो उधर औरंगजेब था। रामदास के मरने के ठीक २५ साल बाद वह मरा। परंतु रामदास को दर्शन हुआ कि वह परकीय सत्ता समाप्त हुई। 'उदक चालले काशी स्नान संध्या करावीत'—अब स्नान संध्या के लिए पानी मुक्त हुआ। यानी काशी नगरी जो परकीय सत्ता में थी वह स्वराज्य में आ गयी। उन दिनों यह कल्पना थी कि स्वराज्य तब आयेगा जब काशी मुक्त होगी। मराठे काशी तक पहुँचे नहीं थे। उनका सारा काम यहीं पूना के नजदीक था। पर रामदास को प्रतिमा-दर्शन हो गया कि अब सब हो चुका। ऐसे ही मुझे लगा कि ग्रामदान तो हो चुका, अब उसके रक्षण के लिए शान्ति-सेना बननी चाहिए।

शान्ति-सैनिकों की संख्या

गणित तो मेरा हमेशा कच्चा ही है। मैंने हिसाब लगाया कि ५ हजार मनुष्यों की सेवा करने के लिए एक शान्ति-सैनिक चाहिए। अर्थात् ३५ करोड़ की सेवा के लिए ७० हजार सैनिक चाहिए। यह बड़ी संख्या नहीं है। इन दिनों शस्त्रास्त्र और फौज कम करने की बात चलती है। सुझाव पेश किया गया है कि रशिया अपनी सेना कम करके इतनी करे अमेरिका अपनी सेना कम करके इतनी करे। अब कम करके २ लाख करें, तो बड़ा करके कितना करना पड़ेगा! अखबार से आँकड़े हैं। उभय पक्षों का बिलकुल प्रेमभाव बनने के बाद २ लाख सेना नहीं हो सकती है। हमारे पूर्वजों ने अगर ये आँकड़े सुने होते तो समझते कि क्या शांति के लिए भी १ लाख सेना की जरूरत है। उस हिसाब से ३५ करोड़ लोगों के इतने बड़े देश में ७० हजार की शान्ति-सेना की अगर कोई माँग कर रहा है, तो उसे ज्यादा नहीं कहा जायगा। यही आखिर आयेगा कि इतने से काम नहीं निभेगा। और बड़ी संख्या चाहिए। पर हमने कम-से-कम लक्ष्य रखा।

शांति-सैनिकों की निष्ठायें

शान्ति-सैनिक की योग्यता में सर्वोदयी लोकसेवकों की पंचविध निष्ठा न

कुछ अधिक भी चाहिए। उससे कम में काम नहीं चलेगा। सत्याग्रही लोक-सेवक त्यागी होने चाहिए। वे ७ हजार तो चुने हुए लोग होंगे। लोकसेवक को किसी राजनैतिक पक्ष का सदस्य नहीं होना चाहिए। इस विषय में बहुत चर्चा होती है। निष्पक्षता की शर्त लोगों को जँचती नहीं है यद्यपि यह इतनी कठिन है कि रात दिन गीता की ध्वनि सुनायी देगी तब काम होगा। पर उसकी लोगों को इतनी चिन्ता नहीं मालूम होती। चिन्ता यह है कि पक्षातीतवाली बात उचित है या अनुचित।

इन दिनों हमारे चित्त पर राजनीति का बड़ा भारी बोझ है। अंग्रेजों का बोझ तो उतर गया पर राजनीति का यह बोझ, जो हमारे सिर पर उन्होंने लादा कायम है। हम सिर्फ इतना ही कहना चाहते हैं कि जो शान्ति सैनिक होते हैं वे भी पक्षातीत रहें। अगर सेना में पक्ष बनने लगेंगे, तो भारत के दस लाख सैनिकों में से कुछ पी. एस. पी. के, कांग्रेस के तो कुछ कम्युनिस्टों के हो जायेंगे। ऐसा हुआ तो आपकी सेना काम नहीं करेगी। सैनिक परिभाषा में भी यह मान्य है कि सिपाही का उत्तम सेवक होना चाहिए। इसलिए सत्याग्रही लोकसेवकों की प्रतिज्ञा में सब पक्षों से मुक्त होने की बात शान्ति-सैनिक के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

यह चित्र कैसे पूरा निकलती है! अभी रामनाथपुरम् में हिंसा चली। उस जिले में हमारी यात्रा आम चुनाव के दिनों में चल रही थी। तभी हमने समझ लिया था कि यह ज्वालामुखी है। हरिजन विरुद्ध परिजन यह जाति-भेद का झगड़ा था। नतीजा में हरिजन बहुत से ईसाई थे और परिजन हिंदू। एक पार्टी ने इस पक्ष लिया दूसरी पार्टी ने उस। इस तरह धर्म-भेद जाति-भेद पार्टी-भेद त्रिगुणात्मक रस्सी बन गयी। वहाँ जानेवाले शान्ति-सैनिक किसी एक पार्टी के न हों तो काम नहीं आ सकते। क्योंकि वे कारणों में ही पार्टी-भेद एक कारण रहा। इसलिए हमारा शान्ति-सैनिक जाति-भेद निरपेक्ष हो, सब धर्मों को समान माननेवाला हो। पक्षातीत निरपेक्ष भावना मनुष्य में चाहिए ही। उनके अलावा एक इतनी निष्ठा भी रखी है। वह यह कि शान्ति-सैनिक का कमाण्डर (सेनापति) की कमाण्ड (आज्ञा) माननी ही चाहिए। अभी तक हम आसन्न

मुक्त समाज विचार-स्वातंत्र्य की जो बात सोचते आते हैं उससे बिल्कुल भिन्न ही नहीं बल्कि विपरीत-सी यह बात लगती है। और तदनुसार हमने काम भी किया। शांति-सेना और बातों म तो दूसरी सब सेनाओं से बिल्कुल विरुद्ध ही है परन्तु अनुशासन के बारे म वह उनसे कम सख्त नहीं हो सकती, कुछ अधिक ही हो सकती है। क्योंकि उसमें दूसरों का प्राण लेने की सहूलियत नहीं है। अपने हाथ में शस्त्र होने पर भी प्राण खोने का मौका तो आता है। इसीलिए वहाँ शौर्य है और इसीलिए उसका गौरव भी है। पर उसके साथ प्राण लेने का भी उसम माद्दा है, सहूलियत है तैयारी है, सोचना है। यह तो बिल्कुल ही एकांगी बात हो गयी कि इसमें अपना प्राण खोने की बात और दूसरों के प्राण बचाने की बात है। कोई हमलावर से अगर हमारे गले पर प्रहार करता हो, तो अपने गले पर प्रहार न हो इसकी चिन्ता तो हमें होनी ही नहीं चाहिए। पर प्रहार करनेवाले के हाथ को किसी प्रकार की चोट न लगे, इतनी चिंता जरूर होनी चाहिए। यहाँ बिना अनुशासन के नहीं चलेगा। सैनिकों को सेनापति का आदेश मानने की आदत पड़नी चाहिए। आदेश हो कि 'रुक जाओ' तो तुरन्त रुक जाय। सोचने की बात नहीं है। ऐसी आदत पड़नी चाहिए, तब काम होगा। यह बात हमने केरल म कर दी।

केरल का काम

केरल में केलप्पन जैसे नेता शांति-सेना के कमाण्डर होने के लिए तैयार हो गये। पहले तो वे किसी पक्ष में पड़े हुए थ। पर फिर उन्होंने फौरन बिना किसी हिचकिचाहट के इस्तीफा दे दिया। उनके पूर्वकर्म अच्छे थे। राजनैतिक क्षेत्र में और रचनात्मक क्षेत्र में काफी सेवा के काम उन्होंने किये थे। उनके प्रति लोगों में इज्जत थी। जैसे वे सेनापति बनने को तैयार हुए, वैसे ही उनका हुक्म मानने के लिए सेना भी तैयार हुई। पचासों जवानों ने यह कबूल किया कि हमें मंजूर है। एक अजीब ही दृश्य केरल में उपस्थित हुआ। एक सभा म खड़े होकर ८९ लोगों ने प्रतिज्ञा की कि हम शांति-सेना के लिए तैयार रहेंगे और आप हमें जहाँ आदेश देंगे वहाँ हम मरेंगे। उस सभा में

ऐसे दस-बीस लोग और भी हो सकते थे, परन्तु हमने उनको रोका। हमने कहा कि हम अभी ज्यादा लोग नहीं चाहते, यह प्रथम दिन है। इस तरह के परखे हुए लोग जिनसे हमारा सम्पर्क आया है आरम्भ के लिए बस हैं। इस तरह केरल में इसकी स्थापना हुई। शान्ति-सेना हमेशा के लिए सेवा-सेना होगी।

शान्ति-सेना का तत्त्व

शान्ति-सेना गांधीजी का शब्द है। जो दस-पाँच शब्द उन्होंने हमको दिये, उनमें से यह एक शब्द है। उन दिनों यह चीज एक ऐसी परिस्थिति में से निकली थी कि इसको ज्यादा अर्थ नहीं आ सकता था। वे भी महसूस करते थे कि शान्ति-सेना हमेशा के लिए सेवा-सेना रहनी चाहिए। परंतु जगह-जगह जो अशान्ति हो वहाँ हम पहुँच जायें और अपना जीवन अर्पण करें, इस प्रकार से यह चीज निकली। शान्ति-सैनिक वही हो सकता है, जो मातृवत् सेवक हो। 'मातृवत्' शब्द का मैंने बहुत सोच-समझकर प्रयोग किया है। भाई भाई को बचाता है, मित्र मित्र को बचाता है, सेवक स्वामी को बचाता है—ऐसी बहुत-सी मिसालें हैं। लेकिन माँ बच्चों को जैसे कठिन प्रसंग में बचाती है, वह अद्भुत ही है। यह मिसाल न सिर्फ मनुष्यों में है, बल्कि अन्य प्राणियों में भी है। किसी शेरनी का बच्चा पकड़ लिया जाता है, तो शेरनी किस तरह टूट पड़ती है, बावजूद इसके कि वह जानती है कि सामने बन्दूक है, उससे मैं खतम होनेवाली हूँ। शिकारियों ने अपने अनुभव सुनाये हैं कि शेर तो भाग गया, पर बच्चा पकड़ में आ जाने से शेरनी बार-बार सामने आती है और हमला करती है। फिर बन्दूक देखकर वह पीछे हटती तो है, पर मानती नहीं। फिर से आक्रमण कर पड़ती है। उसकी तृप्ति तब होती है, जब वह गोली का शिकार होती है और समझती है कि बच्चे के लिए मुझे जो करना चाहिए था, वह मैंने किया। शान्ति-सेना का यही तत्त्व है। शेरनी चाहती है कि बच्चे को छीननेवाले को मैं फाड़कर खाऊँ। यह सर्वोदय-विचार की मानवता नहीं है। अपने शिशु के बचाव का विचार

उसके मन में है। वह उद्यत है मारने के लिए, मरने के लिए भी। मरने तक वह कोशिश करती है और मरने के बाद ही उसका प्रयत्न समाप्त होता है। माता को सामनेवाले से भय ही नहीं मालूम होता। इसलिए मैंने कहा कि माता जिस तरह बच्चे का रक्षण करती है वैसा ही शांति सैनिकों को होना चाहिए। उनकी स्वाभाविक ही ऐसी प्रवृत्ति होनी चाहिए कि हमारे समाज में कहीं भी खतरा पैदा हो तो अपनी रक्षा का कोई खयाल छोड़कर उसी तरह शांति-सैनिक वहाँ दौड़ जायँ। माता की यह मिसाल तब लागू होगी जब माता के समान काम किया जायगा। इसलिए शांति-सैनिक मुख्यतया सेवा-सैनिक होगा। शांति सेना सेवा सेना होगी। वह निरन्तर वात्सल्य भाव से सेवा करेगी। हममें और जनता में स्नेह निर्माण हुआ है। उस हालत में कोई कठिन प्रसंग आता है, तब मनुष्य को प्राण की कोई कीमत मालूम ही नहीं होती। स्वाभाविक ही त्याग होता है। उस वक्त वह उसे त्याग समझता ही नहीं। वह समझता है कि यह प्रेम कार्य है।

आध्यात्मिक आधार

शांति सेना किस भौतिक या आध्यात्मिक आधार पर खड़ी होगी? हमारी सरकार सेना बनाती है। उस सेना का आध्यात्मिक तथा भौतिक आधार क्या है? उसका आध्यात्मिक आधार है, लोगों से प्राप्त किया हुआ वोट। वोट का आधार न हो तो उस सेना और लड़नेवाली टोली में कोई फर्क ही न रह जाय। पर सत्य है कि इस प्रकार से यह वोट का आधार भी बहुत ही क्षीण है। नाममात्र का बहुसंख्यक वोट है। कुल लोगों में से ६ प्रतिशत लोगों ने वोट दिये हैं। उनमें १ प्रतिशत वोट इस पार्टी को मिले हैं। बाकी के २ प्रतिशत वोट दूसरी पार्टियों में बँटे हैं। तीन प्रतिशतवाली पार्टी राज्य चलाती है। किसी भी देश में जहाँ लोकतांत्रिक ढाँचा है वहाँ १ फीसदी वोट से चुने हुए लोग तीसरी लोगों की सेवा नहीं करते, उन पर सत्ता चलाते हैं। मेरे लिए तो ऐसी हालत में सेवा करना ही मुश्किल हो जाता है। अगर गाँव में सेवा के लिए खड़ा होऊँ और गाँव में से तीन ही लोग मेरी सेवा करें तो और बाकी के लोग किसी

दूसरे दो-चार व्यक्तियों की सेवा चाहें, मेरी सेवा न चाहें, तो मैं जुनकर चाहूँ और उनके ऊपर अपनी सेवा लादूँ, यह मेरे लिए मुश्किल है। जो मेरी सेवा चाहते हैं उनकी सेवा मैं करूँगा और जो नहीं चाहते हैं उन पर अपनी सेवा लादूँगा, तो एक अजीब-सी बात हो जायगी। अब जो लोग नहीं चाहते हैं, उन पर सेवा लादने की बात नहीं है। उन पर सत्ता लादने की बात है। और इस आधार पर सेना बनती है। पर एक लैसंस माना जाता है कि उसके लिए जनता का वोट है। इसलिए वह राष्ट्र-रक्षक सेना मानी जाती है। तो यह आध्यात्मिक आधार उसके पीछे है। हमारे पीछे भी कोई आध्यात्मिक आधार चाहिए। हम करुणा-प्रेरित हैं और सेवा करना चाहते हैं इससे अधिक दूसरा कोई आध्यात्मिक आधार हमें मान्य नहीं है।

हमने कहीं खादी का कार्य शुरू किया, कहीं और ग्रामोद्योग का काम शुरू किया, तरह-तरह के रचनात्मक काम उठाये लेकिन लोगों की सम्मति नहीं ली! हमारे मन में सेवा की इच्छा है और जिनके हृदय में ऐसी करुणा है उनको लोगों में जाकर सेवा करने का अधिकार है। उसकी फिकायत भी नहीं है कि लोग उसकी बात मानते हैं या नहीं। मानते हैं तो ठीक है उन्हें मानने का अधिकार है। हम किसी गाँव में गये किसी कोशिश में क्यों न लगे। कहीं पचीस प्रतिशत लोग खादीधारी हुए, कहीं तीस प्रतिशत हुए, कहीं पैंतीस प्रतिशत हुए। बात रुक गयी। हमने माना कि बहुत अच्छा काम हुआ। बाकी के लोग खादीधारी न हुए हमारी बात उन्होंने न मानी। उन्हें न मानने का अधिकार था और जिन्होंने हमारी बात मानी उनको बात जँच गयी। इसलिए उन्होंने मानी। यह ठीक है उन पर सत्ता करने का हमको अधिकार है। परन्तु यदि सैनिक तरह से उनकी सेवा करना चाहता हूँ और बिना आपकी सम्मति के मैं सेवा करूँ तो मैं पाँव में शक्ति नहीं आयेगी।

सम्मतिदान

आज गाँव का काम करनेवालों के मन की क्या हालत है? कांग्रेस

जो कुछ वोट हासिल होते हैं, उसके पीछे कुछ बनता है। पी एस पी को कुछ वोट हासिल हैं तो कुछ बनता उसके पीछे है। आपके हमारे पीछे क्या है? ऐसे प्रश्न पर मुझ जैसा मनुष्य कह देता है कि हमारा यह संकल्प किल-सकल्प है। जहाँ निर्मल शुद्ध संकल्प होता है, वहाँ किल-सकल्प बन जाता है। यह करने का हमारा अधिकार है। लोगों में जाकर हम सिर्फ मर मिटें, इतनी ही तो हमारी आकांक्षा नहीं है। लोगों में जाकर हम शांति बना सकें, यह हमारी आकांक्षा है। सिर्फ हम मर मिटें, तो सब हो गया और उसके बाद अशांति कायम रही तो हमको परवाह नहीं। यह तो आखिरी अवस्था है। हमारा कर्तव्य हो गया। पर अपेक्षा यह है कि हमारी उपस्थिति का लोगों के दिलों पर ऐसा असर पड़े कि शांति बने। इस प्रकार का न सिर्फ सेवा का अधिकार, बल्कि लोगों के दिलों पर नैतिक प्रभाव डालने का जो अधिकार हम चाहते हैं उसके लिए लोगों की तरफ से कोई सम्मति होनी चाहिए। मैंने उसको सम्मतिदान नाम दिया है। एक दान की परंपरा चल पड़ी है। सम्मतिदान याने आपकी सेवा हमको मंजूर है। इसलिए हम कुछ न कुछ कर सकेंगे। आज राजनैतिक पार्टी को जो वोट मिलता है, वह निश्चित वोट है। आपके विचार हमको मान्य हैं। आपकी अपनी सेवा का अधिकार हम देते हैं। बस खतम हो गया। इससे ज्यादा हम कुछ भी करने के लिए बँधे नहीं हैं। हाँ आप टैक्स बढ़ायेंगे तो टैक्स देने के लिए बँधे रहेंगे। पर आप दान माँगेंगे, तो देने के लिए बँधे रहेंगे ऐसी बात नहीं है। हम कुछ करेंगे इस प्रकार की प्रतिज्ञा मानकर जो वोट हासिल किये जाते हैं, इन वोटों में नहीं है। आपको अधिकार है इसलिए आप प्रतिनिधि बनते हैं। हम ऐसी सम्मति नहीं चाहते कि हमारी रक्षा का अधिकार आपको हम दें। तब तो हम एक प्रकार के क्षत्रिय बन जायेंगे। शस्त्र चलानेवाले क्षत्रिय नहीं पर क्षत्रिय इस अर्थ में कि बाकी के लोग रक्षित और हम रक्षक। यह जो भूमिका अभी यहाँ हमारा एक धर्म बन गया। इस तरह हमको रक्षक का अधिकार देनेवाला वोट हम आपसे नहीं माँगते हमारा रूप आपको पसंद है इसलिए आप कुछ करेंगे ऐसी प्रतिज्ञा का निर्णायक सम्मतिदान हम आपसे माँगते

रंग पकड़ ले। जो कम्युनिटी प्रोजेक्ट इत्यादि योजना चले, उस योजना को सर्वोदय का रंग हो। सब तरफ कम्युनिटी प्रोजेक्ट फैले हों और हम उन पूरे न फैले हों तो उस हालत में हमारा उन पर क्या रंग चढ़ेगा? वे करेंगे कि सर्वोदयवाले कुछ सहयोग करेंगे, ऐसा हम मानते थे। पर अब देखते हैं कि उनकी कोई हस्ती नहीं है। कहाँ कोरापुट में हैं, तो उनका सहयोग वहाँ पर मिला। उनके कुछ पार्केट्स हैं। लेकिन सर्वत्र हमको उनका सहयोग नहीं मिल सकता। इसलिए इस परिस्थिति ने हम पर जिम्मेवारी डाली है कि हम हर गाँव में फैलें और उसका यही तरीका है कि ग्रामराज्य हो चुका है ऐसा हम समझकर चलें। इससे ग्रामदान का और ग्राम-निर्माण का कार्य भी जारी रहेगा और ग्राम-रक्षण के लिए शांति सेना भी खड़ी हो जायगी। उसका आधार है सम्पत्तिदान। हमें जिसने सम्पत्तिदान दिया है, मासिक दिया है उस आदमी ने प्रतिज्ञा की कि आपके पास में हमारा सहयोग होगा, ऐसा हम इसका अर्थ करते हैं। आप काम ही नहीं करते तो सहयोग किसलिए माँगते हैं? इसलिए जिस क्षेत्र में हम ऐसा काम करना चाहते हैं उस क्षेत्र में सम्पत्तिदान की बात करेंगे। ऐसे क्षेत्र बनाते बनाते हम सारे भारत में व्याप्त हो जायेंगे।

सुप्रीम कमांड

प्रत्येक सेनापति भगवान्, सैनिक और विविध क्षेत्र की सेवा योजना यह तीनों जहाँ मौजूद हों वहाँ उस स्थान के लिए कोई कमांडर मिलेगा तो उसकी कमांड माननी होगी। सारे भारत की शान्ति-सेना के लिए कोई सुप्रीम कमांड चाहिए, यह परमेश्वर ही करेगा। जिस भाषा में मैं बोल सकता हूँ उससे दूसरी भाषा में बोलने की ताकत मुझमें नहीं है। फिर भी स्पष्ट यह दीखता है कि अखिल भारत में शान्ति-सेना के सेनापतित्व की जिम्मेवारी विनोबा को उठानी होगी और ऐसी मानसिक तैयारी विनोबा ने कर ली है।

संस्थाओं का समर्पण

मुझे लगता है कि खादी, नयी तालीम, अस्पृश्यता निवारण आदि का काम करनेवाली हमारी जितनी रचनात्मक संस्थाएँ हैं उन सबको इस काम के लिए

समर्पित हो जाना चाहिए। जो खादी सेवक शांति सैनिक नहीं बनेगा उसको हम हीन नहीं समझेंगे। वह भी एक सेवक है। सेवा करे। जो खादी सेवक शांति सैनिक बनेगा वह खादी को विदा रखेगा। दूसरा सेवक खादी को विदा नहीं रखेगा बल्कि खादी के जरिये स्वयं विदा होगा। वह खादी का पालन नहीं करेगा खादी उसका पालन करेगी। जितनी रचना मक संस्थाएँ हैं, वे सबकी सब गांधीजी के नाम से निकली हैं। बाबा का उन सब संस्थाओं पर अधिकार है। अधिकार कम-वेशी होता है। बाबा का जहाँ अधिक-से-अधिक अधिकार था, ऐसी एक संस्था का हमने समर्पण करने का सोचा है—ग्राम-सेवा मंडल, गोपुरी (वर्धा)। हमने उन आदि भूदान कार्यकर्ताओं से कह दिया है कि तुम इस संस्था का चार्ज ले लो और फिर जिस तरह से उसे चलाना चाहते हो भूदान-मूलक रूप देने के लिए जो भी परिवर्तन करना चाहते हो कर सकते हो। इस संस्था में परिवर्तन के लिए जो गुंजाइश है, वह आगे होनेवाली है। पर जब यह प्रस्ताव किया था तब शांति सेना की बात उस संस्था के सामने हमने रखी नहीं थी। वह हमारे मन में थी। हमने सिर्फ इतना ही कहा था कि भूदानमूलक और ग्राम-दानमूलक ग्रामोद्योग प्रधान अहिंसक क्रांति के लिए यह संस्था का समर्पण हो। ऐसी तरह दूसरी संस्थाओं भी बरा सोचें और निश्चय करें। धीरे धीरे ग्राम-सेवा मंडल की तरह और संस्थाएँ भी ऐसे समर्पित होंगी जब यह ध्यान में आयेगा कि शांति सेना की बहुत जरूरत है।

विचार-स्वातन्त्र्य के लिए आचार-नियमन आवश्यक

सामाजिक जीवन का मूल आधार क्या है? विचार-स्वातन्त्र्य और आचार नियमन। इसकी सर्वोत्तम मिसाल अपना हिंदुस्तान का धर्म है। हिन्दुस्तान के धर्म म [illegible] स्थान [illegible] एक-दूसरे के बाद दुश्मन से हैं। सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, पूर्व मीमांसा, उत्तर मीमांसा, बौद्ध और जैन। और भी चार्वाक दर्शन [illegible] मौजूद नहीं हैं। बुद्ध के जमाने में कोई पचास तत्त्वज्ञानियों के भिन्न भिन्न [illegible] है। तत्त्वज्ञानियों की इस भूमि और संस्कृत

भाषा में हमने खूब विचार-स्वातंत्र्य देखा, लेकिन उसके साथ-साथ आचार निष्पन्न न होता तो धर्म के कैसी चीज ही नहीं बनती। इसलिए विचार स्वातंत्र्य की जो बात हमने सर्वोदय-समाज में रखी थी, उसके साथ-साथ शान्ति सेना के सेनापति का आदेश मानने की बात आज जो हम आपके सामने रख रहे हैं, उसमें विरोध नहीं है। उसका एक सूत्र हमने संस्कृत में बनाया है जो साम्य सूत्र में शामिल है—'संयमेन स्वैरम्'। अगर आप विचार में स्वैर रहना चाहते हैं तो आपको आचार में संयत रहना पड़ेगा। उसकी मिसाल मैं पेश करता हूँ। अगर एक निश्चित रास्ते से घूमने का तय हो, तो विचार बिल्कुल स्वैर नहीं रहता। वहीं देखना पड़ता है कि कहाँ से रास्ता फूटता है। अपना हमेशा का रास्ता निश्चित है तो आँख बंद करके मनुष्य चल सकता है और खूब स्वैर चिन्तन कर सकता है। रास्ते की कोई चिन्ता नहीं। रास्ता तय हो है। जहाँ रास्ता तय होता है, निश्चित होता है, मनुष्य आचार में संयत रहता है वहाँ उसके विचार के लिए बिल्कुल स्वातंत्र्य है। अगर विचार-स्वातंत्र्य हम चाहते हैं तो उसके साथ आचार निष्पन्न आता है।

मैसूर —निवेदक-शिविर म
२६ १ ५७

शान्ति-सेना के संबंध में स्पष्टता : २८ :

शान्ति सेना आदि के बारे में आपने बहुत अच्छे सवाल पूछे हैं। कल के व्याख्यान के बाद भी ऐसे सवाल न आते तो हम समझते कि हमारे सामने कोई मुर्दा वस्तु ही पड़ी है। अब हम आपके सवालों के संबंध में कुछ कहेंगे।

हमारा ध्येय

हमने शासन मुक्त समाज का ध्येय सामने रखा है। शासन मुक्त समाज शान्ति सेना से भी मुक्त होगा। उसमें सेवक-वर्ग रहेगा। अगर किसीसे कोई

बाबा की जिम्मेवारी

बाबा जब बोलता है, तो इम्पर्सनल (अवैयक्तिक) बोलता है पर्सनल (वैयक्तिक) भाषा नहीं बोलता। बाबा की अपनी वृत्ति है और वह यह कि दुनिया में कितनी भी कल्प चले तो भी बाबा दिन में तीन दफा खाना खायेगा। यह इसलिए कि बाबा मुख्यतः सीखा है वेदान्त और उसके बाद अहिंसा। गांधीजी ने अहिंसा बाद में सिखायी। उससे पहले वह वेदांत सीखा हुआ था। इसलिए बाबा से पूछा जाय कि कमान हाथ में लेने का क्या अर्थ है तो वह जवाब देगा कि उसका अर्थ है किसी मौके पर अंतिम अनशन का जिम्मा उठाना। मान लीजिये, किसी जगह भयानक घटना घटी, तो बाबा से पूछने पर वह कहेगा कि सत्याग्रह की परंपरा में उपवासादि आता है क्योंकि उसका सम्बन्ध अपनी आत्मा से पहुँचता है। पाप की जिम्मेवारी अपने पर आती है इसलिए पाप क्षालन करना पड़ता है। या हिंसा के खिलाफ कहीं न कहीं अनशन आदि करें जरूरी हो सकती हैं। क्योंकि उस परिस्थिति में अंतिम अनशन के सिवा और कोई चारा नहीं रह जाता। कुछ स्वभाव देखते हुए यह कहा जा सकता है कि किसी भी पाप की जिम्मेवारी अपने पर लेने की वृत्ति बाबा की नहीं है फिर भी बाबा को जिम्मेवारी लेना है क्योंकि परिस्थिति में कुछ गंभीरता है और इसलिए अपने निज स्वभाव के विरुद्ध कुछ जिम्मेवारी उठाने के लिए वह अवैयक्तिक रूप से तैयार हो रहा है।

कमांड का प्रश्न!

शांति-सेना में एक मुख्य कमांडर (सेनापति) होता है तो बीच में और भी होंगे क्या? होंगे और हो भी चुके हैं। केरल में नौ मनुष्यों ने सभा के सामने खड़े होकर हमारी उपस्थिति में यह प्रतिज्ञा की कि अनुशासन मानने की बात के साथ हम शांति-सेना में शामिल होते हैं। इस तरह जहाँ तक केरल का सवाल है वहाँ पर केलप्पन को नेता के तौर पर माना गया। अपनी-अपनी टोली बनाकर मार खाने के लिए खड़े होने की बात चल पड़ी है। परन्तु जैसे देखा जाय तो अहिंसा की कमांड में अपनी स्वतन्त्रानुभूति के सिवा

ने प्यारेलाल से कहा कि विनोबा को इत्तला दो कि जेल में जाते ही उपवास न करे। उन्होंने मान ही लिया था कि जब वह शख्स मेरे साथ चर्चा करके गया है तो उपवास जरूर करेगा। उन्होंने कोई कमांड (आदेश) नहीं दिया था। परन्तु जो कमांड से भी ज्यादा दिया जा सकता था, वह दिया था। सलाह पूछना कमांड से कम नहीं था।

नौ अगस्त के दिन ही हम भी जेल में गये। दादा साथ थे। जेल में जाते ही हमने जेलर से कहा : "तुम तो मुझे जानते हो कि मैं जेल के हर नियम का बारीकी से परिपालन करनेवाला हूँ। दूसरों से करवानेवाला भी हूँ। इसलिए मेरे जेल में आने पर तुम्हारा काम मिट जाता है। परन्तु इस वक्त वह नहीं होनेवाला है। मैंने सुबह तो खा लिया था इसलिए दोपहर का सवाल नहीं पर शाम को नहीं खाऊँगा और कब तक नहीं खाऊँगा मैं नहीं जानता। यह आपका अनुशासन तोड़ने के लिए जरा भी नहीं है। मेरा एक अनुशासन है, उसे मानने के लिए है।" यों कहकर मैं अन्दर चला गया। दो घंटे के बाद बुलावा आया। बापू ने प्यारेलाल से जो कहा था वह सन्देश उन्होंने किशोरलाल भाई के पास भेजा क्योंकि वे पकड़े न थे। किशोरलालभाई ने डिप्टी कमिश्नर से पूछा, डिप्टी कमिश्नर ने गवर्नर से पूछा कि क्या इस तरह सूचना दे सकते हैं तो गवर्नर ने कहा कि हाँ, दे सकते हैं; बशर्ते कि एक शब्द भी अधिक न बोला जाय। मुलाकात वगैरह कुछ न हो सिर्फ इतना ही कहा जाय कि बापू का आदेश है कि उपवास नहीं करना। डिप्टी कमिश्नर ने कहा कि ठीक है मैं कहूँगा। किशोरलालभाई ने कहा कि इस तरह आपके समझाने से विनोबा नहीं मानेगा इसलिए हममें से किसीको जाना होगा। फिर [illegible] आये। उन्होंने बापू का आदेश सुनाया। तो मेरा वह उपवास नहीं हुआ।

बाद में जब बापू ने उपवास शुरू किया तब मैंने भी शुरू किया। बापू ने जितने आनन्द से उपवास किया मेरा दावा है कि मेरे उपवास में उससे लेशमात्र कम आनन्द नहीं था। ज्ञान तो मेरे पास है नहीं। आप जानते हैं कि ज्ञान तो उनके पास था परन्तु श्रद्धा से मैंने माना था। मैंने उसे हुक्म समझा था।

चाहे आप यह शब्द इस्तेमाल करें या न करें। उससे उसका पूरा अर्थ प्रकट नहीं होता है। परन्तु मैंने यह इसलिए कहा कि श्रद्धा से आत्म समर्पण करके आनन्दपूर्वक और प्रेमपूर्वक अपना बलिदान किया जा सकता है। कोई बलपूर्वक काम करे, तो उसके मन में संशय आ सकता है। मुझे आदेश देनेवाले या के ज्ञानी के चित्त में कोई शंका हो ऐसा उन्हें भ्रम हो सकता है, परन्तु श्रद्धावान के चित्त में कोई संदेह पैदा नहीं हो सकता। इसलिए इसमें मुझे कोई संदेह नहीं कि श्रद्धा से यह काम किया जा सकता है।

सर्वोदय समाज का लक्षण

अब यह आज्ञा कौन करे, किसे करे, उसका क्षेत्र क्या होगा आदि सवाल उठ सकते हैं। अगर हम किसीसे कहें कि कुएँ में कूदकर मर जाओ, तो कोई श्रद्धा से इस आज्ञा का पालन कर सकता है। परन्तु हम किसीसे यह नहीं कह सकते हैं कि अपनी चीज को ज्ञान न हो तो भी ज्ञान मानो। ज्ञान के बारे में आज्ञा हो ही नहीं सकती। अपने पर अवलम्बित वस्तु है। फिर भी कुछ लोग धर्मान्तर आदि जबर्दस्ती से करते हैं। किंतु इस्लाम के लिए इतिहास में यह जाहिर है कि उसने करोड़ों का जबरदस्ती से परिवर्तन किया। उस इस्लाम ने कहा है कि 'ला इकराह फिद्दीन'। धर्म के बारे में कभी जबर्दस्ती नहीं हो सकती। "कोई मनुष्य कोई चीज नहीं समझ रहा है उसे अगर कोई ऐसी आज्ञा दे कि तू समझ ले या कहे कि आज्ञा से समझने की बात होती तो तुम्हारे लिए मुझे इतना आदर है कि मैं यह बात फौरन समझ जाता। पर अब नहीं समझ रहा हूँ।" विचार के क्षेत्र में परिपूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिए। यह सर्वोदय समाज का बहुत बड़ा लक्षण है। उसमें हम किसी तरह से फरक नहीं आने देंगे।

सौम्य अर्थ लें

क्या पर्वानिष्ठ निश्चयात्मक लोकसेवक काफी नहीं हैं? उनके होते हुए शांति सेना की क्या जरूरत है? इसमें शांति सेना के मूल विचार पर ही प्रहार है। इस पर मुझे यह कहना है कि कुछ मौके ऐसे होते हैं कि वहाँ अगर देर हो जाय, तो काम नहीं होता। नेपोलियन से जब पूछा गया कि ऑस्टरलिट्ज की लड़ाई में

तुम्हारी पराजय किस कारण से हुई । उसने कहा कि नायक ने ७ मिनट देर की, इसलिए । पहले से हमारी ऐसी व्यवस्था हुई थी कि फलानी जगह फलानी सेना फलाने वक्त आयेगी, पर उसके आने में सात मिनट देर हुई । खैर, इतना धार्मिक अर्थ लेने की जरूरत नहीं है । परन्तु ऐसे मौके आते हैं तो थोड़े ही समय में सेना भेजने की जरूरत होती है । इसलिए कमांड शब्द इस्तेमाल किया गया । अब उसका जो ठीक-से-ठीक अर्थ आप ले सकते हैं, वह लें ।

मैसूर
२०-६-५७

—गुजरात के कार्यकर्ताओं के बीच

शान्ति-सेना में कर्तव्य विभाजन और विचार शासन : ३९

प्रश्न : आपने चांडिल में विचार-शासन और कर्तृत्व विभाजन की बात कही थी, अब आचार नियमन की बात कर रहे हैं । तो क्या चांडिलवाली प्रक्रिया कायम है या उसमें कोई फर्क पड़ा है ?

कर्तव्य

उत्तर : शांति सेना की रचना में परिपूर्ण कर्तृत्व विभाजन है । उसका अर्थ यह है कि सारा हिंदुस्तान ७ हजार हिस्सों में विभाजित किया जाय और उस उस हिस्से में एक एक मनुष्य रहे । वह अपनी स्वतंत्र बुद्धि से वहाँ काम करे । उसे बुद्धि की कोई लड़ाई (रण) की में पहुँचाने की कोई योजना हमारे पास नहीं है । वह अपने लिए, अपने सिद्धांतों के लिए और उस समूह के लिए जिसका वह सेवक है स्वतंत्र रीति से जिम्मेदार है । अगर यह स्वतंत्र न हो तो वहाँ काम कर ही नहीं सकेगा । उसे कुछ सूझेगा भी नहीं । हर मौके पर वह सवाल पूछेगा तो उत्तर देनेवाला उत्तर दे भी नहीं सकेगा । उत्तर देनेवाला उस स्थान में तो नहीं रहेगा । इसलिए पूरी जिम्मेदारी, कर्तृत्व विभाजित होता है । विचार शासन उसके लिए प्रमाण है । अपने विचार से वह उसकी निरंतर सेवा करे, उसके परिवार में रहे, उसके सुख दुःख को पहचाने, उसके सुख से सुखी

हो, उसके दुःख से दुःखी हो, उसका अपना और दुःख-सुख न हो। मौके पर भी कष्ट प्रेमपूर्वक, निरभिमान से नहीं बल्कि मातृवत् वात्सल्य भाव से अपना बलिदान करने के लिए तैयार रहे। इसके सिवा दूसरा कोई साधन उसके पास नहीं है। इस तरह विचार-शासन और कर्तृत्व-विभाजन की परिपूर्ण योजना शान्ति-सेना में है। जहाँ आज इस प्रकार का आयोजन करते हैं, उन (लिंक) पक्षों का आयोजन इस प्रकार से नहीं होता है। उन्हें एकत्र रखा जाता है। विशेष प्रकार से ट्रेनिंग दी जाती है। उन्हें यांत्रिक बनाया जाता है, बाहर के किसी विचार का उन्हें स्पर्श न हो, ऐसी योजना की जाती है, जिससे कि उनमें बुद्धि-भेद पैदा न हो। परन्तु हमारी योजना में तो जितने भी विचार-प्रवाह चलते हैं जिनकी प्रतिक्रियाएँ समाज के चित्त पर होती हैं उन सबका स्वागत भाव है, स्वतंत्र बुद्धि से निष्पक्षपातपूर्वक चिन्तन करना सेवकों का काम है। किसी भी विचार का ग्रहण करने के लिए या उसका परित्याग करने के लिए वे मुक्त हैं। इसलिए अगर कोई शान्ति-सैनिक किसी दलविशेष से परिचित नहीं रहेगा तो उसकी यह अज्ञानजन्य गलती मानी जायगी। दुनिया के किसी ज्ञान से इसे वंचित रखने का नाम नहीं है। बल्कि दुनिया के कुल ज्ञान से इसे अपने आपको परिचित रखने की बात है। फिर भी यह समझा नहीं जाता है।

सहायक कैसे हो?

अमीर-पूजा का भय

वीर-पूजा नहीं होनी चाहिए, ऐसा आजकल बहुत बोला जाता है। परन्तु ऐसा तभी तक बोलते रहेंगे जब तक कोई वीर सामने खड़ा नहीं होता। हम खूब ऐंठ करें कि हम निर्गुण पूजक हैं सगुण पूजक नहीं हैं। परन्तु यह तभी तक चलता है, जब तक सगुण का साक्षात्कार नहीं होता। जहाँ सामने सगुण खड़ा होता है वहाँ हमने ऐसा कोई निर्गुणवादी नहीं देखा, न सुना, जिसका सिर वहाँ न झुका हो। यह हर क्षेत्र में होता है। इसलिए वीर पूजा का उतना डर नहीं है, जितना अमीर पूजा का है। अमीरों का महत्त्व सामूहिक योजना के कारण बढ़ता है।

लोग चुने जाते हैं। जो चुने जाने के लायक हैं वे उससे अलग रहते हैं। और जो वास्तव में लायक नहीं हैं, वे चुने जाते हैं। इसलिए सामूहिक योजना विश्वसनीय है कि कोई अकेला व्यक्ति विश्वसनीय है, इसका निर्णय अभी समाज को करना बाकी है।

व्यक्ति या विचार ?

सामूहिक योजना से फैसला हो तो अधिक स्फूर्ति आती है। उतनी व्यक्ति निरपेक्षता वास्तव में हममें आती हो तो अच्छा ही है। हमें व्यक्ति निरपेक्ष बनकर बनना चाहिए। जहाँ तक विचार का ताल्लुक है विचार विरुद्ध व्यक्ति ऐसा सवाल खड़ा हो, तो विचार ही प्रधान है। व्यक्ति की कोई हैसियत नहीं है। एक जगह विचार के साथ व्यक्ति है और दूसरी जगह व्यक्तिहीन विचार है क्योंकि हम सब देहधारी हैं इसलिए हमारे लिए विचारयुक्त व्यक्ति अधिक श्रेय साबित होगा। ऐसी अभी तक समाज की स्थिति है। आगे विचार की निष्ठा सर्वत्र फैली हुई होगी एक दूसरे से विचार-विमर्श करने की भी जरूरत नहीं रहेगी। उस हालत में समाज आगे बढ़ सकता है। बौद्ध धर्म में भी 'बुद्धं शरणं गच्छामि' से आरम्भ किया गया। हमें समझना चाहिए कि एक बिन्दु होता है जहाँ मनुष्य की बुद्धि काम नहीं करती। वैसे बुद्धि बहुत काम करती है, वह बलवान् है। परन्तु एक बिन्दु ऐसा उपस्थित होता है जहाँ

है। इस तरह बहुत बुद्धिमत्ता से काम करना होगा। यह काम सैनिक की बुद्धि से होगा। जहाँ बुद्धि से काम न हो वहाँ मारामार करने की जरूरत पड़ेगी, तो वह फिर भी वाजिब। उसका फल सूक्ष्म रूप से मिलेगा या नहीं इसकी कोई परवाह नहीं है। वह परमेश्वर की योजना में मिलेगा ही। केवल अभिमान का परिणाम नहीं होगा, शुद्ध अभिमान का परिणाम होगा।

मैसूर
२०-१-५०

सही समझ : ४० :

प्रश्न : यदि कोई पार्टी अहिंसा में न मानती हो और अपने संविधान में भी हिंसा का विरोध न करती हो तो क्या उस पार्टी के सहयोग से साधन शुद्धि रहेगी ?

उत्तर : हिन्दुस्तान में कोई पार्टी अहिंसा में विश्वास रखनेवाली है, ऐसा ज्ञान मुझे नहीं है। शान्तिपूर्ण और वैध उपायों को माननेवाले लोग हैं। अहिंसा में विश्वास रखनेवाले लोग कांग्रेस में हैं ऐसा मैं जानता और मानता हूँ। दूसरी पार्टियों में भी ऐसे कुछ व्यक्ति हैं। गांधीजी ने कांग्रेस के विधान में 'शान्तिपूर्ण और वैध उपाय' की जगह 'अहिंसात्मक और सत्यमय' शब्द रखने का सुझाव दिया था लेकिन उस सुझाव को स्वीकार नहीं किया गया। शान्तिपूर्ण और अहिंसात्मक में अंतर है इसी तरह वैध और सत्यमय में भी अंतर है। शब्दों के अंतर कोश पर से नहीं मालूम होते। वे तो प्रत्यक्ष अनुभव से व्यवहार से और वृत्ति से मालूम होते हैं। अंग्रेजी में संभव है 'ट्रुथफुल' और 'लेजिटिमेट' एवं 'पीसफुल' और 'नानवायलेंट' का अर्थ एक ही होता हो परन्तु वह दूसरे संदर्भ में है। कांग्रेस के और देश के संदर्भ में ये दोनों शब्द एक नहीं हैं। यह अन्वयव्यतिरेक से सिद्ध हुआ है। अगर ये दोनों शब्द एक ही होते, तो बापू की सूचना या तो निरर्थक मानी जाती या ऐसे ही स्वीकार हो जाती। परन्तु उनकी सूचना सार्थक

मानी गयी और उसका अस्वीकार किया गया। परमेश्वर की कृपा से अहिंसा में माननेवाले कुछ व्यक्ति हर जगह मौजूद हैं, जो हर जमाने में और हर देश में होते हैं। शायद इस देश में कुछ अधिक तादाद में हैं।

सुप्रीम कमांड का अर्थ

प्रश्न : आपने सुप्रीम कमांड की बात जिस तरह समझायी, उसका अर्थ होता है आत्मसमर्पण करना। क्या आदेश देने के इस प्रकार में प्रेम का अभाव नहीं होगा? उसमें क्या प्रेरणा मिलेगी?

उत्तर : हमने मामूली कमांड की बात नहीं की, सुप्रीम कमांड की बात की है। इन छोटी-छोटी चीजों में हुक्म देनेवाली नहीं है। वह जितनी कम तादाद रखी जायगी, उतनी ज्यादा सुप्रीम होगी। इसलिए सुप्रीम कमांड का डर रखने का कोई कारण नहीं है। हम अपने मन को अंतिम बलिदान के लिए तैयार रखें। गुरु की तलाश यानी शिष्यत्व की प्राप्ति का प्रयत्न। सुप्रीम कमांड यानी आखिरी प्रश्न के लिए अपने मन को तैयार रखना। इसके सिवा उसका ज्यादा अर्थ मत करो।

राज्य की आवश्यकता

प्रश्न : हम जिस शासन-मुक्त समाज को आदर्श मानते हैं, उसमें अंतर्व्यवस्था न आवश्यक रहेगा, न कोई आक्रमण। हर व्यक्ति अंतःप्रेरणा से तथा निजी अभिक्रम से व्यवहार करेगा। ऐसी अवस्था में शांति-सैनिक के गुणों से युक्त व्यक्ति भले ही समाज में रहेंगे, लेकिन शांति-सेना जैसी कोई संस्था, फिर वह किसी भी स्वरूप की क्यों न हो, नहीं रहेगी। ऐसी अवस्था में क्या हम शांति-सेना के संगठन को संक्रमण-अवस्था का प्रतीक मान सकते हैं?

उत्तर : अभी जो एटम, हाइड्रोजन बम वगैरह तैयार हुए हैं, उनके परिणामस्वरूप शासन-मुक्त समाज जल्दी आने का समय हो गया है। इससे समाज का भी मन भिन्न जानकारी और किसी मसले पर सोचने का कोई कारण नहीं रहा। इसलिए संगठन क्या होगा, इस बारे में मैं कभी नहीं सोचता। संक्रमण-अवस्था में क्या करना है, यह भी नहीं सोचता। क्योंकि संक्रमण-अवस्था

एक संक्रमण अवस्था है जो भूतकाल और भविष्य के बीच का काल है। हर कोई काल संक्रमणकाल है। इसलिए मैं वर्तमान परिस्थिति और आवश्यकता के विषय में ही सोचता हूँ। भूदान-यज्ञ किसी सूरत में शुरू नहीं होता अगर तेलंगाना की घटना नहीं बनती और उस दिन जमीन की माँग न होती। कार्यक्रम परिस्थिति के अनुसार प्रकट होता है। उसे परिस्थिति के अनुसार बदल भी सकते हैं। आज हिंदुस्तान की परिस्थिति शांति-सेना की माँग कर रही है। यह माँग अगर पूरी हो जाय, शांति स्थापित करने का प्रसंग न आये तो यह शांति-सेना सेवा-सेना बन जायगी। उसके बाद सेवा के भी प्रसंग नहीं आयेंगे तब लोग अपना अपना काम कर लेंगे तो सेवा-सेना की जरूरत भी नहीं रहेगी। एकरस समाज, सर्वोदय समाज बन जायगा। धीरे धीरे एकरसता, एकरूपता आती जायगी और विविध भेद क्षीण होते जायेंगे। उस अंतिम अवस्था में तो जो किसान होगा वही कारखानेदार होगा, वही शांति सैनिक होगा, वही सत्याग्रही होगा। एक में सारे समा जायेंगे। ऐसा वह परिपूर्ण होगा। परन्तु आज की अवस्था में यह नहीं है। इसी कारण से हमारा आन्दोलन ग्रामराज्य क्रम-क्रम [illegible] में है।

आजकल कुछ लोग अहिंसा के क्षेत्र में काम कर रहे हैं। कुछ मानुष पैदा कर रहे हैं। [illegible] किंतु डाक्टर मानुष बनने की कोशिश कर रहे हैं। उनकी यह पेशा 'पेशा' ही होगी। इसलिए अहिंसा का वस्तु निर्माण होना चाहिए। ये लोग अहिंसा का काम कर रहे हैं। इतने से अब नहीं चलेगा। हरएक के मन में अहिंसा का भाव आने में देर भी हो, परन्तु आज देश पर अहिंसा का प्रभाव पड़ना चाहिए। इसलिए शांति-सेना का कार्यक्रम दूर का कार्यक्रम नहीं है बल्कि आज का है।

शान्ति-सैनिक की जिम्मेवारी

अब जब इमर्जेन्सी ([illegible]) के समय [illegible]

गोली चलाने और पत्थर फेंकने का फर्क

प्रश्न : सरकार गोलियाँ चलाती है और लोग पत्थर फेंकते हैं, इस सम्बन्ध में आपका क्या कहना है ?

उत्तर : लोगों का पत्थर फेंकना और लोकतंत्रात्मक पद्धति से बनी हुई सरकार का गोली चलाना एक कोटि के नहीं हैं ये दोनों भिन्न भिन्न हैं। सरकार की ओर से जो गोलियाँ चलती हैं उनके पीछे एक स्वीकृति है। उन्हें एक आज्ञा हुई है। और जो पत्थर फेंके जाते हैं उनके पीछे स्वीकृति नहीं है आज्ञा नहीं है। इस का अधिकार हमने सरकार के हाथ में दिया है। उसमें इतनी ही चर्चा हो सकती है कि सरकार उसका उचित उपयोग कर रही है या अनुचित ? गोलियाँ जो चलीं वे परिमाण में ज्यादा थीं या कम ? पत्थर फेंकनेवालों के बारे में यह चर्चा नहीं हो सकती कि पत्थर फेंकना उचित था या अनुचित ? इतनी मात्रा में फेंकना योग्य है या नहीं ? उस बारे में यही कहा जा सकता है कि पत्थर फेंकना गलत है। लोगों ने बाकायदा गोलियाँ चलाने की सत्ता सरकार के हाथ में दी है। उसके पीछे आपकी हमारी और सबकी सम्मति है। गोली चलाना ही गलत है यह तब तक नहीं हो सकता जब तक जनता सरकार को फौज खत्म करने की आज्ञा न दे। आज पार्लियामेंट में सरकार की तरफ से बिल आते हैं। उसमें सुझाव पेश किये जाते हैं कि फलाना खर्च कम कर दिया जाय। परंतु फौज के लिए सरकार की तरफ से जो रकम माँगी जाती है उसके बारे में कोई सुझाव पेश नहीं किये जाते ! वे माँगें एक क्षण में मंजूर होती हैं। सरकार से सिर्फ इतना ही पूछा जाता है कि वह सेना पर काफी खर्च कर रही है या कम कर रही है ? हमारे बचाव की ठीक व्यवस्था है न ? आधुनिकतम सामान उसने खरीदे हैं या पुराने गये-बीते शस्त्रों से ही काम चला रही है ? सरकार सेना पर जो खर्च करती है, उसके खिलाफ किसीकी कोई शिकायत नहीं होती। आप किस आधार से कहते हैं कि गोली चलाना गलत है ? गोली चलाना आज की हिंदुस्तान की समाज-रचना में मान्य की हुई बात है परंतु पत्थर फेंकना मान्य नहीं है। ये दोनों बातें ध्यान में रखनी चाहिए। यह ठीक है कि पत्थर फेंकने से सिर फूटते हैं प्राण नहीं जाते

और गोली से प्राप्त करते हैं। लेकिन वह स्थूल अहिंसा के नजदीक है और यह प्रकार अहिंसा के नजदीक नहीं है। सरकार आखिर सरकार होती है। वह व्यक्ति के तत्त्व के निरसन के माफिक नहीं होती। उससे यह काम बनेगा भी नहीं। तब काम किससे बनेगा? उसकी जिम्मेदारी आप पर और हम पर आती है, जो अहिंसा और सत्य को मानने का दावा करते हैं। जन-शक्ति का पालन पुष्टि का हमारा ध्येय है और गांधीजी की विरासत हम मिली है इसलिए यह हमारा बिल्कुल स्पष्ट कर्तव्य है। जो शांति-सेना में नाम देंगे, वे निश्चित सैनिक होंगे। अशिक्षितसैनिकों के तौर पर लाखों करोड़ों लोगों को इसमें शामिल होना चाहिए।

कर्तव्याचरण का आन्दोलन

प्रश्न : सर्वोदय-विचार से लोग प्रभावित अवश्य हो रहे हैं। परन्तु इस विचार को जीवन में उतारने के लिए तैयार नहीं हो रहे हैं। जिस प्रकार 'स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है' मंत्र की सिद्धि के लिए असंख्य भारतीय लोग आ पड़े थे, उसी प्रकार ग्रामदान और ग्राम-रचना के मंत्र की सिद्धि के लिए क्या व्यावहारिक कदम हो जिससे जनता इसे उठा ले?

उत्तर : हम जो काम कर रहे हैं, वह जन्मसिद्ध अधिकार के लिए नहीं, बल्कि जन्मसिद्ध कर्तव्य के लिए कर रहे हैं। जहाँ जन्मसिद्ध अधिकार की प्राप्ति का प्रश्न है, वहाँ मामला बिल्कुल आसान हो जाता है। उसमें कोई विशेष कठिनाई नहीं रहती, क्योंकि उसमें थोड़ा-सा त्याग करना पड़ता है। उसके लिए जो आन्दोलन करना पड़ता है, वह भी हर व्यक्ति को खुद, इतनी [illegible] जान ही [illegible] नहीं रहती। इस प्रकार पुराना आन्दोलन अधिकार-प्राप्ति का आन्दोलन था [illegible] यह कर्तव्याचरण का आन्दोलन है।

[illegible] अधिकार हाथ आने पर वे कहाँ गये हैं? [illegible] पर भी उनकी पुरानी स्थिति का पता चल सकता है। [illegible] ग्राम के लिए कुछ काम तो करना ही पड़ता है। इसलिए [illegible] जवानी में मेहनत करे, तो उसे मेहनत [illegible]

नहीं कहा जा सकता। उन्हें आराम चाहिए, इसलिए आज त्याग किया। वह आंदोलन भी पवित्र था, उसमें पवित्र लोग थे। परन्तु स्वयमेव स्वराज्य-प्राप्ति पवित्र नहीं है। गांधीजी ने उसे धर्मरूप बनाया था इसलिए उसमें बहुतों के जीवन-परिवर्तन हुए। अन्यथा वे न होते। अपना यह कार्य बहुत कठिन भी है और आसान भी। कठिन इसलिए है कि आज मनुष्य वासनाओं में पड़ा है। उन सबका त्याग करना पड़ता है तो कठिन मालूम होता है। परन्तु यह आसान इसलिए है कि इसमें करना क्या है? सिर्फ छोड़ना है। छोड़ने का काम हमेशा आसान होता है। अगर मैं आपसे कहूँ कि गुस्सा नहीं करना है, तो आपको कुछ करना नहीं पड़ेगा। क्रोध न करना कोई तकलीफ देनेवाली बात नहीं है। क्रोध करने के लिए कुछ करना पड़ेगा आँखों का विस्तार करना होगा आँखें लाल करनी होंगी। इसी तरह हिंसा न करो कहा तो उसके लिए परिश्रम करने का कोई सवाल नहीं है। जो कार्यक्रम हम रख रहे हैं यह आत्मा के आधार पर खड़ा है। 'ग्राम-परिवार के अंग बनो' यही हम कहते हैं तो उसमें कौन तकलीफ होनेवाली है? यह बहुत ही आसान आंदोलन है। आज वासना के कारण लोगों की जो प्रवृत्ति बनी है इसके लिए यह कठिन मालूम होता है। लोग हमसे कहते हैं कि आप कठिन साधना अंगीकार करने के लिए कह रहे हैं। मुझे जो आसान साधना मालूम होती है उसीका अंगीकार करने के लिए कहता हूँ। यह भी कार्यकर्ताओं को कठिन मालूम होता है। परन्तु जिस साधनाक्रम से मैं जा रहा हूँ, मुझे श्रद्धा है कि यह बहुत ही आसान है। उसमें बहुत ही आराम है। अलबत्ता लोग जिस क्रम से जा रहे हैं सत्तार-चक्र में मस्त हैं वैसा काम मुझसे कैसे बनेगा? वह तो मुझे बहुत कठिन कार्य मालूम होता है।

एक भाई ने कहा कि हिंदुस्तान के तत्त्वज्ञान में पलायनवाद है। मैं नहीं जानता कि हिंदुस्तान के तत्त्वज्ञान में क्या है और क्या नहीं है। परन्तु दुनिया में जो सबसे श्रेष्ठ पलायनवादी हैं उनमें मैं एक हूँ। घर को आग लगी हो तो मैं वहाँ से भागना चाहता हूँ। धम्मपद में लिखा है कि 'कोनु हासो किमानन्दो निच्चं पज्जलिते सति' (जरावग्गो) चारों ओर आग लगी है तो हास्य की हँसी

और करने का आनन्द! इसीलिए मैं घबराता हूँ। मैं कहना चाहता हूँ कि मेरा ग्रामदान-कार्यक्रम बिलकुल आसान है। इस कार्यक्रम को आप आसान ढंग से और आसान समझकर लोगों के सामने रखें तो लोग फौरन कबूल करेंगे। यह कार्यक्रम सारी जनता कैसे कबूल करेगी? ग्रामदान के अभाव से ग्रामदान मुश्किल है। दान के अभाव से दान अधिक मुश्किल है और दुःखद है। खुद समझो और लोगों को समझाओ। आज दुःख से दुनिया जर्जर है और यह दुःख-मुक्ति का कार्यक्रम है, इसलिए सुन्दर है, आसान है। गाँव से हर कोई तरकारी खरीदने के लिए बाजार में जाता है। पचास लोग तरकारी खरीदने के लिए ४ मील चलते हैं तो २०० मील की यात्रा हुई। अगर गाँव में सामूहिक दुकान हो तो यह २०० मील का बोझ कम जाय। आज तमाम किसान रात को जागते हैं ताकि पड़ोसी के बैलों से अपने खेत की रक्षा हो। सब किसान एक हो जायँ तो क्या बैलों का इन्तजाम नहीं कर सकते? बैलों का इन्तजाम आसान कर सकते हैं, परन्तु मानव-प्रेरित बैलों का इन्तजाम करना कठिन है। आज हर कोई अलग-अलग कर्ज लेता है, साहूकार के पंजे में आता है और दुःखी होता है। हरएक को शादी के लिए कर्ज लेना पड़ता है। इसलिए एक शादी याने जिन्दगी की बरबादी! परन्तु गाँव एक हो जाय, तब शादियाँ गाँव की तरफ से होंगी। शादी याने सचमुच कल्याणम् (तमिल में शादी को कल्याणम् कहते हैं) हो जायगा। आनन्द का उत्सव हो जायगा। तब निमित्त गाँव में प्रेम प्रकट होगा।

अभी नेताओं के सम्मेलन में चर्चा चली थी। एक भाई ने कहा कि गाँव के लोगों में सहयोग होना चाहिए। दूसरे ने कहा कि इससे समाधान नहीं होगा, ग्राम-परिवार बनना चाहिए। किसीने उत्तर दिया कि ग्राम-परिवार तो आगे की बात है, सहयोग आसान है। किसीने कहा कि यह आगे की बात ही सामने रखिये, क्योंकि हमारी ग्रामीण जनता के लिए यह आसान है। सहयोग शब्द से बड़ा भ्रम पैदा होता है। उसके लिए अपनी भाषा में शब्द भी नहीं है। संस्कृत में शब्द बना सकते हैं, परन्तु अपनी भाषा में जिसके लिए शब्द नहीं है, वह कैसे मान्य होगा? ग्राम-परिवार कहने से जनता आसानी से ग्रहण करेगी।

यह आंदोलन धर्मपरायण है, इसलिए अभी तक के आंदोलनों से उसका तरीका भिन्न है। दूसरी बात यह है कि इसे आसान समझकर और आसान समझाकर जनता के सामने रखोगे तो काम होगा। खुद अपने जीवन में भी इसे आसान समझना होगा। अगर मन में यह हो कि यह कठिन काम है, इसके लिए अपना बड़ा वैराग्य आदि छोड़ना पड़ेगा और फिर जनता में जाकर कहो कि यह आसान काम है, तो काम नहीं बनेगा। हमारा किसान अब इतना चतुर बन गया है कि वह आपको इतना पूछ ही लेगा कि 'अगर यह इतना आसान है तो आपके जीवन में कितना आया है?'

आजकल सत्याग्रह का जो व्यायाम चल रहा है उससे सत्याग्रह करने-वालों को व्यायाम की आदत पड़ जाती है और जनता को यह सुनने की आदत हो जाती है कि पचास व्यक्ति जेल गये या सौ व्यक्ति गये। इस तरह यह कार्यक्रम सत्याग्रह शक्ति को कुंठित करने का कार्यक्रम है। जो मनुष्य हर मामूली बात में गुस्सा ही करेगा उसके क्रोध का प्रसंग विशेष में कोई असर नहीं होगा। अगर आप चाहते हैं कि आपके क्रोध का असर हो, तो आपको कभी क्रोध नहीं करना चाहिए। हर बात में क्रोध करने से सामनेवाले को आपका क्रोध पचाने की आदत हो जायगी। सत्याग्रह शक्ति व्यायाम से नहीं बढ़ती। उसके लिए सेवा, अपरिग्रह, आत्मशुद्धि, तपस्या आदि की जरूरत है। हम अपने जीवन में लोगों के सामने एक चीज रखें तो लोग समझ जायेंगे कि सत्याग्रही कौन है। सत्याग्रह में सत्य ही महत्त्व का है, 'आग्रह' नहीं है। उसमें वे दो शब्द जुड़े हुए हैं इसलिए गलतफहमी होती है। फिर भी वे जुड़ गए हैं। उसमें से हम अच्छा अर्थ निकालते चले जायँ। सत्याग्रह का अर्थ है हमारा निज का अनाग्रह। सत्य को ही हम आगे करते हैं, हम बीच में न आवें। होता यह है कि सत्य के नाम से हमारा ही आग्रह सामने आता है। इसलिए सत्य का ही अपना आग्रह करने छोड़ दिया जाय तो उसके सामने असत्य टिक नहीं सकता। बीच में हमारा आग्रह आता है, तो सत्य छिप जाता है। इससे सत्याग्रह शक्ति कुंठित होती है।

सबसे श्रेष्ठ सत्याग्रह जो हम कर सकते हैं कर रहे हैं। ग्रामदान आदि कार्य

इसीकी आज्ञा लेकर काम करने से गाँव की ताकत कभी विनष्ट नहीं होगी। अगर हमारे गाँव में साधन कम हों, हमारे नसीब में गरीबी हो तो उसे भी हम बाँट लें। दुःखी होंगे तो सब साथ में दुःखी होंगे और सुखी होंगे तो सभी सुखी होंगे। ग्रामदान के बारे में समझाते हुए हमने यहाँ तक कहा था कि ग्रामदान के गाँव में अगर चोरी करने की नौबत आयेगी तो सभी लोग चोरी करेंगे। वह सामूहिक चोरी होगी। आज के गाँव में किसी किसीको कर्ज लेना पड़ता है। पर ग्रामदान के गाँव में कर्ज लेने की नौबत आयी तो सारा गाँव कर्ज लेगा। आज गाँव में फसल बढ़ती है, तो कुछ लोगों की बढ़ती है। पर ग्रामदान के गाँव में फसल बढ़ेगी तो सारे गाँव की बढ़ेगी। व्यक्तिगत तौर पर सब सुखी दुःखी हैं। पर ग्रामदान के गाँव में कोई व्यक्तिगत तौर पर सुखी-दुःखी नहीं रहेगा। सामूहिक ढंग से ही सुखी और दुःखी रहेंगे। जब हम अपनी सारी बुद्धि का उपयोग करते हैं तो हृदय में संतोष होता है। नहीं तो नहीं होता। इसी तरह अगर अपनी सारी शक्ति एकत्र करायें तो हमें सुख शांति मिलेगी।

पावित्र्य और सौभाग्य सदा स्वावलंबी रहें

महाराष्ट्र में रिवाज है कि जब कीर्तन होता है, तो माथे बुक्के का टीका लगाते हैं। मैंने एक दफा समझाया था कि वह टीका लगाने की चीज अगर गाँव में नहीं बनती तो गाँव की शुद्ध मिट्टी में स्वच्छ निर्मल पानी डालकर उसीका टीका किया जाय। गाँव की मिट्टी और गाँव का ही पानी होने से वह एक पवित्र वस्तु बन जायगी। गाँव की छोटी सी चीज भी बनती है, तो वह पवित्र है इसलिए पावित्र्य और सौभाग्य की जो कितनी भी चीजें हैं उनमें गाँव को प्रथम स्वावलंबी होना चाहिए। सौभाग्य और पावित्र्य जिन चीजों का आधार है वे बाहर से कभी न आनी चाहिए। बहनें आज चूड़ियाँ पहनती हैं जो बाहर की फैक्टरियों में बनती हैं। अगर कल वे फैक्टरियाँ बंद हो जायँ तो क्या बहनें बिना चूड़ी की रहेंगी? बहनें उन्हें शृंगार का लक्षण नहीं मानती, वह तो उनका सौभाग्यचिह्न है। जब अपना सौभाग्य और पावित्र्य दूसरों के हाथ में

होना चाहिए। घड़ी ही ले लीजिये। इन दिनों हरएक के हाथ में घड़ी रहती है। परन्तु उससे हर मनुष्य की नियमितता बढ़ी नहीं। घड़ियाँ खुद अनियमित चलती हैं। चाबी नहीं दी तो हो गयी बन्द। चलानेवाला अनियमित, तो घड़ी भी अनियमित। इसके बजाय गाँव में बाजार की घड़ी या कोई एक बड़ी घड़ी रखी जाय और एक घंटा रखा जाय। घंटे घंटे पर घंटा दिया जाय और सब काम नियमित रहे। हमने एक दफा प्रश्न किया था कि दिवाली कैसी मनायी जाय? आसमान में नक्षत्र तारे चमकते हैं। दिवाली है तो वे तारे नजदीक नीचे आये कहेंगे। गाँव की मिट्टी के बने दीप से दिवाली मनायी जाय तो वास्तविक शोभा होती है। इस तरह धीरे-धीरे ग्रामविद्या के क्रम में स्वावलम्बन की ओर जाना चाहिए।

मैसूर
१८-१ ५

कार्यकर्ता आध्यात्मिक चिन्तन करें : ५२ :

यह आन्दोलन जितना गहरा जा रहा है, उतना ही कार्यकर्ताओं का स्तर ऊपर उठना चाहिए। इसके लिए आध्यात्मिक चिन्तन की आवश्यकता है।

किन्हीं दो मनुष्यों में झगड़ा होता तो बापू की आदत थी कि वे उन दोनों को बुलाते, उन्हें अपने घर में लाकर बातचीत करते और उनका झगड़ा मिटाने का प्रयत्न करते थे। वे अपने प्रयत्न में कहीं सफल हुए, कहीं नहीं भी हुए। उनका यह तरीका व्यक्तिगत तरीका, मानसिक युग का तरीका है। विज्ञान के युग के लिए अब यह तरीका सम्भव नहीं हो सकता। विज्ञान के युग में आधिभौतिक पदार्थविज्ञान प्रधान होता है, मन गौण होता है। आत्मज्ञान भी मन को गौण समझता है। दोनों मन को गौण ही मानते हैं। अब यह भावना बननी है कि मन का उन्मन बनना चाहिए। विज्ञान भी यही कहता है। इस हालत में मन से ऊपर उठकर काम करने की योग्यता आनी चाहिए। किसीसे मनोमालिन्य हो गया तो क्या करना चाहिए? उपाय।

उपेक्षा को हम पहचानते नहीं हैं। मन की भूमिका से ऊपर उठेंगे, तभी यह काम होगा।

अरविन्द की अतिमानस भूमिका

श्री अरविन्द 'सुप्रामेंटल' की बात करते थे। उनके मत से ऊपर जाकर परमेश्वर-दर्शन और परमेश्वर स्पर्श के अमृतपान से परितृप्त होकर मन उन्मन होता है और उसके बाद नीचे आता है, इसीको वे अवतरण कहते हैं। मुक्ति हो गयी तो समाप्ति हो गयी, ऐसा वे नहीं मानते। वे तो कहते हैं कि मुक्ति के बाद मन उन्मन होने के बाद फिर कार्यक्रम शुरू होता है। यह भूमिका अतिमानस की भूमिका है। इसीको वे 'अवतार' कहते हैं।

अभी तक ऐसी बात होती थी कि मुक्त होने के बाद कोई वापस नीचे उतरना चाहे तो उतर सकता है और अगर न उतरना चाहे, तो मुक्ति में क्षेम रहे। परन्तु श्री अरविन्द का ख्याल है कि यह गौण चीज है। शंकरादि कहते हैं कि मुक्ति लेकर लौटना मत। ऐसे पहुँचते तो वापस लौटते ही हैं। कोई वैकुण्ठ में जाकर तो कोई ब्रह्मलोक में जाकर, तो कोई सगुण ईश्वर के पास जाकर पूर्णात्मा व्यापक हो गये ऐसा नहीं होता। एकदम कोई निर्गुण के पास पहुँचता नहीं है। ग्रह, सूर्य, चन्द्र आदि भिन्न भिन्न भूमिका में पहुँचते हैं। फिर उन उन भूमिकाओं से वापस लौटते हैं। जैसे बी ए हो गये तो अध्ययन समाप्त नहीं हुआ। अध्ययन में स्वावलम्बन हो गया अभ्यास परिपूर्ण नहीं हुआ। अभ्यास में स्वावलम्बन याने युनिवर्सिटी कॉलेज, ट्यूटर या प्रोफेसर की अब जरूरत नहीं रही। वैसे ही अरविन्द की दृष्टि से मुक्ति याने डिप्लोमा मिल गया कि अब विश्व की सेवा कर सकते हैं। जब तक मुक्ति नहीं मिली, तब तक विश्व की सेवा नहीं कर सकते।

आपको समाज-परिवर्तन करना है हृदय-परिवर्तन करना है तो उसके लिए आपमें क्या साधन है? यह साधन प्राप्त करने के लिए पहले मुक्ति पानी होगी। जो कार्यकर्ता परमेश्वर के पास जाकर सुप्रामेंटल तक पहुँच जायगा वह फिर इस स्थिति में आकर, इस दुनिया में अवतार लेकर

सारे विश्व में अपनी दुनियावी शक्तियों से विचार, क्षेमक्षेम और उसके जीवन में परिवर्तन आयेगा। कुछ समाज को हिला देना है, यह एक विशाल दर्शन है। परन्तु हम ऊपर जाकर फिर अनुदार हों, ऐसी आकांक्षा न रखें। इतना बड़ा काम न कर सकें तो भी हमें मानसिक भूमिका पर से तो ऊपर उठना ही चाहिए। नहीं तो समाज में से झगड़े नहीं मिटेंगे और हर समय होनेवाले घर्षण को कम करने के लिए सेना बनाये रखना पड़ेगा। यह ढंग ही ऐसा होना चाहिए कि उसमें घर्षण न हो, सेना की जरूरत न हो। इस शरीर में दीप नहीं है, तो भी इन्द्रियाँ एक-दूसरे से नहीं टकरातीं। उनकी योजना ही ऐसी है कि घर्षण न हो। शरीर में प्रेम-शक्ति काम करती है। पैर में तकलीफ होती है, तो हाथ तुरन्त ही सेवा करने लगता है। यह जो सारे शरीर के अन्तर्गत प्रेम शक्ति है, उसके कारण शरीर में घर्षण नहीं होता, उससे काम किया जा सकता है। वैसी ही समाज की भी रचना हो जाय, तो फिर सेना की किसी की जरूरत नहीं रहेगी। यह मन से ऊपर उठेंगे तभी होगा और इसके लिए आध्यात्मिक गहराई में जाने की जरूरत है।

महाकाव्य का युग

हमने मैसूर के महाकवि श्री पुट्टप्पा से कहा : 'आपने तो नूतन नयी किताब लिखी है। पैराडाइज लास्ट' से भी पुरानी है। नूतन बड़ा काव्य है। उसमें मामूली राक्षस नहीं है, सारे के सारे पात्र प्रतीकात्मक हैं। रावण का तेज रामचन्द्र के तेज में समाविष्ट हुआ, इतना पर्याप्त नहीं है। उन्होंने उसकी प्रकृति का वर्णन किया है। मैंने उनसे विनोद में पूछा कि यह जमाना तो फिर गद्य काव्य का जमाना है, इस जमाने में आपने महाकाव्य कैसे लिखा? उन्होंने बताया कि हिन्दुस्तान में आज महाकाव्य का जमाना है। इन ७-८ सालों में हिन्दुस्तान में इतने महापुरुष हो गये, जितने दुनिया में और कहीं नहीं हुए। अभी महाकाव्य का जमाना है। विज्ञान के युग में काव्य नहीं लिखा जायगा, ऐसा ख्याल गलत है। विज्ञान के युग में सृष्टि का गूढ़ अर्थ प्रकट होगा। पुराने लोगों के सामने सृष्टि का गूढ़ कम प्रकट था। इस सृष्टि का ज्ञान

जितना प्रकट हुआ वह विज्ञान है और जितना गूढ़ रहा, वह काव्य। पुराने जमाने में सृष्टि में कितनी गूढ़ता है यह जानते ही नहीं थे, इसलिए काव्य के लिए गुंजाइश कम थी। जितनी गूढ़ता ज्यादा प्रकट होगी उतनी ही काव्य के लिए गुंजाइश ज्यादा होगी। विज्ञान के जमाने में सृष्टि की गूढ़ता अधिक प्रकट होती है इसलिए काव्य के लिए अधिक गुंजाइश है।

कृत्रिम चावल के विज्ञान में काव्य

हम आज शोध-संस्थान में गये। सुना तो था कि मूँगफली और टेपियोका से चावल बनाते हैं परन्तु जब वह देखा तो मन पर कुछ विलक्षण असर हुआ। रात को सोकर सुबह जागे तो सारा कारखाना हमारे सामने खड़ा हो गया। कहते हैं कि उस चावल में पोषक तत्त्व ज्यादा है। उसमें खूबी यह है कि मूँगफली और टेपियोका दोनों जब अलग-अलग होते हैं तो दोनों में कुछ कमी होती है, परंतु जब इकट्ठे किये जाते हैं तो वह कमी दूर हो जाती है और वह पोषक हो जाता है। कहीं अकाल पड़ा, तो तुरन्त यह चीज काम में आ सकती है। मुझे तो यह सब देखकर विज्ञान होने पर भी उसमें काव्य ही मालूम हुआ। सृष्टि की यह सारी गूढ़ता देखकर मेरी कल्पना पर असर हुआ। अगर मेरी बुद्धि पर प्रभाव पड़ता तब तो वह विज्ञान हो जाता परन्तु मेरी कल्पना पर प्रभाव पड़ा इसलिए वह काव्य हो गया। पुराने जमाने में सृष्टि कम प्रकट थी और सृष्टि का गूढ़ भी कम प्रकट था। इसलिए विज्ञान भी कम था और काव्य भी कम था। इस जमाने में सृष्टि का प्रकटपन भी ज्यादा है और गूढ़ता का प्रकटपन भी ज्यादा है। सृष्टि और उसकी गूढ़ता दोनों अधिक प्रकट हुए हैं। इसलिए जैसे विज्ञान की संभावना अधिक है, वैसे काव्य की भी सम्भावना अधिक है। पुण्याजी ने हमसे यही कहा कि इस महाकाव्य के युग में अनेक महापुरुषों ने अनेक आन्दोलन अनेक प्रक्रियाएँ चलायी हैं, उनकी प्रेरणा हमको मिल रही है।

कार्यकर्ता अध्ययन करें

शिकायत करते हैं कि हमें अध्ययन के लिए कम समय मिलता है इसलिए

मैंने आज का प्रयोग करके दिखाया। तीन घंटों की यात्रा हो, तो चार घंटों की यात्रा समझ लेनी चाहिए और एक घंटा बीच में ही अध्ययन होना चाहिए। उड़ीसा में हमने ढाई महीने में जगन्नाथदासजी की भागवत पूरी की। हम लोगों के साथ रास्ते में कहीं एकान्त जगह देखकर बैठ गये। कुछ ध्यान कर लिया और फिर अध्ययन शुरू। इस तरह किया करोगे, तो जो चमड़ी मोटी होनी चाहिए, वह बनी रहेगी। नहीं तो फिर आरोहण के बजाय अवरोहण हो जायगा।

पोन्नपुरम् (कर्णाटक) —पद-यात्रा के बीच कार्यकर्ताओं में
१०-९-५७

सद्धर्म का प्रचार करने निकलिये

। ४२ ।

आज का दिन पवित्र है और स्थान भी पवित्र है। आज गांधीजी का जन्म-दिन है और यह रामानुज का स्थान है। दिन और स्थान दोनों पवित्र हैं। रामानुज धर्म-सेवक थे। वर्षों तक वे सारे हिन्दुस्तान में घूमे। उन्होंने लोगों में यह ज्ञान फैलाया कि भक्ति की महिमा जाति से बढ़कर है। उन दिनों जातीय संकुचितता और संकीर्णता बहुत ज्यादा थी। इसलिए रामानुज समाज के सामने भक्तिरूपी वस्तु रखकर जाति-भेद को समाप्त करना चाहते थे। इसके लिए वे गाँव-गाँव गये और गुरु की आज्ञा भंग कर भी उन्होंने एक गुप्त मंत्र सबके सामने प्रकट कर दिया। इस प्रकार की प्रत्यक्ष गुरु की आज्ञा की उपेक्षा कर उसके लिए आदर रखते हुए भी जन-समाज में ज्ञान फैलानेवाले दो-चार मिसालें भी दुनिया में नहीं मिलतीं। रामानुज को ऐसा करने के कारण समाज की तरफ से काफी कष्ट सहन करना पड़ा और तमिलनाड छोड़कर यहाँ आना पड़ा। वे यहाँ [illegible] साल तक रहे। बाद में जब तमिलनाड अनुकूल हुआ तो वे वापस वहाँ लौटे।

मुहम्मद पैगम्बर के जीवन में इसी प्रकार की बात हुई थी। उन्हें मक्का

छोड़ना पड़ा और अपने लोगों को लेकर मदीना जाना पड़ा। अरबी मे उसे हिजरत कहते हैं। मेरा ख़याल है कि रामानुज भी यहाँ अकेले नहीं आये होंगे, पाँच पचीस शिष्यों को लेकर ही आये होंगे। इसीलिए आप देखते हैं कि यद्यपि यह कर्नाटक मायावाद्य प्रान्त है, तथापि इस स्थान पर आज भी कुछ तमिल भाषा चलती है। रामानुज के मन में तमिल और कर्नाटक ऐसा भेद नहीं था।

उन्होंने जो लिखा, वह अधिकांश संस्कृत में लिखा। रामानुज को लोक-कल्याण की तीव्र वासना थी। नहीं तो उनके परम गुरु और गुरु के गुरु सब तमिल में लिखते थे। तमिलनाड में भक्ति का जो स्रोत जोरों से बहा, उसका आरम्भ रामानुज से नहीं बल्कि नम्मल्वार से हुआ। नम्मल्वार का जो असर तमिलनाड पर है, वह अद्भुत ही है। नम्मल्वार को हिन्दुस्तान नहीं जानता परन्तु रामानुज को सारा भारत जानता है। रामानुज अपने को नम्मल्वार की तुलना में बहुत ही छोटा समझते थे। यह जो नम्रता है, वह नम्मल्वार में भी थी। उन्होंने लिख रखा है कि मैं दास का दास हूँ। ऐसी नम्रता तो हर सत्पुरुष मे होती ही है। फिर भी रामानुज का सारा आधार नम्मल्वार थे। रामानुज की विशेषता यह थी कि उन्होंने दूर-दूर जाकर साधारण जनता में ज्ञान का प्रचार किया।

रामानुज-सम्प्रदाय की वर्तमान परम्परा

रामानुज की परंपरा मे जो मठवाले हैं, उनको क्या कोई तकलीफ उठानी पड़ती है? यहाँ देवस्थान बना है, आमदनी का जरिया है, योगक्षेम चल रहा है, नित्य पाठ चल रहा है। रामानुज को जो तकलीफ थी क्या उसका एक अंश भी इनको है? वह व्यक्ति देशभर घूमता था भिक्षा माँगकर खाता था। उसके अन्दर भक्ति ज्ञान और करुणा थी। करुणा का आविर्भाव बुद्ध के बाद शायद रामानुज में ही विशेष हुआ। ज्ञान और भक्ति का प्रकर्ष तो दूसरे पुरुषों में भी दीखता है परन्तु भक्ति और ज्ञान के साथ करुणा का प्रकर्ष रामानुज में दीखता है।

प्राचीन भक्त समाज-सुधारक भी

उस जमाने में जो भक्त थे, वे बड़े समाज-सुधारक भी थे। समाज में जो दोष था, उसके निवारण का काम उनके जीवन का मिशन था। इसे 'मिशन' शब्द इस्तेमाल करना पड़ा, क्योंकि इन दिनों ऐसा कार्य मिशनरी ही करते हैं। वे दुनिया के कोने-कोने में जाकर रोगियों की सेवा करते हैं, अस्पताल, कालेज खोलते हैं, जगह-जगह के गाँवों में जाकर बाइबिल सुनाते हैं। जहाँ दूसरे लोग जाते नहीं, वहाँ भी वे जाते हैं और ईसामसीह के नाम से आमरण काम करते हैं। करुणा से प्रेरित होकर जो काम किया, उसके साथ आमरण चिपके रहने का नाम है मिशन। उसके लिए अपनी भाषा में शब्द भी नहीं मिलता है। (एक भाई ने मिशन के लिए 'समूह सेवा' शब्द सुझाया। 'सेवा-समूह' शब्द अच्छा है, उसे हम उठा लेते हैं।) उस जमाने में जाति-भेद तीव्र था। रामानुज ने भक्ति का आलंबन लेकर जाति-भेद पर प्रहार करने का काम उठाया। इस जमाने में कुछ लोग भूमि के मालिक बन गये हैं और बाकी भूमिहीन बने हैं, जो भूमि की सेवा नहीं कर सकते हैं। इसलिए अब यह समस्या करुणा की समस्या हो गयी है। रामानुज ने करुणायुक्त होकर अपना मन बिलकुल नीची जातियों को अपनाने की कोशिश की थी, जिसका परिणाम आज हमने यहाँ मंदिर में देखा। यहाँ भेदभाव नहीं था। उत्तर के दूसरे स्थानों में भेदभाव है, परन्तु यहाँ नहीं है। हम समझते हैं कि हमने जो काम उठाया है, वह रामानुज सम्प्रदाय में ठीक बैठेगा।

भूदान करुणा का काम है। भूदान के बजाय अगर हम जमीन छीनने की बात करते, तो वह कानून का कार्य हो जाता। लेकिन जहाँ करुणा से प्रेरित होकर मनुष्य भाई को जमीन देता है, वहाँ वह धर्म-कार्य हो जाता है। भूदान-यज्ञ धर्मकार्य है। इस तरह हम नयी तपस्या करेंगे, तब धर्म जागृत होगा। प्राचीन ऋषियों ने तपस्या की, इसलिए धर्म जागृत हुआ। आज हम नयी तपस्या नहीं करेंगे, तो धर्म क्षीण होगा। यहाँ पर हमें '[illegible]' शब्द दिखाया गया। [illegible] हैं, अब कोई परिश्रम

करता ही नहीं तो स्नेह कहाँ से आये और शील कैसे बने? क्या 'कल्याणी तीर्थ' बनना बंद हो गया है।

रामानुज के अनुयायी ग्रामदान का कार्य उठायें

आपको इस काम को उठा लेना चाहिए। मैं घूमता रहूँ और रामानुज संप्रदाय के लोग बैठे रहें, क्या यह ठीक है? आपके लिए कुछ आधार है भगवान् की पूजा के लिए कुछ आमदनी है यह ठीक है। उस आधार से आप अध्ययन करते हैं। अब आप बाहर निकलें और गाँव-गाँव जाकर ग्रामदान का विचार समझायें, साथ साथ रामानुज का भाष्य भी सुनायें। आज ही हमने भूदान-कार्यकर्ताओं को रामानुज का भाष्य सुनाया। 'अद्वेष्टा सर्वभूतानाम्' का भाष्य करते हुए रामानुज ने लिखा है कि भक्त से कोई द्वेष करता है, तो भक्त समझता है कि 'मदपराधानुगुणं ईश्वरप्रेरितान्येव एतानि भूतानि द्विषन्ति अपकुर्वन्ति च'। हमने कार्यकर्ताओं से कहा कि भाई तुमसे कोई द्वेष करे तो तुम्हें द्वेष नहीं करना चाहिए। तुम्हें तो यह समझना चाहिए कि हमारे ही किसी अपराध के कारण वह द्वेष करता है और उसमें ईश्वर की भी प्रेरणा है। इसलिए क्षमाशील रहना चाहिए। हम जब रामानुज भाष्य सिखाते हैं तो आप क्यों नहीं निकलते यह भाष्य सुनाने? ग्रामदान का कार्य रामानुज का कार्य है और आप हमारी मदद में आइये। हमने आपके जैसा 'तिरुनामम्' (चंदन का टीका) नहीं लगाया। इसलिए हम नम्रता के साथ बोलते हैं। परन्तु आप अधिकार के साथ बोल सकते हैं। आप समता और करुणा का संदेश लेकर निकल पड़ेंगे, तो हिंदुस्तान में रामानुज संप्रदाय फिर से जोर पकड़ेगा और सारे देश पर आपका अधिकार चलेगा। रामानुज-सम्प्रदाय के लोग केवल कर्नाटक, तमिलनाड में ही नहीं हैं उत्तर हिन्दुस्तान में भी हैं। पहले के जमाने में रामानुज संप्रदाय के लोग देशभर में फैल गये वैसे आप भी फैलें। आपमें से कुछ लोग यहाँ अध्ययन अध्यापन करें और कुछ लोग विचार प्रचार के लिए निकलें।

करुणा के बिना वेद-प्रचार असंभव

हम ४ साल से वेद का अध्ययन कर रहे हैं। हम समझते हैं कि वेद प्रचार

के पास जायेंगे तो आपको लोगों का दुःख मालूम होगा। आजकल लोग वोट माँगने जाते हैं, परन्तु आप जब कहेंगे कि हम वोट मांगने नहीं आये हैं, गरीबों के लिए जमीन माँगने आये हैं तो लोगों को विश्वास हो जायगा और उनमें करुणा जागेगी। यजुर्वेद में एक रुद्र सूक्त है। सायणाचार्य ने उसका भाष्य किया था। उसमें एक सुन्दर वचन है—'कुलुञ्चमानाः अस्मेव समविष्टे'। जो संहार करता है, वह रुद्र है। जिसे भूख लगती है वह रुद्र बनता है। इसलिए रुद्र की उपासना करने का मतलब है, भूखे को खिलाना। यही सायणभाष्य है।

मेलकोटे (मैसूर)

२ १०-५७

बेदखलियाँ रोकने का उपाय : ४४ :

इधर कुछ बेदखलियाँ चल रही हैं। ऐसी ही शिकायत हमने जगह-जगह सुनी, परन्तु हमें उसकी बहुत चिन्ता नहीं है। अभी मैसूर में हिंदुस्तान के बहुत बड़े नेताओं ने देश को आदेश दिया कि गाँव-गाँव में ग्रामदान होना चाहिए। उस आदेश के सामने बेदखलियाँ कब तक चलेंगी? अब हवा बदलनेवाली है। गाँव के लोग इकट्ठा होनेवाले हैं और सब मिलकर काम करनेवाले हैं। ग्रामदान के बाद छोटे-बड़े जमीनवाले सब बराबरी में आ जायेंगे। समान होने पर छोटे लोग खुद ही बड़ों को थोड़ी अधिक जमीन देते हैं। कोरापुट में इसी तरह ग्रामदान के बाद गाँववालों ने बड़ों को प्रेम से थोड़ी अधिक जमीन दी। हिंदुस्तान के लोगों में मत्सर नहीं है। हम दुःखी हैं और यदि दूसरे लोग हमसे ज्यादा सुखी हैं तो हम उनसे बैर नहीं करते। कुछ लोग ज्यादा सुखी हों तो कोई हर्ज नहीं। लोगों की इतनी ही माँग है कि दुःखी लोगों का दुःख मिटे। सब बिलकुल बराबर हो जायँ, ऐसी माँग लोग नहीं करते।

बड़ों का भय

बड़े लोगों को यह डर कौन दिखाता है? छोटे लोग शब्दों में नहीं [illegible]

से समझायेंगे। छोटे लोग अगर अपनी छोटी मालकियत छोड़ देंगे, तो बड़े लोग समझ जायेंगे कि मालकियत जानेवाली है। फिर उनके हृदय में प्रेम प्रकट होगा। आज वे जो बेइमानियाँ करते हैं, वह दुष्टता से नहीं, बल्कि डर के कारण करते हैं। उन्हें लगता है कि न मालूम सरकार क्या कानून बनायेगी और हमारी क्या हालत होगी? इसलिए हमें उन्हें समझाना चाहिए कि आपके लिए डरने का कोई कारण नहीं है। आप ग्राम परिवार में आ जायेंगे, तो हम अपने माता-पिता की जितनी इज्जत करते हैं, उतनी आपकी करेंगे। इस तरह उन्हें निर्भय बनाना चाहिए। जब उनका मन बदल जायगा, तब वे हमारे साथ आयेंगे।

भारतीय अभिरुचि

आज एक भाई ने हमें बड़ी सुन्दर बात बतायी। वे बोले कि हिंदुस्तान के लोगों को सुख भोगने में रुचि नहीं है, दुःख बाँटने में रुचि है। उनको तमाम सुख चाहिए, ऐसी वासना हिंदुस्तान के लोगों की नहीं है। वे इतना ही चाहते हैं कि कोई दुःखी न रहे। यह बहुत बड़ी बात है। इसमें हिंदुस्तान की सभ्यता है, संस्कृति है, धर्म-विचार है। हम यह नहीं चाहते हैं कि सुख बढ़ाते चले जायँ। यह तो यूरोप और अमेरिका के लोग करते हैं। हम लोग इतना ही चाहते हैं कि दुःख मिटे। यदि दुःख नहीं रहेगा, अनाज की चिन्ता नहीं रहेगी, तो हम प्रेम से भगवान् का नाम लेते रहेंगे। यह अपने देश का हृदय है। यह बात दूसरे राष्ट्रों को सीखनी होगी। सुख को बढ़ाते चलने से सुख बढ़ता नहीं है, उसे मर्यादा में रखने से ही वह बढ़ता है। यह बात सारी दुनिया को भारत से सीखनी होगी। दुनिया यह बात तब सीखेगी, जब हम हिंदुस्तान में किसीको दुःखी नहीं रहने देंगे। फिर भारत की सभ्यता में जो शांति और प्रेम है, उसका आस्वादन दुनिया करेगी।

[illegible]

प्रेम ही किया जाय। हम एक होंगे तो वे देखेंगे कि ये एक भी हुए और नेक भी हुए। इनकी धर्म-भावना बड़ी है। यह देखकर उनके चित्त पर असर हो जायगा और फिर वे भी इसमें शामिल हो जायेंगे। बेईमानियाँ बंद करने का यही रास्ता है। यदि आप अलग-अलग रहेंगे, तो तिनके के समान आपकी ताकत नहीं बनेगी। यदि आप एक हो जायेंगे, तो आपकी मजबूत रस्सी बनेगी। फिर जो बेईमानी करनेवाले हैं, वे भी उस प्रेम-रज्जु से बँध जायेंगे।

कुरा (मसूर)
७-१०-२०

व्यापारी समाज-सेवा का कार्य करें : ४५ :

अपने देश में प्राइवेट सेक्टर बनाम पब्लिक सेक्टर का एक बड़ा झगड़ा चल रहा है और चूँकि सरकार समाजवादी ढाँचा (सोशलिस्ट पैटर्न) चाहती है इसलिए धीरे-धीरे वह प्राइवेट सेक्टर का महत्त्व कम करना चाहती है और पब्लिक सेक्टर का महत्त्व बढ़ाना चाहती है। सभी इस तरह कहा भी करते हैं। यह सब सुनकर व्यापारी घबरा जाते हैं। तब फिर सरकार कहती है कि इसमें घबराने की कोई बात नहीं है। फिलहाल दोनों सेक्टर साथ-साथ चलेंगे। प्राइवेट सेक्टर को उसमें अच्छा स्थान रहेगा, किन्तु बाद में जैसे-जैसे पब्लिक सेक्टर की शक्ति बढ़ेगी वैसे-वैसे प्राइवेट सेक्टर कम होता चला जायगा।

प्राइवेट सेक्टर बनाम पब्लिक सेक्टर

अभी प्राइवेट सेक्टर ८ % है तो पब्लिक सेक्टर २ %। जब देश प्रगति करेगा तब प्राइवेट सेक्टर ७ % हो जायगा और पब्लिक सेक्टर ३ %। इस तरह जैसे-जैसे एक बढ़ता जायगा, वैसे-वैसे दूसरा घटता जायगा। यह आज की विचार पद्धति है। लेकिन हम चाहते हैं कि पब्लिक सेक्टर १ % होना चाहिए और प्राइवेट सेक्टर भी १ % होना चाहिए। सर्वोदय में

दोनों एकरूप हैं। मैं अक्सर मिसाल देता हूँ कि हाथ से जो काम होता है वह अँगुलियों से ही होता है और जो अँगुलियों से होता है, वह हाथ से ही होता है। हाथ और अँगुलियों के बीच घटने-बढ़नेवाला कोई प्रतिद्वंद्व नहीं है। माइक्रो लेवल अँगुलियाँ हैं और पब्लिक लेवल हाथ। इन दोनों के बीच विरोध नहीं होना चाहिए।

आध्यात्मिक बुनियाद

व्यापार के बिना किसीका काम नहीं चलता। लेकिन हमारे इस देश में व्यापार को व्यावहारिक ही नहीं, आध्यात्मिक भी माना गया है। 'कृषिगोरक्ष-वाणिज्यम्' वैश्य का धर्म बताया है। अगर वह व्यापार नहीं करता तो स्वधर्म से च्युत होता है। प्रामाणिकता और निष्काम बुद्धि से अपना धर्म करनेवाला व्यापारी मोक्ष का वैसा ही अधिकारी है, जैसा कि वैराग्यवान् ब्राह्मण। व्यापारी अच्छा काम करेगा तो लोगों का उस पर भरोसा होगा और वह अच्छा पैसा कमायेगा, यह तो दुनिया जानती है, लेकिन अच्छा व्यापार करने से वह मोक्ष भी पायेगा, यह सिर्फ हिन्दू धर्म में ही है। इस तरह हमारे यहाँ हिन्दुस्तान में व्यापार का एक स्वतन्त्र स्थान है। इस देश की और दूसरे देशों की सामाजिक और धार्मिक विचारधारा में यही अन्तर है। इसीलिए यहाँ भूदान-आन्दोलन चलता है। दूसरे देशों में ऐसा काम [illegible] स्वर्गीय माना जाता, अधम नहीं, आदर्श माना जाता। हिन्दुस्तान की जनता के लिए यह काम आदर्शमूलक भी है और व्यवहारमूलक भी। यहाँ के लोग इसे व्यावहारिक धर्म समझते हैं और यह काम भी लोगों के हृदयों को खींचता है। ऐसा क्यों है? इसलिए कि भारत की सभ्यता में व्यापार, कृषि आदि कार्य सिर्फ व्यावहारिक ही नहीं, धार्मिक कार्य भी माने गये हैं। जो उत्तम प्रामाणिकता और निष्काम बुद्धि से यह कार्य करता है, उसे मोक्ष प्राप्त होता है। इसी बुनियादी श्रद्धा पर [illegible] हम आगे बढ़ रहे हैं। हमारे कार्य के पीछे ठोस आध्यात्मिक बुनियाद है।

अधिकारप्रदत्त लोकतंत्र

आज दुनियाभर में दो महत्त्व के कार्य हैं : समाज सेवा का कार्य और धार्मिक कार्य। ये दोनों काम हमने प्रतिनिधियों को सौंप दिये हैं। कुछ प्रतिनिधियों को हम सरकार में भेजते हैं। उनका काम होता है—सेवा करना उसके लिए चाहे वे कर लगायें या कोई दूसरे उपाय करें। धार्मिक कार्य हमने मंदिर, मस्जिद और धर्मवालों को सौंप दिये हैं। हमारे हाथ में अब खाने-पीने के अलावा कुछ नहीं बचा है। खाना पीना ठीक तरह से न मिले तो हम शिकायत करते हैं कि हमने जिन प्रतिनिधियों को चुना है, वे लायक नहीं हैं। हम सुखी होते हैं, तो उनकी स्तुति करते हैं और दुःखी होते हैं तो निंदा करते हैं। इस तरह हमारे हाथ में केवल स्तुति या निंदा ही रह जाती है। कोई स्वतंत्र पुरुषार्थ हम नहीं करते। आजादी के लिए यह बड़ी खतरनाक बात है। इससे हमारा विकास नहीं होता। यहाँ बीमारी फैली है और उसकी चिंता सरकार करेगी, तो आप क्या करेंगे? आप चाय पियेंगे। फिर सरकार चाहे तो चाय पर कर लगाये और उस पैसे से अस्पताल खोले। आपके हृदय को चाय का ही स्पर्श होता है भूत दया का नहीं।

आजकल होता यह है कि आप ज्यादा सिगरेटें पियें, ज्यादा रेल-सफर करें, ताकि सरकार को पैसा मिल सके और कुछ सेवा-कार्य हो सके। इस प्रकार सारा सेवा काम अप्रत्यक्ष रूप से चलता है। भूत दया का काम सरकार करे, साहित्य को उत्तेजन सरकार दे, कानून सरकार बनाये, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, व्यावहारिक शिक्षण विषयक साहित्य के काम भी सरकार करे। आपके जरिये सरकार को ज्यादा कर मिले और 'हाँ जी' करते हुए आप उन्हें उत्तेजना दें इतना ही काम होता है। इससे देश बनेगा नहीं।

समाज-सेवा का काम उठायें

हम चाहते हैं कि समाज सेवा का मुख्य काम समाज उठा ले और गौण कार्य सरकार। जब सरकार और जनता दोनों इकट्ठी होती हैं, तब ताकत पैदा होती है। हमने कई बार कहा है कि जनता एक है और सरकार शून्य। एक और शून्य

न कोई से बड़ी ताकत पैदा होती है। दोनों को अलग करने से सरकार की ताकत मुख्य है परन्तु जनता की कुछ ताकत है। सरकार मुख्य है, फिर भी उसका एक स्थान है, उपयोग है ताकत है। आप ही ने सरकार को ताकत दी है। उसके पीछे आपकी सम्मति है। इसलिए मुख्य ताकत आपकी है। कभी कभी ऐसा होता है कि कोई व्यापारी अपना कारोबार चलाने के लिए मुनीम रखता है और खुद मौज उड़ाता, सिनेमा में ही फँस जाता है तो आखिर वह मुनीम ही मालिक बन जाता है। उसी तरह आज हम लोग, जिन्होंने अधिकार प्रदान किया है कुछ नहीं करते और नौकर ही मालिक बन जाते हैं। इस कुचक्र से अगर बाहर निकलना है, तो जनता का ज्यादा काम जनता के हाथ में आना चाहिए। सरकार के हाथ में संयोजन का कार्य हो। परराष्ट्र विभाग तथा रक्षा आदि का काम सरकार सँभाले, बाकी काम जनता स्वतन्त्र रीति से स्वयं करे। ऐसा करने से ही वास्तविक स्वराज्य होगा तथा देश और दुनिया का हिंसा से छुटकारा होगा।

अंग्रेजों का राज्य क्यों फैला ?

जनता अपने हाथ में कारोबार ले यानी जिन लोगों में प्रबन्ध करने की शक्ति है ऐसे यह जिम्मा लें। पर जनता में यह ताकत नहीं है। सामान्य जनता अपना अपना काम करती है किन्तु पूरे देश की जिम्मेवारी थोड़े लोगों पर ही आती है। इनमें भी सबसे अधिक जिम्मेवारी व्यापारियों पर आती है। अगर भारत के व्यापारियों का देश की जनता के साथ प्रेम सम्बन्ध होता, दोनों का एक दूसरे के प्रति प्रेम और विश्वास होता, दोनों में अपने-अपने धर्म का पालन किया जाता तो अंग्रेज यहाँ की भूमि में पैर नहीं रख सकते थे। अंग्रेज व्यापारी के रूप में ही आये थे। सात हजार मील दूर से वे यहाँ आये और यहाँ के व्यापारियों से मिलकर अपना प्रभाव जमा लिया। यह इसलिए सम्भव हो सका कि यहाँ की जनता और व्यापारियों के सम्बन्ध मधुर और प्रेमपूर्ण नहीं थे। सामान्य जनता उन्हें प्रेमभाव से नहीं देखती। वह तो त्रस्त ही थी। व्यापारी उसे लूटते थे। वे लोग स्वार्थ-बुद्धि थे। यहाँ के व्यापारी नहीं जानते थे कि

देश की पैदावार का इंतजाम कैसे किया जाय, उद्योग-धंधों का विकास कैसे किया जाय। व्यापारियों की सुयोग्य योजना के अभाव में हिन्दुस्तान अंग्रेजों के द्वारा जीता गया। अगर व्यापारियों के पास सुयोग्य योजना होती और वे अपने धर्म का पालन करते होते, तो अंग्रेज लोग भारत को जीत नहीं सकते थे।

अंग्रेजों ने अपनी बुद्धि से काम किया और यहां लोगों की सद्भावना का लाभ उठाया। यहीं के लोगों की सेना बनायी एक-दूसरे को लड़ाया और फिर राज्य पर कब्जा कर लिया। अगर यहाँ के व्यापारी अपनी जनता की जिम्मेदारी महसूस करते और अपने को देश के लिए जिम्मेदार समझते, तो यह न होता।

सरकार और व्यापारियों में विरोध अनुचित

आज सरकार और व्यापारी एक-दूसरे का विरोध करते हैं। व्यापारी सरकारी कानूनों के खिलाफ काम करते हैं और सरकार कानून बनाने के पहले व्यापारियों की सलाह नहीं लेती। सरकार समझती है कि व्यापारी स्वार्थी होते हैं। हिन्दुस्तान के व्यापारियों का ऐसा समझना गलत है। छोटे-छोटे व्यापारियों की बात छोड़ दें। वे तो बेचारे दुःखी ही हैं। लेकिन जिनकी कुछ हैसियत है वे केवल स्वार्थी ही नहीं होते, उनमें सज्जनता भी होती है। मुश्किल यही है कि उनकी और सरकार की बुद्धि एक नहीं है। अलग-अलग दिशाओं में जाती है। इससे देश की ताकत नहीं बनती।

आजकल लोग सोचते हैं कि यदि सारा कारोबार सरकार के हाथों में जाय राष्ट्रीयकरण हो तो ठीक। किंतु रेलों का राष्ट्रीयकरण हो जाने से क्या फर्क हुआ? आखिर तो देश का चरित्र क्या है यही मुख्य बात है। व्यापारी और सरकारी कर्मचारी दोनों एक ही देश के हैं। आज सब सरकार के हाथ में काम लगा है। अब उसमें व्यापार को भी जोड़ देंगे तो सोचने की बात है कि कामकाज कैसे चलेगा?

कल्याणकारी राज्य की भ्रमात्मक कल्पना

सरकार का काम माल लेना है। यह सिपाहीराज्य बना है। मार्क्स ने केवल

भी आपको उठाना चाहिए। आप जो दान देंगे उस पैसे का उपयोग इन तीन कामों में तुरन्त करना चाहिए। दानपत्र के कागज पड़े नहीं रहने चाहिए।

देश में आंतरिक शांति

चुनाव के कारण जातिभेद को नया जीवन मिला है। अब बड़े बड़े नेता भी कबूल करते हैं कि चुनाव के कारण जातिभेद बढ़ रहा है। चुनाव के कारण गाँव गाँव में आग लग जाती है। अगर भारत के जैसी जगह जगह शांति रखने के लिए पुलिस और सेना भेजने की जरूरत पड़ेगी तो कितना खतरा है। उसके लिए आप कितनी सेना रखेंगे? इस तरह यदि जगह जगह झगड़े चलेंगे, तो देश पर पाकिस्तान का हमला भी हो सकता है। इसलिए देश में अंदरूनी शांति बहुत आवश्यक है। हम चाहते हैं कि बैंगलोर में समाज सेवा और शांति-सेना का काम व्यापारियों को उठाना चाहिए। आप घर घर जाकर लोगों के दुःखों को जानेंगे और फिर आपस में चर्चा करके दुःख निवारण की कोशिश करेंगे, तो समाज में मधुरता मिठास पैदा होगी।

व्यापारी ही सेना की माँग भी करते हैं

सेना की माँग ज्यादा से ज्यादा व्यापारी ही करते हैं। कहीं कुछ भी झगड़ा हो जाय तो व्यापारियों को खतरा मालूम होता है और अपने बचाव के लिए वे सेना की माँग करते हैं। अभी स्वेज नहर का झगड़ा चल रहा था जिसमें युद्ध तो शुरू नहीं हुआ था मामूली लड़ाई ही चल रही थी, परन्तु कुछ आयात निर्यात पर उसका असर हुआ था। उस समय भारत की सारी पंचवर्षीय योजना डाँवाडोल थी। चूँकि उसका सारा दारोमदार आयात निर्यात पर ही है इसलिए लड़ाई की सूरत में सारी योजना ताश के पत्तों के घर जैसी गिर जायगी। यह तो तब बचेगी जब आप और हम जगह जगह प्रबंध करें नहीं तो कल्याणकारी राज्य के द्वारा ही सारा काम चलेगा जगह-जगह पुलिस और सेना के जरिये काम चलेगा तो देश के लिए बड़ा खतरा है। आज देश में अनेक झगड़े हैं। जातिभेद भाषाभेद धर्मभेद छुआछूत शरणार्थियों की समस्या आदि सब तरह तरह के दुःख हैं। हिन्दुस्तान में समस्याओं की

घोर कमी नहीं है। अभी डाक विभागवालों की हड़ताल की बात चली थी। वही भयानक बात थी। आखिर वह किसी-न-किसी तरह टल गयी। लेकिन यदि वह होती, तो कुल कारोबार ठप हो जाता। सारा व्यापार-व्यवहार खतरे में था। आज देश में हर जगह असंतोष है। लोगों की तरफ से पत्थर फेंके जाते हैं और सरकार की तरफ से गोलियाँ चलायी जाती हैं। इस तरह एक ओर से पत्थरबाजी हो और दूसरी ओर से लोहखंडों का प्रयोग हो तो देश की ताकत खत्म हो जायगी। इसे कल्याणकारी राज्य का नाम दिया जायगा, परन्तु कुल देश खतरे में रहेगा। इसलिए यदि आप सम्पत्तिदान देंगे और उससे आपके पैसे का उपयोग होगा तो यह बात तो छोटी-सी है परन्तु शान्ति-सेना के काम में यदि उसका उपयोग होगा, तो यह बड़ी बात होगी। इस काम में हर घर से हिस्सा मिलना चाहिए। आज आप रखवाले रखते हैं और पुलिस के लिए खर्च करते हैं। जब देश के लिए खतरा होता है तो व्यापारी घबराया जाते हैं और पुलिस की माँग करते हैं। इस तरह व्यापारियों को बहुत खतरा होता है। दुनिया में कहीं भी कोई घटना घटी तो बम्बई के शेयर बाजार पर उसका असर होता है। जैसे थर्मामीटर में पारा थोड़े से स्पर्श से चढ़ता या उतरता है, वैसे ही शेयर बाजार भी एक ऐसा 'सैंसिटिव' (स्पर्शसहिष्णु) यंत्र है कि दुनिया के किसी भी कोने में अशान्ति हुई तो यहाँ एकदम अंतर आ जाता है। जब आपके बाजार भाव भी अमेरिका से निश्चित होकर आते हैं, तो व्यापार भी आपके हाथ में कहाँ है! कपास के भाव एक तो यहाँ की बारिश पर निर्भर होते हैं और दूसरे अमेरिका पर। याने इधर से आसमानी और उधर से सुल्तानी! इसलिए अशान्ति को दूर करने में सेना की पहली माँग व्यापारियों की तरफ से होती है। यह ठीक भी है क्योंकि वे पैसा रखते हैं।

हिंदुस्तान के व्यापारी ज्यादा-से-ज्यादा असंतोष होते हैं। उसका कारण है यहाँ की योजना में कुछ गलती का होना। जैसे साम्यवाद एक बड़ी सुन्दर भावना है जिसमें कहा गया है कि यदि हर कोई अपना-अपना काम निष्काम बुद्धि से करे, तो उसमें मोक्ष का लाभ है। परन्तु इसमें यह बात ध्यान में नहीं रखती कि हर कम बारी बन करें। यदि प्रजातन्त्र कायम हो परन्तु इसमें

आप ही तय करेंगे। हम तो मुक्त विहार करते रहेंगे। हम चाहते हैं कि आपका सिर्फ पैसा ही नहीं बल्कि बुद्धि भी इस काम में लगे।

व्यापारी संपत्तिदान की राशि भी निश्चित करें

सम्पत्तिदान में कितना देना है आप ही तय कीजिये। उससे उलटे आप बाबा से ही पूछते हैं कि बाबा आपका क्या कोटा है? बाबा का कोटा क्या पूछते हैं, उसका तो इतना बड़ा पेट है, उसको तो सब कुछ चाहिए। यह तो आपका काम है। आप हिसाब करके देखिये कि दरिद्रनारायण का काम कितने में होता है। पाँच रुपये में होता हो, तो पाँच रुपये दीजिये और पाँच लाख में होता हो तो पाँच लाख दीजिये। बाबा का कोटा आप क्यों पूरा करेंगे, वह तो बाबा ही पूरा करेगा। बाबा का कोई भरोसा नहीं है। यदि आज ही यहाँ से परमेश्वर उसे बुलाये तो वह उसी क्षण चला जायगा। वह ईश्वर से यह नहीं कहेगा कि मेरा काम बचा हुआ है भूदान के काम के लिए मुझे १५ दिन यहाँ रखो। हम तो उनसे कहेंगे कि तू चाहेगा तो मैं तेरे चरण के लिए तैयार हूँ और तू मुझे यहाँ रखेगा तो तेरे बच्चों की सेवा करूँगा। मेरे तो दोनों हाथ लड्डू हैं। इसलिए ध्यान में रखिये कि बाबा का कोटा कुछ भी नहीं है। उसका भार मत महसूस कीजिये। यह आपका काम है ऐसा समझकर आप दरिद्रनारायण के लिए भावना कीजिये और कम से कम कितना करना पड़ेगा, इस पर सोचिये। वैसे काम तो अनन्त अपार है। आगे आपको देश का कुछ-न-कुछ काम करना है। परन्तु आज दान देने का काम उठा लीजिये। आगे आरोग्य, शिक्षण का भी काम आपको उठाना होगा। ऊपर राजाजी की टी० बी० (क्षय-निवारक टीका) के खिलाफ लिखा गया है। परन्तु कौन पूछता है? यह क्यों होना चाहिए कि सरकार या डॉक्टर यही सब काम करें। लोगों को एलोपैथी (डॉक्टरी) होमियोपैथी प्राकृतिक चिकित्सा (नेचुरोपैथी) आदि जिस चिकित्सा विधान से उन्हें लाभ हो उसे चलायें। सरकार सिर्फ मददगार के तौर पर मदद दे। यदि सरकार ही सारा काम करे और कराये तो देश की उन्नति नहीं होगी। समाज के अन्दर काम सामाजिक आधार पर ही करना चाहिए। याने जो

और निरीक्षण करते हैं, उसीको मनोविज्ञान कहते हैं। परन्तु उन्होंने मन को जीतने का शास्त्र नहीं बनाया है। उसके परिणामस्वरूप उनका समाज-शास्त्र भी समाज को टुकड़ों में बाँटता है। उन्होंने परस्पर-विरोधी हितों का विचार पैदा किया है और उसे वे यहाँ तक ले जाते हैं कि वे कहते हैं कि सृष्टि के साथ विरोध होता है। हम जमीन खोदते हैं, यह भी एक विरोध है। हम पेड़ों के फल छीनकर खाते हैं तो पेड़ों के साथ हमारा विरोध होता है। इस तरह वे दुनिया में सर्वत्र विरोध ही देखते हैं। जिसे हम सेवा समझते हैं, जैसे पेड़ों की सेवा, मालियों की सेवा उसे भी वे संघर्ष कहते हैं। पेड़ों के, मालियों के, पृथ्वी के साथ संघर्ष इस तरह से उन्होंने संघर्ष की परिभाषा बनायी है। माता के स्तनों में दूध होता है वह बच्चे को प्यार से दूध पिलाती है, यह हमारा दर्शन है। परन्तु उनका दर्शन यह है कि बच्चे के मुँह का माता के स्तन के साथ संघर्ष होता है और उसमें से दूध निकलता है। बच्चा उससे लाभ उठाता है। यह तो मैंने जरा विनोद किया।

पश्चिम का विज्ञान और पूर्व का समाज-शास्त्र

विज्ञान उनके समाज-शास्त्र के खिलाफ खड़ा है और बावजूद इसके कि मनुष्य के हाथ में विज्ञान की बहुत शक्तियाँ आयी हैं फिर भी आज सब भय ही भय है। जितनी विज्ञान की शक्ति पहले कभी नहीं थी उतनी आज है। अब तो हम आकाश में ग्रहों को घुमा रहे हैं। इतनी सारी शक्तियाँ मनुष्य के हाथ में आयी हैं तो समाज में कितना सुख होना चाहिए। परन्तु आज उल्टी ही बात दिखायी देती है। इस समय दुनिया में जितना ज्ञान है उतना पहले कभी नहीं था और आज दुनिया में जितना भय है उतना पहले कभी नहीं था। ज्ञान के साथ भय नहीं निर्भयता आनी चाहिए। इसलिए हम पश्चिम का विज्ञान लेना चाहते हैं और पूर्व के समाजशास्त्र का जो आत्मदर्शन पर खड़ा है विज्ञान के साथ जोड़ना चाहते हैं। यह कार्य सर्वोदय कर रहा है।

सर्वोदय का केन्द्रित विचार यह है कि जनता की सेवा प्रतिनिधियों द्वारा नहीं होनी चाहिए। जनता को स्वयं यह काम करना चाहिए। पश्चिम की

पद्धति यह है कि जनता अपने प्रतिनिधि चुनती है, जिनकी सरकार बनती है, जो सेवा करती है। फिर लोग बिलकुल पराधीन बन जाते हैं। इस तरह हमारा सारा भला-बुरा करने का अधिकार चंद लोगों के हाथ में सौंपना अत्यन्त खतरनाक है। इसलिए हमने व्यापारियों से अपील की कि आप लोग जन-सेवा में लग जायँ। आज आप जो व्यापार करते हैं, वह भी सेवा का एक प्रकार है। लेकिन आज उसे स्वार्थ का रूप मिला है। अगर उस काम के साथ आप सेवा करेंगे, तो आपका व्यापार मजबूत बनेगा और हिन्दुस्तान में स्वतंत्र जन-शक्ति विकसित होगी। हिन्दुस्तान की परतंत्रता व्यापारियों ने प्राप्त की है। अब हिन्दुस्तान की आजादी को मजबूत बनाने का काम भी व्यापारियों को करना चाहिए।

बावनहल्ली (मैसूर राज्य)
१२-१-२

उप-शीर्षकों का अनुक्रम

VINOBA-PADAYATRA
IN
KERALA
S CANARA
COORG
MYSORE
NILGIRIS
COIMBATORE
MADURA
ARABIAN
SEA
INDIAN OCEAN